इतिहास-प्रवेश

[भारतीय इतिहास का दिग्दर्शन]

१८वी शता के अन्त मे आज तक

प्रकाशक

सरस्वती प्रकाशन मन्दिर

इलाहाबाद

१९६६

वस्तुकथा

"इतिहास-प्रवेश" के दस प्रकरण गत कार्त्तिक (नवम्बर १९३८ ई०) में प्रकाशित किये गये थे। आज १३ मास बाद यह अन्तिम प्रकरण भी प्रकाशित होने जा रहा है। इस प्रकरण के पहले पाँच अध्याय जून १९३८ ई० में ही लिखे जा चुके थे; अन्तिम चार अध्याय इधर डेढ़ बरस में तैयार हुए हैं। पहले अंश की प्रस्तावना में जो बातें कही जा चुकी हैं, उसके बाद अब मुझे विशेष कुछ कहना नहीं है। किसी भी दृश्य में जिस प्रकार नज़दीक के अंश क्रमशः बड़े दिखायी देते हैं, उसी प्रकार इतिहास के इस दिग्दर्शन में भी निकटतम अतीत की घटनाओं का वर्णन क्रमशः अधिक विस्तृत होता गया है।

पुस्तक के दस प्रकरणों पर गत वर्ष अनेक विद्वानों ने अपने मत प्रकट किये हैं। विशेषकर डाक्टर हीरानन्द शास्त्री, प्रो० नीलकण्ठ शास्त्री, राय कृष्णदास तथा डाक्टर विनयकुमार सरकार जैसे विज्ञ पारखियों ने जो कुछ कहा है, उससे मैं अपने श्रम को सफल हुआ अनुभव करता हूँ। तो भी मैं यह जानता हूँ कि भारतीय इतिहास का यह दिग्दर्शन अभी दिग्दर्शन रूप में भी कई अंशों में अधूरा है और इसमें अनेक त्रुटियाँ भी हैं। अगले संस्करणों में उन दोषों को क्रमशः दूर करने का प्रयत्न करूँगा। जो पाठक इस पुस्तक के किन्हीं अभावों या त्रुटियों की ओर ध्यान दिलायेंगे, उनका कृतज्ञ हूँगा।

पृष्ठ ४४८-४९ के बीच का नक्शा सर यदुनाथ सरकार के 'फ़ाल आव दि मोग़ल एम्पायर' से लिया गया था। छापे की ग़लती से वह बात छपने से रह गयी थी।

पाठशालाओं के अध्यापकों से यह निवेदन है कि इतिहास-शिक्षा की सार्थकता विद्यार्थियों के घटनाओं को रट लेने में नहीं, प्रत्युत राष्ट्र के जीवन के क्रमविकास को समझने में है। उस विकास की छाप यदि उनके मन में रह गयी तो घटनाओं का तत्त्व उन्होंने समझ लिया। अनेक घटनाओं और उनकी तिथियों का उल्लेख केवल उसी विकास-क्रम को स्पष्ट करने के लिए किया गया है, इस आशा से हरगिज़ नहीं कि विद्यार्थी उन्हें याद करें।

इस वक्तव्य को समाप्त करने से पहले मैं अपने मित्र, इलाहाबाद युनिवर्सिटी के उपपुस्तकाध्यक्ष श्री सरयूप्रसाद तथा बम्बई युनिवर्सिटी के पुस्तकाध्यक्ष डाक्टर जोशी को अनेकानेक धन्यवाद दे दूँ। इन दोनों सज्जनों ने मुझे अपने पुस्तकालयों में जो सुविधाएँ दीं, उनके बिना यह कार्य पूरा न हो पाता।

काशी, २० मार्गशीर्ष १९९६ वि०

(९-१२-१९३९ ई०)

पिछले बारह बरस के आँधी-पानी में
जिनके स्नेह का सहारा बना रहने से
इस कृति को पूरा कर पाया हूँ,

उन्हीं

श्रद्धेय

बाबू राजेन्द्रप्रसाद

के कर-कमलों में

विषय-सूची

ग्यारहवाँ प्रकरण—अँगरेज़ी राज्य

(१७८६—)

अध्याय १

भारत पर ब्रिटिश आधिपत्य की स्थापना [सन् १७६८–१८२७ ई०]

१. ज़मानशाह और नैपोलियन का आतंक,— २. हैदराबाद और मैसूर में ब्रिटिश प्रभुता की स्थापना,— ३. ज़मानशाह की चढ़ाई,— ४. तामिलनाड और रुहेलखंड पर ब्रिटिश दख़ल,— ५. गायकवाड़ और पेशवा का ब्रिटिश रक्षा में आना,— ६. दूसरा मराठा युद्ध (१८०३ ई०),— ७. होलकर से युद्ध (१८०४-५ ई०),— ८. मराठा राज्यों की अवनति,— ९. उत्तर-पच्छिमी सन्धियाँ (१) ईरान, (२) अफ़गानिस्तान, (३) सिन्ध,— १०. रणजीत-सिंह का उदय और उसकी रोक-थाम,— ११. भारतीय समुद्र पर एकाधिपत्य,— १२. भारत में ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीति,— १३. नेपाल-युद्ध (१८१४-१६ ई०),— १४. पेंढारी तथा तीसरा मराठा युद्ध (१८१७-१९ ई०),— १५. पहला बरमा युद्ध (१८२४-२६),— १६. रणजीतसिंह का सेना-संगठन और राज्य-वृद्धि (१८०९-२७ ई०)। ४६७-५२५

अध्याय २

अँगरेज़ी शासन का संगठन [१७९९–१८३६ ई०]

१. मुनरो, एल्फिन्स्टन, मालकम, मेटकाफ़ और बेण्टिंक का कार्य,— २. मद्रास और मुम्बई का रैयतवारी बन्दोबस्त,— ३. ग्राम्य

पंचायतें और अँगरेज़ी शासन-योजना,— ४. उत्तर भारत का महालवारी बन्दोबस्त,— ५. नमक और अफ़ीम का एकाधिकार,— ६. शिक्षा, क़ानून और अन्य सुधार,— ७. बेण्टिंक के समय की राजनीतिक घटनाएँ। ५२६-५३५

अध्याय ३

उत्तर-पच्छिमी सीमान्त की ओर बढ़ना [१८३०–१८४६ ई०]

१. मध्य एशिया में रूसी और अँगरेज़ी अग्रदूत,— २. सिन्धु-नौचालन-योजना,— ३. बर्न्स की मध्य एशिया-यात्रा,— ४. सिक्ख-राज्य का दक्खिन और पच्छिम से घेरा जाना,—(अ) शाह शुजा की अफ़ग़ानिस्तान पर दूसरी चढ़ाई (१८३३-३५ ई०),— (इ) सिन्ध के लिए स्पर्द्धा (१८३५-३७ ई०),— (उ) सिक्ख-अफ़ग़ान युद्ध (१८३५-३७ ई०),— (ऋ) काबुल में अँगरेज़ 'वाणिज्य-दूत,'— (लृ) सिक्खों का लदाख जीतना,— ५. त्रिपक्ष सन्धि,— ६. अफ़-ग़ानिस्तान पर चढ़ाई,— ७. कुमार नौनिहालसिंह,— ८. सिक्ख सेना की शक्ति का उदय,— ९. अफ़ग़ानों का विद्रोह,— १०. चीन से युद्ध,— ११. अफ़ग़ान युद्ध का अन्त,— १२. सिन्ध पर दख़ल,— १३. ग्वालियर का अन्तिम पराभव,— १४. पंजाब में सेना का राज्य और उसके ख़िलाफ़ तैयारी,— १५. सतलज की लड़ाइयाँ,— १६. कोट की हत्याएँ। ५३६-५५९

अध्याय ४

खंडहरों की सफ़ाई

१. खंडहरों की सफ़ाई,— २. दूसरा सिक्ख युद्ध (१८४८-४९ ई०),— ३. दूसरा बरमा युद्ध,— ४. ज़ब्तियाँ और दख़ल। ५६०-५६४

अध्याय ५

स्वाधीनता का विफल युद्ध

१. स्वाधीनता-युद्ध का आयोजन,— २. मंगल पाँडे और मेरठ का बलवा,— ३. दबाने की पहली चेष्टाएँ,— ४. विप्लव का चौमुखा फूटना (१) अन्तर्वेद और अवध (२) बिहार बंगाल (३) विन्ध्य-मेखला (४) पंजाब और नेपाल (५) दक्खिन,— ५. इलाहाबाद और कानपुर का पतन,— ६. दिल्ली का पतन,— ७. लखनऊ और झाँसी का पतन,— ८. अवध, रुहेलखंड और विन्ध्य-मेखला में पिछली कशमकश। ५६५-५८४

अध्याय ६

कम्पनी-राज्य में भारत की आर्थिक और सामाजिक दशा

१. कम्पनी के शासन में भारतीय किसानों की हालत,— २. शिल्प का ह्रास,— ३. खिराज और राष्ट्रीय ऋण,— ४. गोरे प्लाण्टर तथा भारतीय कुली,— ५. नमक का एकाधिकार,— ६. नहरें और रेल-पथ,— ७. भारत-विषयक अध्ययन का उदय,— ८. शिक्षा और सामाजिक दशा,— ९. ब्रिटिश सरकार का कम्पनी से भारत को खरीदना। ५८५-५९४

अध्याय ७

महारानी का राज (१८५८–१८७६ ई०)

१. ग़दर के कारण शासन-नीति में परिवर्तन,— २. वहाबी और कूका विद्रोह,— ३. कृषक-अधिकार-क़ानून तथा प्रान्तीय अर्थनीति,— ४. सीमा पार की घटनाएँ,— ५. भारत ब्रिटिश पूँजीशाही के शिकंजे में। ५९५-६०३

अध्याय ८

सम्राज्ञी का राज (१८७६-१९०१ ई०)

१. युरोप की विश्वप्रभुता,— २. दूसरा अफ़ग़ान युद्ध,— ३ मिस्र पर ब्रिटिश नियन्त्रण,— ४. भारतीय जागरण का आरम्भ,— ५. स्थानीय स्वशासन, कृषक अधिकार-क़ानून तथा इल्बर्ट बिल,— ६. रूस से सीमा-निर्णय,— ७. उत्तरी बरमा का जीता जाना,— ८. सीमान्तों पर अग्रसर नीति,— ९. भारत में ब्रिटिश अर्थनीति १८७६-१९०१ ई०,— १०. जनता में असन्तोष,— ११. भारत द्वारा अँगरेज़ी साम्राज्य-साधना। ६०४-६२२

अध्याय ९

हमारा ज़माना (१९०१-)—

१. फ़ारिस-खाड़ी और तिब्बत में हस्तक्षेप,— २. कर्ज़न के अन्य कार्य, बंग-भंग,— ३. स्वदेशी आन्दोलन,— ४, आंग्ल-रूसी समझौता,— ५. मौर्ली-मिण्टो सुधार,— ६. बंग-भंग का रद्द होना,— ७. तिब्बत पर आधिपत्य,— ८. विश्वव्यापी युद्ध,— ९. विप्लव की चेष्टाएँ,— १०. भारत में युद्धकालीन परिवर्तन,— ११. मौण्टेगू-चेम्सफोर्ड सुधार और राउलट कानून,— १२. अफ़ग़ानिस्तान का स्वतन्त्र होना,— १३. असहयोग और ख़िलाफ़त आन्दोलन,— १४. असहयोग और क्रान्ति आन्दोलनों की प्रतिक्रिया,— १५. पहला सत्याग्रह युद्ध, (अ) पहली मुहिम, (इ) गान्धी-इर्विन समझौता, (उ) दूसरी मुहिम,— १६. भारतीय संघ के विभिन्न आदर्शों का संघर्ष,—१७. सिंहावलोकन। ६२३-६६५

शिव परिवार [रविवर्मा कृत

ग्यारहवाँ प्रकरण

अँगरेज़ी राज

(१७६८—)

अध्याय १

भारत पर ब्रिटिश आधिपत्य की स्थापना

(सन् १७६८—१८२७ ई०)

§१. **ज़मानशाह और नैपोलियन का आतंक**—तैमूरशाह अब्दाली की मृत्यु पर उसका बेटा ज़मानशाह काबुल की गद्दी पर बैठा (१७६३ ई०)। रुहेलखंड के एक सरदार और अवध के नवाब आस़फुद्दौला ने उससे प्रार्थना की कि भारत पर चढ़ाई कर उन्हें अँगरेज़ों से छुटकारा दिलावे। महाराजा शिन्दे और जमामशाह के बीच भी गुप्त रूप से दूतों का विनिमय हुआ। ज़मानशाह की चढ़ाई की अफ़वाह से उत्तर भारत में हलचल मच गयी। सर जान शोर ने अवध राज्य का कुछ हिस्सा अपने सीधे शासन में ले कर अनूपशहर में ब्रिटिश छावनी डाल दी (१७६८ ई०)।

एक और शत्रु भी अब अँगरेज़ों के सिर पर मँडरा रहा था। हम देख चुके हैं कि भारत में फ़्रान्सीसियों की विफलता का कारण था उनके अपने देश का शासन सुशृंखल न होना। सन् १७६३ ई० में फ्रान्स में राज्यक्रान्ति हुई। अपने स्वेच्छाचारी राजा को फाँसी दे कर फ़्रान्स वालों ने मनुष्य-मात्र की स्वाधीनता और समानता की घोषणा की। उस समय युरोप के कई राज्यों ने मिल कर फ़्रान्स के उस शिशु प्रजातन्त्र को कुचलना चाहा। अकेले फ़्रान्स ने उन सब को हरा दिया। फ़्रान्सीसी राष्ट्र समिति की तरफ़ से नैपोलियन बोनापार्त नामक युवक सेनापति ने मिस्र पर चढ़ाई की (मई १७६८ ई०)। मिस्र तब तक कुस्तुन्तुनिया के तुर्क साम्राज्य में था। नैपोलियन ने उसकी

सेना को आसानी से हरा दिया। मिस्र से फ़्रान्सीसी भारतीय समुद्र की तरफ़ बढ़ सकते थे। नेल्सन नामक अँगरेज़ नाविक ने नील नदी के मुहाने में फ़्रान्सीसी बेड़े को जला दिया। तो भी जब तक फ़्रान्सीसी सेना मिस्र में बनी रही, तब तक अँगरेज़ों को चैन न था।

§२. **हैदराबाद और मैसूर में ब्रिटिश प्रभुता की स्थापना**—जिन भारतीय राज्यों ने फ़्रान्सीसी अफ़सर रख कर नये ढंग की सेना सधा ली थी, उनकी तरफ़ से भी अँगरेज़ सतर्क थे। शिन्दे और टीपू उनमें प्रमुख थे; होल्कर और निज़ाम ने भी उनका अनुसरण किया था। इन सेनाओं से अँगरेज़ों को कोई डर न था। प्रत्युत जब महादजी शिन्दे ने पहले पहल युरोपियन ढंग की सेना तैयार करनी शुरू की, तब वारन हेस्टिंग्स ने कहा था कि यही मराठों के पतन का कारण होगी। कारण स्पष्ट था। इन सेनाओं को नये ढंग की क़वायद तो सिखायी गयी थी, पर इनका संगठन पुराना सामन्त-प्रणाली वाला ही था। सैनिकों की भरती सेनापतियों के हाथों में ही सौंप दी जाती और उनके ख़र्च के लिए उन्हें बड़ी-बड़ी जागीरें दे दी जाती थीं। दूसरे, इस नयी युद्ध-कला को मराठों ने इस प्रकार हृदयंगत नहीं किया कि वे स्वयम् अपनी सेना का संचालन कर सकें। इस काम में वे युरोपियन अफ़सरों पर ही निर्भर रहते, जो उनकी सामन्त-शासन-प्रणाली के अनुसार अब राज्य के बड़े-बड़े इलाक़ों के शासक भी थे। ये विदेशी सामन्त यदि कभी विश्वासघात करें तो मराठों का सेना-यन्त्र और शासन-यन्त्र बिलकुल बेकार हो सकता था। इसी से सर टामस मुनरो ने मराठा सेनाओं के विषय में कहा था कि "उन्हें एक-सी वर्दी पहना कर क़वायद क्या करायी जाती है, मानो सजा कर कुर्बानी के लिए ले जाया जाता है!" तो भी जब नैपोलियन मिस्र में था, भारत में फ़्रान्सीसी अफ़सरों के अधीन बड़ी-बड़ी सेनाओं का होना ख़तरनाक था।

इस समय लार्ड वेल्ज़ली ब्रिटिश भारत का मुख्य शासक बन कर आया। भारत में फ़्रान्सीसी सेनाओं को तोड़ देना उसका मुख्य ध्येय था। उसका पहला लक्ष्य निज़ाम था। हैदराबाद में किर्कपैट्रिक और मालकम नामक

अँगरेज़ दूतों ने बड़ी दक्षता से निज़ाम के वज़ीर से रेमों की सेना की छोटी-छोटी टुकड़ियाँ विसर्जित करवा दीं। उधर मद्रास से ब्रिटिश सेना चुपचाप हैदराबाद की सीमा पर आ गयी। तब निज़ाम को एकाएक हुक्म दिया गया कि वह बची-खुची फ़ान्सीसी सेना को तोड़ दे और उसके बदले अवध के नवाब की तरह ब्रिटिश "आश्रित" सेना को अपने राज्य में अपने खर्च पर रख ले। निज़ाम और उसका वज़ीर यह सुन कर हक्के-बक्के रह गये, पर उन्हें ब्रिटिश सेना रखना स्वीकार करना पड़ा (१-६-१७६८ ई०)।

निज़ाम के काबू में आते ही लार्ड वेल्ज़ली ने टीपू के ख़िलाफ़ युद्ध-घोषणा कर दी। उसके भाई आर्थर वेल्ज़ली और जनरल हैरिस ने पूरबी घाटों से तथा मुम्बई की सेना ने पच्छिमी घाटों से मैसूर में प्रवेश किया। मलवल्ली पर हैरिस ने टीपू को हराया और फिर उसे श्रीरंगपट्टम् में घेर लिया। आगे क्या हुआ, सो कहा जा चुका है।

मैसूर-युद्ध के समय वेल्ज़ली को बराबर डर बना हुआ था कि कहीं शिन्दे टीपू की मदद न करे। महादजी शिन्दे के पूना आने के समय से ही अँगरेज़ सशंक थे, और शिन्दे का पूना में रहना ही उन्हें अखरता था। कोलब्रुक नामक दूत को नागपुर भेजा गया कि वह बराड के राजा को टीपू और शिन्दे के खिलाफ़ भड़का कर निज़ाम और अँगरेज़ों के गुट्ट में मिला दे। तुकोजी होल्कर का तीसरा बेटा जसवन्तराव तब नागपुर में शरणार्थी था। उसे उभाड़ने में कोलब्रुक कामयाब हुआ।

§३. **ज़मानशाह की चढ़ाई**—ज़मानशाह सन् १७६६ ई० के अन्त में लाहौर तक आया था; किन्तु पीछे अपने भाई महमूद की करतूतों के कारण उसे शीघ्र लौटना पड़ा था। उसकी रोक-थाम के लिए वेल्ज़ली ने अब ईरान को अफ़ग़ानिस्तान के विरुद्ध उभाड़ने की नीति पकड़ी। मुम्बई से अँगरेज़ों का एक कारिन्दा बुशहर भेजा गया। उसने यह कह कर शाह को उकसाया कि सुन्नी अफ़ग़ानों ने लाहौर में शियों पर बड़े ज़ुल्म किये हैं। सन् १७६८ के अन्त में जमान फिर लाहौर आया। इस बार महमूद को ईरान से मदद मिल गयी। जिस चड़तसिंह ने गुजरांवाला में पहले-पहल

अोबेदखाँ का मुक़ाबला किया था, उसके पोते रणजीतसिंह को लाहौर का राजा नियुक्त कर ज़मानशाह लौट गया। इसके बाद मालकम को ईरान भेजा गया। उसे यह आदेश था कि ज़मानशाह की शक्ति का ठीक पता लगावे और उसके निर्वासित भाइयों से मेल-जोल पैदा करे।

भारतवर्ष में जो लोग ज़मानशाह की चढ़ाई से आशाएँ लगाये या घबड़ाये हुए थे, उनमें से कोई भी सिक्खों की शक्ति को पहचान न पाया था। यदि ज़मान को पीछे की चिन्ता न भी होती तो भी अब वह पंजाब को लाँघ कर ठेठ हिन्दुस्तान तक न पहुँच सकता था। उसके लौट जाने पर वेल्ज़ली का ध्यान सिक्खों की तरफ़ गया और शिन्दे के दरबार के अँगरेज़ एजेन्ट ने एक गुप्त दूत सिक्ख सरदारों के पास भेजा।

उधर नैपोलियन भी सन् १७९९ ई० तक मिस्र से फ्रान्स पहुँच कर फ्रान्स का अधिनायक बन गया था। सन् १८०० में एक भारतीय फ़ौज मिस्र भेजी गयी। लाल सागर से उतर कर यह भूमध्य सागर तक पहुँची, पर उससे पहले फ्रान्सीसी सेना आत्म-समर्पण कर लौट चुकी थी।

§४. **तामिलनाड और रुहेलखंड पर ब्रिटिश दख़ल**—यों अढ़ाई साल के भीतर लार्ड वेल्ज़ली ने अफ़ग़ानों और फ्रान्सीसियों के आतंक को दूर कर अँगरेज़ों को भारत की प्रमुख शक्ति बना दिया। अब उसने जीर्ण राज्यों को मिटा कर अँगरेज़ी इलाक़े को बढ़ाना शुरू किया। सन् १७९९ ई० में तांजोर के राजा को पेन्शन दे कर उसका इलाक़ा ले लिया। सूरत का क़िला एक "नवाब" के हाथ में था जो अँगरेज़ों का रक्षित था। उसे भी अब पेन्शन देकर अलग किया गया। निज़ाम ने दो मैसूर-युद्धों में तुंगभद्रा के दक्खिन के जो ज़िले पाये थे, वे उसने ब्रिटिश फ़ौज के ख़र्चे की रक़म के बदले में दे दिये। तामिलनाड का बूढ़ा नवाब मुहम्मदअली सन् १७९५ में मर चुका था। सन् १८०१ में उसके राज्य पर अँगरेज़ों ने दख़ल कर लिया। मुहम्मद अली के गोरे उत्तमर्णों ने तब २० करोड़ रुपये के नये कर्ज़ों का दावा पेश किया। अब इन दावों की जाँच की गयी तो १ करोड़ ३४ लाख के सिवाय सब फ़र्ज़ी निकले। इसी साल लार्ड वेल्ज़ली ने अवध

के नवाब की ब्रिटिश फ़ौज की 'सहायता" की रक़म बढ़ा दी और उससे रुहेलखंड और फ़र्रुख़ाबाद के इलाक़े ले कर उनका शासन अपने भाई हैनरी वेल्ज़ली को सौंप दिया।

§५. गायकवाड़ और पेशवा का ब्रिटिश रक्षा में आना—वेल्ज़ली ने मराठा संघ में अपनी नीति का जो बीज बोया था, वह अब फल लाने लगा। सन् १८०० में गोविन्दराव गायकवाड़ के मरने पर उसका बेटा आनन्दराव बड़ोदा की गद्दी पर बैठा। वह कमज़ोर दिमाग़ का था। अपने राज्य में अपनी रक्षा के लिए उसने ब्रिटिश सेना बुला कर रख ली (मार्च १८०२ ई०)।

पेशवा, शिन्दे और भोसले के दरबारों के ब्रिटिश दूत भी उन्हें एक दूसरे का डर दिखा कर ब्रिटिश सेना रख लेने को बराबर उकसा रहे थे। अन्त में पेशवा अंगरेज़ों की "आश्रित" सेना रखने पर राज़ी हो गया, लेकिन इस शर्त पर कि वह कम्पनी के ही इलाक़े में रहेगी और पेशवा जब चाहे उसे बुला सकेगा। "वह आसन्न विनाश को देखे बिना इससे अधिक मानने वाला न था"। वह विनाश भी शीघ्र उपस्थित हो गया! तुकोजी होल्कर के बेटे विठोजी होल्कर ने कोल्हापुर में शरण ले कर उपद्रव किया। वह पकड़ा गया और पेशवा के हुक्म से क्रूरतापूर्वक मारा गया। जसवन्तराव होल्कर ने तब पूना पर चढ़ाई की। दौलतराव शिन्दे उत्तर भारत जा चुका था। होल्कर ने उसकी बची-खुची फ़ौज और पेशवा की फ़ौज को हरा दिया। पेशवा तब पूना छोड़ कर भागा—शिन्दे की शरण में नहीं, अँगरेज़ों की शरण में। बसई पहुँच कर उसने अपने इलाक़े में "आश्रित" सेना रखने की सन्धि पर हस्ताक्षर कर दिये (३१-१२-१८०२ ई०)।

अपनी पराधीनता का वह पट्टा लिख देने के बाद पेशवा पछताने लगा, और फिर अपने सरदारों से सुलह की सोचने लगा। उसके, होल्कर के और शिन्दे के दूत बराड के बूढ़े राजा के पास इस अभिप्राय से पहुँचे कि वह सब के बीच सफ़िया करा दे। भोसले, शिन्दे और होल्कर का मिलना तब हुआ। इससे पहले कि वे मिल पायँ, आर्थर वेल्ज़ली सेना के साथ मैसूर से बढ़ा।

होल्कर पूना से भाग गया और २० एप्रिल को वेल्ज़ली वहाँ पहुँच गया। दूसरे दिन उसने लिखा, "मराठा संघ के सरदारों ने ''हमें यहाँ आराम से आने और छावनी डालने दी है। अब हमारी सेना यहाँ ऐसी जम कर बैठी है कि कोई हमें उखाड़ नहीं सकता। उधर, अभी वे आपस में सुलह नहीं कर सके, हम पर हमला करने की सम्मिलित योजना की बात ही दूर है!"

§६. **दूसरा मराठा युद्ध** (१८०३ ई०)—होल्कर से पिट कर बाजीराव अँगरेज़ों की शरण में गया था, इसलिए उसने चाहा कि अँगरेज़ अब होल्कर को सज़ा दें। उसने शिन्दे और भोंसले को परामर्श के लिए पूना आने को कहा। लेकिन अँगरेज़ों का ध्येय दूसरा था, और होल्कर उनके लिए बड़ा उपयोगी साबित हुआ था। उसे उन्होंने कुछ न कहा और मीठी-मीठी बातों से अगले युद्ध से अलग रक्खा। शिन्दे और भोंसले को उन्होंने हुक्म दिया कि पेशवा के इलाक़े में न घुसें। वे दोनों तब अजन्ता घाट पर रुक गये। किन्तु अँगरेज़ों को उनसे युद्ध करना ही था; उनका विशेष लक्ष्य था शिन्दे का तोपखाना और युद्ध का सामान छीन लेना या नष्ट कर देना, उसकी पैदल सेनाओं को तोड़ देना, और दिल्ली-आगरा की पेरों की उस "फ्रान्सीसी रियासत" पर दख़ल कर लेना जो जमना से सतलज की तरफ़ बढ़ रही थी और सिन्ध के रास्ते समुद्र तक पहुँच सकती थी। मराठा राजाओं से कहा गया कि वे अजन्ता घाट से भी पीछे हट जाँय और एक दूसरे से अलग हो जाँय। उनके इनकार करने पर सब तरफ़ से उनपर चढ़ाई की गयी। आर्थर वेल्ज़ली और स्टीवन्सन पूना और हैदराबाद से बराड की ओर बढ़े। लार्ड लेक ने कानपुर से कोयल (अलीगढ़) पर चढ़ाई की। एक सेना गंजाम से उड़ीसा में घुसी, जिसकी मदद को एक टुकड़ी कलकत्ते से समुद्र के रास्ते भी आयी। एक और सेना गायकवाड के इलाक़े से शिन्दे के गुजराती किलों और इलाक़ों पर दख़ल करने चली। एक छठी सेना मैसूर की सीमा पर तैनात रक्खी गयी जिससे पेशवा और दक्खिनी महाराष्ट्र के सरदार विद्रोह न कर पाँय। लार्ड लेक के दूत शिन्दे के जागीरदारों, राजपूत राजाओं, गूजर और सिक्ख सरदारों तथा युरोपियन अफ़सरों को फोड़ने का काम भी कर रहे थे।

अहमदनगर का किला दक्खिन में शिन्दे का बल था। उसे ले कर वेल्ज़ली औरंगाबाद की ओर बढ़ा। उधर लेक ने अलीगढ़ के पास कोयल का क़िला ले लिया (२६-८-१८०३ ई०); शिन्दे के कई युरोपियन अफ़सर तब अँगरेज़ों से जा मिले। उसी दिन गुजरात में भरुच का क़िला सर किया गया। एक हफ्ते बाद शिन्दे के अंगरेज़ नौकर लूकन के विश्वासघात से अलीगढ़ भी ले लिया गया। तब पेरों ने शिन्दे की सेवा छोड़ दी। अँगरेज़ों के इलाके पर चढ़ाई करना तो दूर रहा, वह इन दोनों युद्धों में स्वयम् उपस्थित भी न रहा था।

लार्ड लेक

दिल्ली में अंकित समकालीन चित्र

[दिल्ली म्यूज़ि०, भा० पु० वि०]

अलीगढ़ के बाद लेक ने दिल्ली पर चढ़ाई की, और जमना के इस पार एक फ्रान्सीसी अफ़सर को हरा कर क़िला ले लिया। वहाँ मुग़ल सम्राट् शाह आलम को रक्षा में ले कर और आक्टरलोनी को रेज़िडेण्ट नियुक्त कर वह आगरा को रवाना हुआ।

उधर वेल्ज़ली के मुक़ाबले को एक पैदल सेना और तोपखाना रख कर शिन्दे और भोंसले रिसाले के साथ हैदराबाद या पूना के इलाक़ों पर झपट्टा मारने की घात में लगे थे। बराड की सीमा पर असई गाँव में दोनों सेनाओं का सामना हुआ (२३-९-१८०३ ई०)। राजा लोग वहाँ नहीं थे। मराठा सेना के अफ़सरों और सरदारों ने धोखा दिया। इस हार से मराठा पदाति-सेना और तोपखाने की रीढ़ टूट गयी।

अक्तूबर में आगरे के क़िले ने समर्पण किया। उधर दो महीने में उड़ीसा का तट-प्रदेश—पुरी, कटक आदि—जीत लिया गया था। उड़िया जनता तमाशबीन बनी रही; भोंसले की सेना ने वहाँ ढीला सा मुक़ाबला किया। पेशवा ने एक नयी सन्धि द्वारा बुन्देलखंड का प्रदेश अँगरेज़ों को दे दिया था, पर वहाँ के शासक शमशेरबहादुर और कुछ सरदारों से अँगरेज़ों को लड़ना पड़ा। अक्तूबर तक कर्नल पावेल ने बुन्देलखंड ले लिया।

असई की हार के बाद शिन्दे ने पैदल सेना उत्तर भारत भेज दी, और खुद दोनों राजा फिर झपट्टा मारने की कोशिश में लगे रहे। असई और दिल्ली की बची-खुची नेतृहीन सेना तोपख़ाने के साथ निरुद्देश घूमती थी, जब लेक ने उसका पीछा किया। मथुरा और अलवर के बीच लासवाड़ी पर १ नवम्बर को युद्ध हुआ जिसमें शिन्दे के सैनिक "दैत्यों की तरह, या सच कहें तो वीरों की तरह लड़े। यदि फ्रान्सीसी अफ़सर उनका संचालन करते होते तो न जाने क्या परिणाम होता!" अलीगढ़, दिल्ली, असई और लासवाड़ी की हारों से शिन्दे की पैदल सेना और तोपख़ाना कुचले गये।

उधर असई के बाद स्टीवन्सन ने बुरहानपुर और असीरगढ़ का घेरा डाला और वेल्ज़ली राजाओं की रोक-थाम करता रहा। असीरगढ़ में शिन्दे के १६ युरोपियन अफ़सर क़िला सौंप कर स्टीवन्सन से आ मिले। वेल्ज़ली को मराठा रिसाले का पीछा करना असम्भव और ख़तरनाक दीखा। इसलिए उसने शिन्दे से युद्ध-विराम की सन्धि कर ली, और उसे सन्धि के धोखे में रख कर इलिचपुर के पास उसपर एकाएक हमला कर दिया। आरगाँव की इस लड़ाई में शिन्दे की फिर हार हुई (२९-११-१८०३ ई०)। तब अँगरेज़ों ने

गवीलगढ़ ले लिया, जिसके बाद राजाओं ने अलग-अलग सन्धि की (दिसम्बर १८०३ ई०)। अँगरेज़ों ने जो प्रदेश जीत लिये थे, वे उन्हीं के पास रहे। भोंसले ने बराड भी निज़ाम को सौंपा। दोनों राजाओं ने स्वीकार किया कि अँगरेज़ों के सिवाय और किसी युरोपियन को अपनी सेवा में न रक्खेंगे। फ़रवरी १८०४ ई० में शिन्दे ने होल्कर के डर से अँगरेज़ों से "आश्रित" सन्धि कर ली। उसके बाद लार्ड वेल्ज़ली ने उससे गवालियर और गोहद के ज़िले भी ले लिये।

§ ७. होलकर से युद्ध (१८०४-५ ई०)—जसवन्तराव होल्कर को बड़ी आशाएँ दी गयीं थीं। उनके आधार पर अब उसने बुन्देलखंड, दोआब और हरियाना के अनेक ज़िले, जो पहले होल्कर वंश के रह चुके थे, लार्ड लेक से माँगे। तब न केवल उसकी आशाओं पर पानी फिरा, प्रत्युत उसने देखा कि उसकी सेना के अँगरेज़ अफ़सर कम्पनी से षड्यन्त्र कर रहे हैं। इसपर उसने अपने तीन अँगरेज़ नौकरों को पकड़ कर फाँसी दे दी। एप्रिल १८०४ ई० में लेक ने हिन्दुस्तान से और कर्नल मरे ने गुजरात से होल्कर के इलाक़ों पर चढ़ाई की। पीछे पूना से कर्नल वालेस भी उसके ख़िलाफ़ बढ़ा।

लेक ने मौन्सन को जयपुर भेज कर वहाँ के राजा को अपनी तरफ़ मिलाया। होल्कर वहीं था; वह पीछे हट गया। टोंक-रामपुरा का गढ़ ले कर मौन्सन उसके पीछे-पीछे बढ़ा। उधर से मरे गुजरात से इन्दौर की तरफ़ बढ़ रहा था। शिन्दे भी अब अँगरेज़ों के साथ था; उसके सेनापति बापू शिन्दे और जीन फ़िलोस ने होल्कर के सिहोर और भेलसा आदि शहर छीन लिये। मौन्सन और मरे शिन्दे की इस सेना से मालवा में मिलने आ रहे थे।

मौन्सन कोटा के दक्खिन मुकुन्दरा का दर्रा पार कर होल्कर के ख़ास इलाक़े में घुसा। मरे भी मालवा की सीमा पर आ गया था। तब होल्कर युद्ध के लिए निकला। उसके हिलते ही मौन्सन और मरे दोनों उल्टे पाँव भागे। होल्कर ने मौन्सन का पीछा किया। अपनी तोपों को कीलें ठोक कर फेंकते, गोला-बारूद को नष्ट करते, स्त्रियों, बच्चों और घायलों को उनकी क़िस्मत पर छोड़ते और अनेक जगह पिटते हुए जुलाई के अन्त में वह रामपुरा वापिस पहुँचा, जहाँ उसे लेक की भेजी कुमुक मिली। इधर बापू शिन्दे कोटा में होल्कर

से मिल गया। होल्कर को मौन्सन से उलझा देख मरे फिर लौटा और उसने इन्दौर पर बगैर किसी लड़ाई के दखल कर लिया।

मौन्सन को होल्कर ने रामपुरा से खदेड़ते हुए आगरा पहुँचा दिया। अन्तर्वेद में इस समय अँगरेज़ी राज के खिलाफ़ बड़ा असन्तोष फैला था। असन्तुष्ट लोग भरतपुर के राजा रणजीतसिंह के पास पहुँचने लगे। होल्कर के दूत भी उसके पास पहुँचे। पिछले साल के युद्ध में लेक ने उस राजा को मराठों से "स्वतन्त्र" कर उससे सन्धि की थी, अब वह होल्कर के पक्ष में हो गया। होल्कर ने मथुरा पर चढ़ाई की; अँगरेज़ी सेना वहाँ से हट गयी। दौलतराव शिन्दे तब बुरहानपुर में था। वह भी युद्ध-क्षेत्र की तरफ़ बढ़ा।

इस दशा में लेक कानपुर से आगरा आया। होल्कर ने मथुरा छोड़ दिल्ली को जा घेरा। दिल्ली को वह आक्टरलोनी से ले न सका और दोआब में घुसा। लेक ने उसका पीछा किया। हार कर होल्कर दीग की ओर भागा और अन्त में भरतपुर में शरण ली।

तब लेक ने भरतपुर को आ घेरा (३-१-१८०५ ई०)। तीन बार उसने क़िले पर हल्ला बोला, परन्तु तीनों बार विफल रहा। जसवन्तराव ने जिस बहादुरी से अँगरेज़ों का मुक़ाबला किया उसे देख दूसरे मराठों के भी हौसले बढ़े और वे सोचने लगे कि व्यर्थ में ही हिम्मत हार कर उन्होंने अपना राज खो दिया। उन्होंने देखा, अब उसे वापिस लेने का मौक़ा है। इस विचार से शिन्दे भी होल्कर से मिलने को भरतपुर की ओर बढ़ा। अँगरेज़ों ने देखा, मराठों और जाटों का मेल होने से पहले ही भरतपुर से सन्धि कर लेनी चाहिए। इसलिए मार्च के अन्त में होल्कर को क़िले में से जाने दे कर उन्होंने रणजीतसिंह से सन्धि कर ली।

शिन्दे चम्बल तक पहुँचा था कि भरतपुर का घेरा उठ गया। सबलगढ़ पर होल्कर उससे मिला। वहाँ पेशवा और भोंसले के दूत भी आये थे। शिन्दे का दोग़ला अँगरेज सेनापति फ़िलोस बराबर ऐसी ढील करता रहा था जिससे वह समय पर भरतपुर न पहुँच सके। होल्कर के कहने से अब उसे क़ैद किया गया। लेक ने दोनों राजाओं पर हमला करना चाहा, पर वे अजमेर की तरफ़ हट गये। गर्मी में उनका पीछा करना सम्भव न था।

इस दशा में लार्ड वेल्ज़ली को वापिस बुला कर बूढ़े कार्नवालिस को शान्ति-स्थापना के लिए फिर भारत भेजा गया। जुलाई के अन्त में वह कलकत्ते पहुँचा, और नाव द्वारा उत्तर भारत के लिए रवाना हुआ। शिन्दे के दीवान मुंशी कमलनयन को मालकम इससे पहले ही ग़द्दार बना चुका था और उसके द्वारा मराठा गुट्ट को फोड़ने की कोशिश कर रहा था। कार्नवालिस ने प्रस्ताव किया कि यदि शिन्दे और होल्कर अलग हो जाँय तो शिन्दे को गोहद और गवालियर इलाक़े तथा जयपुर का आधिपत्य लौटा दिये जाँय। इसपर शिन्दे ने होल्कर का साथ छोड़ दिया। होल्कर ने अजमेर से यह कह कर पंजाब की राह ली कि सिक्ख सरदारों और काबुल के शाह को साथ ले कर अँगरेज़ों से लड़ूंगा।

गाज़ीपुर पहुँच कर कार्नवालिस चल बसा (५-१०-१८०५ ई०)। तब सर ज्यार्ज बार्लो स्थानापन्न गवर्नर-जनरल नियुक्त हुआ। शिन्दे के साथ सन्धि हो गयी, और उसे आश्रित सेना की सन्धि से भी मुक्त किया गया।

होल्कर अब अमृतसर पहुँचा; लेक भी उसके पीछे पीछे ब्यास तक चढ़ गया। अमृतसर में सिक्ख सरदारों की संगत जुटी उनमें से कुछ मराठों से मिलना चाहते थे तो कुछ अँगरेज़ों से। होल्कर काबुल के शाह को बुलाने की भी बात करता था। सरदार रणजीतसिंह को पंजाब में अपना राज्य स्थापित करना था, इसलिए वह नहीं चाहता था कि पंजाब में मराठा, अफ़ग़ान और अँगरेज़ सेनाएँ आयें। उसके प्रभाव से होल्कर को पंजाब में कुछ मदद न मिली। तब वह पेशावर जाने लगा। लेकिन लेक ने उसे सन्देश भेजा कि वह शान्ति से लौट जाय तो उसके सब इलाक़े लौटा दिये जाँयगे। इस आधार पर उसने सन्धि कर ली (दिसम्बर १८०५ ई०)।

§८. **मराठा राज्यों की अवनति**—नये गवर्नर-जनरल मिण्टो ने अपने ७ बरस (१८०७-१३ ई०) के शासन में वेल्ज़ली द्वारा विजय किये हुए प्रदेशों में अँगरेज़ी शासन की नींव को पक्का किया। जसवन्तराव होल्कर सन् १८०८ में पागल हो गया। उसके बच्चे के नाम से शासन चलने लगा और राज्य की बागडोर पठान सरदार अमीरख़ाँ के हाथ में रही।

वह होल्कर के नाम पर राजपूताने को लूटता रहा। सन् १८०६ में उसने निज़ाम के उभाड़ने से नागपुर राज्य पर चढ़ाई की। वह राज्य कम्पनी का आश्रित न था, तो भी मिण्टो ने अँगरेज़ी सेना भेज कर उसे अमीरख़ाँ से बचाया, और इस सेवा के बदले में भोंसले से कुछ भी न माँगा। वास्तव में अमीरख़ाँ कम्पनी के हाथ पहले से ही बिका हुआ था। और यह नाटक इसलिए रचा गया जिससे नागपुर का राजा समझ ले कि होल्कर से उसे कम्पनी की आश्रित सेना ही बचा सकती है।

शिन्दे के विषय में सन् १८०४ में ही आर्थर वेल्ज़ली ने लिखा था, 'उसके दरबार में हमारा पैर ऐसा जमा है कि वह कम्पनी से लड़े तो उसकी आधी सेना और सरदार हमारी तरफ़ होंगे।" यों मराठा राज्य अब भीतर से बोदे हो रहे थे।

§६. **उत्तर-पच्छिमी सन्धियाँ**—नैपोलियन सन् १८०० में फ्रान्स का अधिनायक और १८०४ में वहाँ का सम्राट् बन गया था। भारत पर उसकी नज़र बराबर लगी थी, और मिण्टो के समय उसकी चढ़ाई का वास्तविक भय उपस्थित हो गया।

ईरान में नादिरशाह के पतन के बाद काज़ार वंश का राज्य शुरू हुआ था। उस वंश के समय में सन् १८०६ ई० से रूस ईरान को उत्तर-पच्छिमी सीमा पर दबाने लगा। ईरानियों ने वेल्ज़ली वाली सन्धि के अनुसार अँगरेज़ों से मदद माँगी, पर अँगरेज़ों को तब रूस से मैत्री रखनी थी। ईरानी दूत तब नैपोलियन के दरबार में पहुँचे। इसी बीच जून १८०७ में नैपोलियन और रूस-सम्राट् के बीच भी सन्धि हो गयी। तब रूस, तुर्की और ईरान के सहयोग से नैपोलियन ने कन्दहार, गज़नी, गोमल, डेरा-इस्माइलख़ाँ के रास्ते भारत पर चढ़ाई करने की योजना बनायी।

इस दशा में अँगरेज़ों ने ईरान, अफ़ग़ानिस्तान, सिन्ध और पंजाब में अपने दूत भेजे।

(१) **ईरान**—ईरान में मालकम को भेजा गया, पर वह विफल लौटा। किन्तु नैपोलियन के फिर युरोप के झगड़ों में फँस जाने पर इंग्लैंड और ईरान

के बीच यह सन्धि हो गयी कि यदि कोई युरोपियन शक्ति ईरान पर चढ़ाई करेगी तो अँगरेज़ ईरान को धन और सेना की मदद देंगे।

(२) **अफ़ग़ानिस्तान**—ज़मानशाह को सन् १८०१ में उसके सौतेले भाई महमूद ने गद्दी से उतार कर अन्धा कर दिया था। ज़मान के सगे भाई शुजा ने १८०३ ई० में महमूद से गद्दी छीन ली, तो भी उसे बराबर महमूद का डर बना था। पेशावर, अटक, डेराजात, मुल्तान और सिन्ध अभी तक अब्दाली साम्राज्य के अधीन थे।

सन् १८०८ में कम्पनी का दूत एल्फ़िन्स्टन बीकानेर-मुलतान के रास्ते पेशावर पहुँच कर शाह शुजा से मिला। एल्फ़िन्स्टन ने शाह से फ़ान्स के ख़िलाफ़ मदद माँगी तो शाह शुजा ने बदले में महमूद के ख़िलाफ़ रुपये की मदद चाही। इसके लिए वह सिन्ध प्रान्त कम्पनी के पास रहन रखने को अथवा उसकी दीवानी सौंपने को तैयार था। उसने कहा, महमूद ईरानियों की मदद से गद्दी लेना चाहता है, और यदि वह सफल हुआ तो ईरानियों और फ़ान्सीसियों के पैर सिन्ध पर जमे समझो। अन्त में यह सन्धि हुई कि ईरानियों या फ्रान्सीसियों की चढ़ाई होने पर शाह शुजा उन्हें रास्ता न देगा और कम्पनी शाह की रुपये से मदद करेगी।

(३) **सिन्ध**—सिन्ध के स्थानीय शासक तालपुर खानदान के बलोच थे, जो हैदराबाद, मीरपुर तथा खैरपुर में रहते थे। वे शाह शुजा से छुटकारा पाने को उत्सुक थे। जब कम्पनी का दूत उनके यहाँ पहुँचा तो ईरानी दूत वहाँ पहले से उपस्थित थे, और ईरान और फ़ान्स दोनों की तरफ़ से बात कर रहे थे। उन्होंने सिन्धी अमीरों को शाह शुजा से स्वतन्त्र करने और कन्दहार दिलाने का प्रलोभन दिया था। अँगरेज़ों की मदद का वचन मिलने पर सिन्धियों ने उसे तरजीह दी और अँगरेज़ रैज़िडेण्ट अपने यहाँ रख लिया।

§१०. रणजीतसिंह का उदय और उसकी रोक-थाम—मिण्टो की सन्धियों में से सब से मुख्य वह थी जो रणजीतसिंह के साथ की गयी। वह सन्धि वस्तुतः दूसरे मराठा युद्ध का परिणाम थी।

सन् १७९९ में ज़मानशाह के लौटने के बाद से रणजीतसिंह पंजाब में अपना राज्य बढ़ा रहा था। ठेठ पंजाब में सिक्ख मिस्लें जीर्ण हो रही थीं; उन्हें वह मौके के मुताबिक़ अधीन करता जाता था। अफ़ग़ानिस्तान में घरेलू लड़ाई होने पर रणजीत ने पच्छिमी पंजाब पर भी धीरे-धीरे दख़ल कर लिया। कश्मीर के पूरब पहाड़ों में छोटे-छोटे राजपूत राज्य थे; कटोच (काँगड़ा) का राजा संसारचन्द उन्हें क्रमशः जीत रहा था। परन्तु नेपाल के गोरखे तमाम पहाड़ी राज्यों को जीतते हुए सन् १८०५ में सतलज पर आ पहुँचे, और संसारचन्द उनसे उलझ गया। तब रणजीतसिंह को पहाड़ में अपना राज फैलाने का मौक़ा मिल गया। सतलज और जमना के बीच सरहिन्द का इलाक़ा भी मुख्यतः सिक्ख मिस्लों के अन्तर्गत था। इनके सरदार पहले मराठों को कर देते थे, जिससे अँगरेज़ों ने उन्हें मुक्त कर दिया था। रणजीतसिंह ने सन् १८०६-७ में दो बार उस इलाक़े पर चढ़ाई की और बहुत-सा प्रदेश अधीन किया। वहाँ के कुछ सरदार तब अँगरेज़ों के पास पहुँचे।

इस दशा में मेटकाफ़ को रणजीतसिंह के पास भेजा गया। मेटकाफ़ ने उससे नैपोलियन के ख़तरे की बात कही, तब रणजीत ने पूछा कि ब्रिटिश सरकार सरहिन्द पर उसका आधिपत्य मानती है कि नहीं। मेटकाफ़ ने कुछ उत्तर न दिया; तब रणजीत ने उसकी उपस्थिति में तीसरी बार सतलज पार की और अम्बाला आदि प्रदेशों पर दख़ल कर लिया। इस बीच नैपोलियन का ख़तरा मिट गया था। तब रणजीतसिंह से कहा गया कि सरहिन्द के राज्य अँगरेज़ों के रक्षित हैं। जनवरी १८०९ ई० में आक्टरलोनी दिल्ली से फ़ौज ले कर लुधियाना आ डटा। रणजीतसिंह ने पहले युद्ध की ठानी, दौलतराव शिन्दे के पास दूत भेजे, और सरहिन्द के सिक्खों को उभाड़ने की कोशिश की। अन्त में विवश हो कर एप्रिल में उसने सन्धि पर दस्तख़त कर दिये, तीसरी चढ़ाई में जीते इलाके लौटा दिये और यह माना कि आगे से सतलज पार न करेगा। इसके बाद भी इन्दौर और गवालियर दरबारों के साथ उसकी बातचीत चलती रही। सन् १८११ से उसने अँगरेज़ों से लड़ने का विचार त्याग दिया।

उधर गोरखे पहाड़ में अपना राज्य बराबर बढ़ा रहे थे। १८११ ई० में अँगरेज़ों ने रणजीतसिंह को इजाज़त दी कि वह उनके मुकाबले के लिए भले ही सतलज लाँघ सकता है।

इधर एल्फ़िन्स्टन और मेटकाफ़ लौट कर आये और उधर शाह शुजा को महमूद ने अफ़ग़ानिस्तान से निकाल दिया। तब वह रणजीतसिंह की शरण में आया (१८१३ ई०)। दोनों ने भाई-चारा करते हुए पगड़ियाँ बदलीं, जिससे प्रसिद्ध कोहेनूर हीरा रणजीतसिंह को मिला। उसी बरस अटक के क़िलेदार ने वह क़िला रणजीतसिंह को सौंप दिया। शाह महमूद के वज़ीर फ़तहख़ाँ ने अपने भाई दोस्तमुहम्मद के साथ अटक वापिस लेने के लिए चढ़ाई की। रणजीतसिंह के सेनापति मोहकमचन्द ने उन दोनों को हरा दिया।

§११. भारतीय समुद्र पर एकाधिपत्य—मारिशस और उसके पड़ोस के द्वीप फ़्रान्स के अधीन थे। नैपोलियन के ज़माने में फ़्रान्सीसी जहाज़ वहाँ से अँगरेज़ी जहाज़ों पर छापे मारते थे। युरोप के प्रायः सभी देश, एक एक करके नैपोलियन के काबू में आ गये। तब उसने युरोप के सब बन्दरगाह अँगरेज़ी जहाज़ों के लिए बन्द कर दिये। बदले में अँगरेज़ों ने पुर्तगाल, हालैंड और फ़्रान्स के भारतीय समुद्र वाले सभी उपनिवेशों पर भारतवर्ष से चढ़ाइयाँ कर दख़ल कर लिया। मारिशस आदि टापू फ़्रान्स से छिन गये। हालैंड के आशा अन्तरीप के उपनिवेश (केप-कालोनी) में एक फ़्रान्सीसी सेनापति को समर्पण करना पड़ा। वह जावा गया। पर जावा पर भी स्वयम् लार्ड मिण्टो ने चढ़ाई की। वहाँ कर्नल जिलेस्पी ने उस सेनापति को फिर हराया।

आर्थर वेल्ज़ली ने भारत से लौट कर नैपोलियन के युद्धों में भाग लिया, और ड्यूक आव वैलिंगटन का पद पाया। सन् १८१५ में जर्मन सेनापति ब्ल्यूख़र ने वेलिंगटन की मदद से वाटर्लू नामक स्थान पर नैपोलियन को हरा दिया। वह पकड़ा गया और ईस्ट इंडिया कम्पनी के सेण्ट हेलिना टापू में क़ैद किया गया। तब केप-कालोनी और मारिशस के सिवाय अन्य सब बस्तियाँ उनके पहले मालिकों को लौटा दी गयीं।

§१२. **भारत में ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीति**—उक्त घटनाओं से प्रकट है कि नैपोलियन के युद्धों के समय भारतीय साम्राज्य ब्रिटेन के लिए कितने काम का साबित हुआ। नैपोलियन ने जब युरोप के बन्दरगाह ब्रिटिश माल के लिए रोक दिये तब इंग्लैंड के नये-नये कारखानों का माल भारत के बाज़ारों में बिना चुंगी भेजा जाने लगा। इस विषय पर हम आगे और विचार करेंगे। यहाँ इतना कहना काफ़ी है कि इसी समय से भारत इंग्लैंड का औपनिवेशिक बाज़ार बनता चला गया। वह बाज़ार सन् १८१३ ई० से सब अँगरेज़ों के लिए खोल दिया गया; ईस्ट इंडिया कम्पनी का एकाधिकार केवल चीन के व्यापार में रह गया।

इसके अतिरिक्त सन् १८१३ ई० में कम्पनी को नया चार्टर देते समय पार्लिमेएट में यह विचार भी प्रकट हुआ कि भारत में अँगरेज़ बस्तियाँ बसायी जाँय। भारत के पहाड़ी प्रान्तों का जलवायु इसके लिए उपयुक्त होने के कारण उन प्रान्तों को जीतना आवश्यक समझा गया।

§१३. **नेपाल-युद्ध** (१८१४–१६ ई०)—सन् १८०० ई० से नेपाल का राजा एक बच्चा था और १८०४ से १८३७ तक राज्य की बागडोर भीमसेन थापा नामक एक सरदार के हाथ में रही। गोरखा राज इससे पहले जमना तक पहुँच चुका था; १८०५ ई० में उसके पच्छिमी भाग के शासक अमरसिंह थापा ने उसे सतलज तक पहुँचा दिया और फिर सतलज पार कर कटोच के राजा का काँगड़ा क़िला घेर लिया। वह क़िला चार बरस घिरा रहा। १८०९ ई० में उसे रणजीतसिंह ने ले लिया और गोरखों को सतलज के दक्खिन आना पड़ा।

सन् १८०४ से ही गोरखपुर, चम्पारन और पुर्णिया के अनिश्चित सीमान्त पर अँगरेज़ों से झगड़ा चल रहा था। इन झगड़ों के निपटारे की बातचीत भी चलती थी। सन् १८१३ में लार्ड हेस्टिंग्स के गवर्नर-जनरल बन कर आने पर अँगरेज़ों ने रुख़ बदला और गोरखा सरकार को एकदम विवाद-ग्रस्त जमीनें छोड़ देने को कहा। गोरखे उस धमकी से न दबे। तब युद्ध हुआ।

अँगरेज़ों ने पाँच रास्तों से नेपाल पर चढ़ाई करनी चाही। लुधियाना से आक्टरलोनी सतलज दून में अमरसिंह के ख़िलाफ़ बढ़ा। मेरठ से जिलेस्पी

देहरादून की तरफ़ चला; उसे जीत कर उसकी सेना का एक हिस्सा गढ़वाल में घुसता और दूसरा नाहन पर आक्टरलोनी से जा मिलता। बनारस-गोरखपुर में एक सेना बुटवल के रास्ते पालपा-गोरखा पर चढ़ाई करने को तैयार की गयी। पटना मुर्शिदाबाद से एक और सेना काटमाडू के खिलाफ़ रवाना हुई। और एक छोटी सेना पुर्णिया सीमा की रक्षा को तथा सिक्किम के राजा को उभाड़ने को रक्खी गयी।

डेविड आक्टरलोनी
दिल्ली में अंकित समकालीन चित्र
[दिल्ली म्यू०, भा० पु० वि०]

मेरठ वाली साढ़े तीन हजार सेना सबसे पहले देहरादून जा पहुँची। अमरसिंह के भतीजे बलभद्र सिंह थापा ने २४० गोरखों के साथ शहर से ४ मील दूर कलुंगर के पहाड़ पर साला की बाँस से घिरी पत्थर की बाड़ में शरण ली। अंगरेज सेनापति ने पहाड़ की फेदी* पर तोप जमा दी। ब्रिटिश तोपों का जवाब नेपाली पत्थर-कलों (muskets) से देने लगे। नेपोलियन के साथी को जावा में हराने वाले जिलेस्पी से यह सहा न गया कि मुट्ठी भर हिन्दुस्तानी उसका यों मुकाबला करें। ३ दिन में पहाड़ का पूरा घेरा डाल कर उसने "गढ़" पर हल्ला बोला (३१-१०-१८१४ ई०)। कलेजे में गोली खा कर वह वहीं ढेर हो गया।

जिलेस्पी का उत्तराधिकारी महीना भर घेरा डाले पड़ा रहा। और कुमुक आने पर २७ नवम्बर को अँगरेज़ों ने फिर "किले" पर हल्ला बोला, परन्तु फिर उसी तरह ढकेले गये। इसके बाद उन्होंने गोरखों की पानी लेने की जगह मालूम कर उस ओर तोपों का मुँह तीन दिन-रात बराबर खोले रक्खा। ३० नवम्बर को तोपें चुप हुईं, तब क़िले से बन्दूकें चलना भी बन्द हुआ;

* पहाड़ की जड़ को, जहाँ से चढ़ाई शुरू होती है, नेपाल में फेदी कहते हैं।

और ७० आदमी हाथ मे कृपाण और कन्धे पर पथरकला लिये, कमर में खुखरी और सिर पर चक्र बाँधे, और स्त्रियाँ बच्चों को पीठ पर लपेटे, नालापानी के झरने पर उतरे, और वहाँ अपनी प्यास बुझा कर अँगरेज़ी पाँतों के बीच से राह काटते चले गये। स्तब्ध अँगरेजी सेना ने उन्हें साफ़ निकल जाने दिया और तब तीसरी बार गढ पर हल्ला बोल कर उसे जमींदोज कर दिया।

ब्रिटिश सेनापति ने तब जमना पार कर नाहन के पदच्युत राजा को अपनी तरफ मिलाया। नेपालियों ने नाहन से उत्तर हट कर जैथक पर मुकाबला किया। अँगरेजी सेना वहाँ तक पहुँचने मे एक तिहाई कट गयी और जैथक का पानी काटने की उसकी कोशिश बेकार हुई।

जितम्पा और बलभद्र की समाधि, पीछे कलंगा पहाड़ दिखायी देता है।

उधर अमरसिंह आक्टरलोनी से लोहा ले रहा था। आक्टरलोनी ने नालागढ और बिलासपुर के राजाओं को अपनी तरफ मिला लिया, तो भी अमरसिंह तिहाई सेना से उसका मुकाबला करता रहा। गोरखपुर वाली सेना हार कर लौटी। उसका सेनापति उसे छोड़ कर भाग गया। बिहार वाली सेना की भी वैसी ही दुर्गति हुई। लेकिन कोसी के पूरब वाली सेना ने सिकिम के राजा से मिल कर पूर्णियाँ के उत्तर मोरंग प्रदेश पर कब्ज़ा कर लिया। आक्टरलोनी

ठंडे दिमाग़ से अपनी जगह पर डटा रहा और मार्च सन् १८१५ में उसने अमरसिंह को घेर लिया। मुरादाबाद के एक अँगरेज़ डाक्टर ने जासूसों द्वारा कुमाऊँ-गढ़वाल के बारे में जानकारी प्राप्त कर षड़यन्त्र फैलाये थे। कुमाऊँ-गढ़वाल के लोग अँगरेज़ों से मिलने को तैयार थे और नेपाल सरकार ने उधर ध्यान नहीं दिया था। इस दशा में अल्मोड़े पर चढ़ाई की गयी। एप्रिल सन् १८१५ में कर्नल निकल्स ने प्रायः बिना लड़ाई के अल्मोड़ा ले लिया।

तब मुज़फ़्फ़रपुर और रक्सौल के बीच सगौली गाँव में सन्धि की बातचीत शुरू हुई। नेपाली दूतों ने मान लिया कि वे काली से सतलज तक का तमाम इलाका छोड़ देंगे तथा अँगरेज़ों के सिवाय किसी युरोपियन को नेपाल में न आने देंगे। पर नेपाल दरबार ने यह स्वीकार न किया। जनवरी १८१६ में फिर युद्ध शुरू हुआ, और आक्टरलोनी काठमांडू की तरफ़ बढ़ा। उसके राजधानी से ५० मील पहुँचने पर नेपाल दरबार ने उक्त सन्धि स्वीकार की।

देहरादून में कलंगुर पहाड़ के सामने रिस्पना नदी के बीच एक एकान्त टापू पर जिलेस्पी और बलभद्र की स्मारक दो सीधी-साधी समाधें साथ-साथ खड़ी हैं। दक्खिन तरफ़ की समाध के पूरब ओर यह लेख खुदा है:—

THIS IS INSCRIBED
AS A TRIBUTE OF RESPECT
FOR OUR GALLANT ADVERSARY
BULBUDDER
COMMANDER OF THE FORT
AND HIS BRAVE GOORKHAS
WHO WERE AFTERWARDS
WHILE IN THE SERVICE
OF RUNJEET SINGH
SHOT DOWN IN THEIR RANKS
TO THE LAST MAN
BY AFGHAN ARTILLERY

अर्थात्—"यह लेख हमारे वीर प्रतिद्वन्द्वी, गढ़ के नायक बलभद्र और उसके उन बहादुर गोरखों के प्रति, आदर का भाव प्रकट करने के लिए खोदा गया, जो बाद में, रणजीतसिंह की सेवा में रहते समय, अफ़ग़ान तोपख़ाने के मुक़ाबले में सब के सब अपनी पाँतों में वीरगति को प्राप्त हुए।"

§१४. **पेंढारी तथा तीसरा मराठा युद्ध** (१८१७-१९ ई०)— दक्खिन की रियासतों में सेना के साथ अनियमित सवार रखने की प्रथा चली आती थी, जो शान्ति के समय खेती-बारी करते, परन्तु जिन्हें युद्ध के समय शत्रु के देश में पहुँचने पर वेतन के बजाय लूटने की इजाज़त मिल जाती थी। इन लोगों को पेंढारी कहते थे। शिन्दे और होल्कर वंशों की सेवा में रहने के अनुसार ये शिन्देशाही या होल्करशाही कहलाते थे। मालवा इनका केन्द्र था।

सन् १८०३ ई० की अपनी हारों के विषय में मराठों की यह धारणा थी कि युरोपियन शैली की नक़ल करने से वे हारे। इसीसे मराठा राज्य पेंढारियों की वृद्धि से सन्तुष्ट जान पड़ते थे। शायद वे उन्हें आगे चल कर अपनी सेवा में लेने की सोचते थे। सन् १८१४-१५ ई० में गोरखों ने मराठा राज्यों में अपने दूत भेजे; उन्होंने रणजीतसिंह, बरमा के राजा तथा चीन सम्राट् को भी अँगरेजों के ख़िलाफ़ उभाड़ना चाहा। गोरखों की जीतों से मराठों के हौसले बढ़े। पूना से बालाजी कुंजर नामक एक व्यक्ति सब मराठा दरबारों में और नर्मदा के किनारे निमावर पर चीतू पेंढारी की छावनी में भी गया। पेंढारी नेताओं ने निश्चय किया कि वे अँगरेज़ों और उनके मित्र निज़ाम के राज्य पर छापे मारेंगे। सभी भारतीय राज्य अँगरेज़ों से कुढ़ते थे। लार्ड हेस्टिंग्स ने यह सम्भावना देखी कि यदि रणजीतसिंह सतलज पार कर आय और बरमा का राजा चटगाँव पर चढ़ाई कर दे तो सब मराठे राज्य भी उठ खड़े होंगे। रणजीत तो सेना ले कर सतलज तक आया भी, लेकिन और सब भारतीय राजा ढिलमिल यक़ीन और पस्तहिम्मत थे। गोरखों की तरह डट कर लड़ने को कोई तैयार न था।

दूसरी तरफ़ अँगरेज़ों की तैयारी ठोस थी। गायकवाड और पेशवा के राज्यों में अर्थात् गुजरात, महाराष्ट्र और बुन्देलखंड में सन् १८०३ ई० से उनकी छावनियाँ पड़ीं थीं। गवालियर के रेज़िडेन्ट के अधीन जेम्स टाड नामक व्यक्ति को राजपूताने का नक़शा तैयार करने तथा राजपूत राज्यों को मराठों के ख़िलाफ़ उभाड़ने को नियत किया गया था। टाड का नक़शा सन् १८१५

में तैयार हो गया और उसके षड्यन्त्र भी सफल हुए। इधर इसी बीच रघुजी भोंसले की मृत्यु हुई। उसके उत्तराधिकारी अप्पासाहेब भोंसले ने अँगरेज़ों से आश्रित सन्धि कर ली (१८१६ ई०)। नागपुर राज्य में अँगरेज़ी छावनियाँ पड़ जाने से शिन्दे और होल्कर के राज्य दक्खिन तरफ़ से भी घिर गये। शिन्दे पेशवा को फिर से उठाने की सोचता था, पर अब उन दोनों के बीच अँगरेज़ों ने यह लोहे की दीवार खड़ी कर दी।

पेशवा और भोंसले के एक बार क़ाबू में आने के बाद से अँगरेज़ों की नीति यह रही कि उन्हें और अधिक दबाया जाय, यहाँ तक कि वे खीझ कर मुक़ाबले के लिए उठें, और तब उन्हें पूरी तरह कुचल दिया जाय।

गायकवाड को पेशवा की बड़ी रक़म देनी थी। उसके बारे में समझौता कराने के लिए अँगरेज़ों का एक पिछलग्गू गंगाधर शास्त्री पूना भेजा गया। इस आदमी का बर्ताव बड़ा गुस्ताख़ी का और चिढ़ाने वाला था। वह पंढरपुर में मारा गया। इस पर रेज़िडेन्ट ऐल्फिन्स्टन ने पेशवा को एक नयी सन्धि करने को बाधित किया (१३-६-१८१८ ई०), जिससे पेशवा ने बहुत से क़िले और इलाक़े दिये तथा गुजरात पर कुल अधिकार छोड़ दिया। इसके बाद उससे कहा गया कि एक सेना खड़ी करके पेंढारियों के दमन के लिए अँगरेज़ों को दे। तब उसने जाना कि इस प्रकार उसकी सेना भी उससे ले लेने के बाद उससे फिर किसी "सन्धि" पर दस्तख़त कराये जायँगे।

सन् १८१५ के अन्त में निज़ाम की आश्रित सेना के अँगरेज़ अफ़सर ने शिन्देशाही पेंढारियों पर हमला किया। जवाब में पेंढारी निज़ाम राज्य पर टूट पड़े और कृष्णा नदी के किनारे बढ़ते हुए "उत्तरी सरकारों" को लूटने लगे। अँगरेज़ी सरकार ने शिन्दे से उनकी रोक-थाम करने को न कहा, प्रत्युत स्वयम् मराठा राज्यों में घुस कर उनका दमन करने का निश्चय किया। ३० हज़ार पेंढारियों को दबाने के बहाने १ लाख १४ हज़ार अँगरेज़ी सेना मैदान में उतारी गयी। उत्तरी सेना ने स्वयम् लार्ड हेस्टिंग्स के नेतृत्व में रेवाड़ी, आगरा, कालपी और कालिंजर पर मोर्चे लिये। दक्खिनी सेना दाहोद (गुजरात) से

खानदेश होते हुए बराड तक तैनात थी। उसकी दुहरी पाँत थी, एक उत्तर मुँह किये आगे बढ़ती और दूसरी दक्खिन मुँह किये पेशवा या भोंसले को शिन्दे-होल्कर की सेनाओं से मिलने से रोकती।

अँगरेज़ों की इस योजना और मराठों की मनोवृत्ति को देखते हुए कहना पड़ता है कि यह युद्ध नहीं, एक बड़ा शिकार था। डेढ़ मास के भीतर शिन्दे, होल्कर, पेशवा और भोंसले चारों की शक्ति कुचल दी गयी।

हेस्टिंग्स के शब्दों में "शिन्दे देशी राजाओं में सबसे अधिक शक्त था। उसकी सेना पुराने सधे हुए सिपाहियों की थी, तोपें बहुत अच्छी और तोपची होशियार थे।" ग्वालियर के २० मील दक्खिन, सिन्ध से चम्बल तक, एक पहाड़ी डांडा है। हेस्टिंग्स ने कालपी से बढ़ कर उसके तंग दर्रों को एकाएक रोक लिया। शिन्दे घिर गया। अब या तो वह डट कर लड़ने को तैयार होता, या, यदि भागता तो सेना, तोपखाने और खजाने को छोड़ किसी पगडंडी से ही भाग सकता था। इस दशा में हेस्टिंग्स ने उससे नयी सन्धि पर हस्ताक्षर कराये (५-११-१८१७ ई०)। इस बीच टाड की चेष्टा से राजपूत राज्यों के दूत ब्रिटिश सरकार के पास शरण-भिक्षा माँगने आ चुके थे। शिन्दे ने राजपूताने पर अपना आधिपत्य छोड़ दिया और १६ राजपूत राज्य कम्पनी की रक्षा में ले लिये गये।

उधर एल्फ़िन्स्टन ने अपनी टुकड़ी को पूना से ४ मील, खड़की, हटा लिया, और मुम्बई तथा शिरूर छावनी (भीमा नदी पर, पूना से अहमदनगर की राह में) से फ़ौज मँगायी। पेशवा के सेनापति बापू गोखले ने उसपर चढ़ाई की। ठीक उसी दिन जब शिन्दे ने सन्धि की, खड़की पर मराठों की हार हुई, और पेशवा पूना छोड़ सेना के साथ भाग निकला। अँगरेज़ों के साथ उसकी कई जगह मुठभेड़ें हुईं, जिनमें कोरेगाँव और आष्टी की लड़ाइयाँ प्रसिद्ध हैं। महाराष्ट्र की जनता के भी उभड़ने का डर था, इसलिए एल्फ़िन्स्टन ने बालाजी नातू नामक एक ग़द्दार द्वारा शिवाजी के वंशज सतारा के राजा को हाथ में किया, और उससे मराठों के नाम एक घोषणा निकलवायी कि पेशवा का साथ न दिया जाय।

नागपुर में भी तभी वैसी ही घटनाएँ हुईं। अप्पासाहब आश्रित सन्धि के शिकंजे में परेशान था; उसने उसकी शर्तों को कुछ नरम करने की प्रार्थना की। इसपर रेज़िडेन्ट ने पड़ोस की छावनियों से सेना बुला ली, और शहर से सटी हुई सीताबल्डी की टेकरी पर मोर्चा लिया। राजा की सेना यह देख कर भड़क गयी और अँगरेज़ी फ़ौज पर कुछ गोलियाँ चल गयीं। अँगरेज़ों ने इसपर राजा को हुक्म दिया कि अपनी सब युद्ध-सामग्री सौंप और सेना तोड़ कर हमारी छावनी में चले आओ। अप्पासाहब यह मान कर क़ैदी बन गया। ३० दिसम्बर तक सेना ने भी समर्पण कर दिया। तब राजा से कहा गया कि तमाम किले और सागर तथा नर्मदा के प्रदेश (अर्थात् आधुनिक मध्य प्रान्त के सब हिन्दी-भाषी इलाक़े) सौंप दे, तथा गढ़ीलगढ़; सरगुजा आदि पर आधिपत्य छोड़ दे। राजा ने वह भी मान लिया; पर अब वह भीतर-भीतर मुकाबले की तैयारी करने लगा। तब १५ मार्च को उसे क़ैद कर प्रयाग को रवाना किया गया। परन्तु वह रास्ते से भाग गया।

होल्कर के राज्य में अँगरेज़ों ने अब अमीरखाँ को खुल्लम खुल्ला मिला कर उसे टोंक की नवाबी दे दी। तब उस राज्य की सेना पर चढ़ाई की गयी। महीदपुर पर युद्ध हुआ। तोपची दल के नेता रोशन-बेग ने वीरता से मुकाबला किया, पर अमीरखाँ का दामाद अब्दुलग़फ़ूर तभी शत्रु से जा मिला। यों अँगरेज़ों की जीत हुई। अब्दुलग़फ़ूर को जाओरा की रियासत दी गयी। मन्दसोर की सन्धि से होल्कर राज्य अँगरेज़ों का रक्षित बन गया।

इस बीच पेंढारी लश्करों (जत्थों) से भी युद्ध जारी था। उन्होंने पहले अँगरेज़ी घेरा चीर कर उत्तर की ओर निकलना चाहा, पर गवालियर से पीछे ढकेले गये, और फिर दक्खिन और पूरब से घेर लिये गये। इस दशा में भी उनकी शक्ति तोड़ना सुगम न जान पड़ा, क्योंकि वे फुर्तीले सवार थे और छापे मारना ही उनका काम था। अँगरेज़ों ने तब उनमें से बहुतों को जागीरें दे कर फोड़ लिया। बाकी पेंढारी भी यदि चाहते तो उनके लिए चुपचाप किसानों में

मिल जाना बहुत सुगम था। तो भी वे मुसीबतों, ख़तरों, भूख और मौत की परवा न करते हुए अन्त तक लड़ते रहे। जनता की सहानुभूति उनके साथ थी और उनके बारे में कोई सूचना अँगरेज़ों को मुश्किल से मिल पाती थी।

अप्पासाहब ने भाग कर महादेव पहाड़ियों में शरण ली। उसने चौरागढ़ अँगरेज़ों से वापिस छीन लिया, नागपुर और छत्तीसगढ़ में षड्यन्त्र फैलाया, और शिन्दे की चश्मपोशी से बुरहानपुर में फ़ौज भरती करना शुरू किया। असीरगढ़ जसवन्तराव लाड नामक सरदार के हाथ में था जो समूचे महाराष्ट्र को स्वतन्त्रता-युद्ध के लिए उभाड़ना चाहता और स्वयम् शहीद होने को उत्सुक था। उसने पेशवा को निमन्त्रण दिया। पेशवा के पास अभी ११ हज़ार सेना बाक़ी थी। अँगरेज़ों ने देखा कि उसका असीरगढ़ पहुँचना ख़तरनाक होगा। और यदि वह युद्ध में मारा जाय या क़ैद हो जाय तो भी समूचा महाराष्ट्र भड़क उठेगा। इस दशा में उसे ख़रीद लेना ही उचित समझा गया। ८ लाख रुपया वार्षिक पेन्शन पाने की शर्त पर उसने अपने को सौंप दिया (१८ ६-१८१८ ई०)। तब उसे बिठूर (कानपुर के पास) भेज दिया गया। उसके राज्य का कुछ अंश सतारा के राजा को दे कर बाक़ी अँगरेज़ों ने ले लिया।

उसी वर्ष अक्तूबर में एक अँगरेज़ी सेना महादेव पहाड़ियों में घुसी। अप्पासाहब तब चीतू पेंढारी की मदद से असीरगढ़ पहुँच गया। स्वयम् चीतू गढ़ तक न पहुँच कर जंगल में भागा जहाँ वह एक बाघ के मुँह में पड़ गया। ७ एप्रिल १८१९ ई० को असीरगढ़ भी ले लिया गया, लेकिन अप्पासाहब निकल भागा था। वह इसके बाद क्रमशः लाहौर, मंडी और जोधपुर में शरणागत रहा।

उपर्युक्त घटनाओं से प्रकट है कि मराठे अँगरेज़ों की गुलामी से असन्तुष्ट होते हुए भी कितने पस्त-हिम्मत थे। इस युद्ध में भाग लेने वाले एक अँगरेज़ अफ़सर ने लिखा है, "अपने शत्रुओं में भी इतनी क्षुद्र-हृदयता देख कर निराशा नहीं रोकी जाती। ऐसे तीस किले कुछ हफ़्तों में ले लिये गये, जिनमें

से प्रत्येक शिवाजी जैसे स्वामी के रहते भारत की समूची अँगरेज़ी सेना को रोके रख सकता था, जिन्हें अभेद्य बनाने के लिए दृढ़-संकल्प रक्षकों के सिवाय किसी चीज की ज़रूरत न थी।...यह समूचा देश, जो प्राकृतिक नाकेबन्दी की दृष्टि से शायद संसार में सबसे विकट है, जिसे प्रकृति ने मानो स्वाधीनता के सफल युद्ध लड़े जाने के लिए ही बनाया है,...जिसमें अनसधे अर्द्धसज्जित सिपाही अत्यन्त चतुर अनुभवी सैनिकों को रोक सकते थे,...कुछ हफ्तों में ही...हमारे हाथ आ गया।"

सन् १८१६ में कच्छ का राजा भी अँगरेज़ों की रक्षा में आ गया था।

§१५ **पहला बरमा युद्ध** (१८२४-२६ ई०)—लार्ड हेस्टिंग्स ने १८२३ ई० तक शासन किया। सन् १८२३ से २८ ई० तक लार्ड ऐम्हर्स्ट भारत का गवर्नर-जनरल रहा। उसके समय में बरमा से पहला युद्ध हुआ।

बरमी जाति का केन्द्र मध्य इरावती काँठे में है। वे पहले पगू के तलैंग राज्य के अधीन थे। तलैंग उस आग्नेय वंश में से हैं जो बरमियों और स्यामियों के आने से पहले समूचे परले हिन्द में फैला हुआ था। अठारहवीं शती के मध्य में बरमी स्वतन्त्र हुए। उसके बाद उन्होंने पगू, स्याम का तेनासरीम प्रान्त, अराकान राज्य तथा उत्तरी बरमा जीत लिये। कुछ विद्रोही अराकानी भाग कर चटगाँव में आ बसे। लार्ड मिण्टो और हेस्टिंग्स के शासन-काल में ये लोग बराबर युरोपियनों के नेतृत्व में अराकान पर छापे मारते और चटगाँव में शरण लेते थे। ये एक तरह से ब्रिटिश पेंढारी थे। सन् १८२२ तक मणिपुर और आसाम जीत कर बरमी लोग कछार राज्य को जीतने लगे। तब अँगरेज़ी सेना कछार और आसाम में घुसी। साथ ही कलकत्ता और मद्रास से एक अँगरेज़ी फ़ौज ने रंगून पर भी चढ़ाई की। बरमियों ने शहर ख़ाली कर दिया था। अँगरेज़ों ने उसे ले लिया, पर रसद और वाहन न मिलने से तथा बरमियों के छापों के कारण आगे न बढ़ सके।

इधर बरमी सेनापति महाबन्धुल चटगाँव ज़िले में घुसा और वहाँ एक अँगरेज़ी सेना को कुचल कर आगे बढ़ने लगा। ढाका और कलकत्ता में तब

आतंक छा गया। लेकिन रंगून का लिया जाना सुन बन्धुल उधर लौट पड़ा। "ऐसे सेनापति से विशेष डरने की ज़रूरत न थी जिसने (शत्रु की) ऐसी कठिन स्थिति से लाभ उठाने की न सोची।"

कछार की तरफ़ से अँगरेज़ बरमा में न घुस सके, लेकिन उन्होंने समुद्रतट के अरक्षित तेनासरीम प्रान्त पर दख़ल कर लिया, जहाँ उन्हें रसद-सामान काफ़ी मिल गया। १ली एप्रिल १८२५ ई० को दोनाबू की लड़ाई में महाबन्धुल मारा गया; उसके बाद अँगरेज़ प्रोम तक जा पहुँचे। जाड़े में अँगरेज़ सेनापति के राजधानी आवा से चौथे पड़ाव यन्दबू पहुँच जाने पर सन्धि हुई (२-३-१८२६ ई०)। बरमियों ने आसाम, कछार, अराकान और तेनासरीम प्रान्त सौंप दिये।

बरमा-युद्ध के सिलसिले में कलकत्ते के पास एक दुर्घटना हो गयी। बंगाल के देसी सिपाहियों को उन दिनों बारकें न मिलती थीं; अपने खर्च से उन्हें झोंपड़े बनाने पड़ते थे। युद्ध-भूमि तक अपना सामान ले जाने का प्रबन्ध भी खुद करना पड़ता था। वेतन ५ रुपया ८ आना मासिक ही था। जब तक अँगरेज़ी राज्य कर्मनाशा नदी तक था, वे इसमें कठिनाई न मानते थे। अब बारकपुर की रेजिमेण्ट को रंगून जाने का हुक्म हुआ तो पहले तो उन्होंने समुद्र पार जाने से इनकार किया, पीछे कहा कि दूना भत्ता मिलना चाहिए। जंगी लाट सर एडवर्ड पाजेट ने परेड में देशी रेजिमेण्ट को गोरी फ़ौज से घिरवा कर उन्हें हुक्म दिया कि कूच को तैयार हो या शस्त्र रख दें। उनसे यह भी नहीं कहा गया कि तोपों में अंगूरी छर्रा भरा है और वे छुटने को तैयार हैं। एक बार इनकार करते ही उनको तोपों से उड़ा दिया गया (१-११-१८२४ ई०)।

§१६. रणजीतसिंह का सेना-संगठन और राज्य-वृद्धि (१८०६-२७ ई०)—सन् १८०५ में रणजीतसिंह केवल एक सरदार था, पर १८०६ ई० तक वह महाराजा बन चुका था। सतलज पार की सब मिस्लें तब तक उसके राज्य में मिल चुकीं थीं। वह अपने को सिक्ख जनता का अधिनायक मानता और प्रत्येक राजकीय काम 'खालसा' (सिक्ख जनता)

के नाम पर ही करता था। उसकी प्रजा सुशासित और खुशहाल थी। पंजाब के किसान और व्यापारी मिस्लों के शासन में भी खुशहाल थे। अमृतसर जैसे समृद्ध नगर का उस समय में उदय होना इसका एक प्रमाण है। मिस्लों के सरदारों की पारस्परिक छीना-झपटी के कारण जो अव्यवस्था रहती थी, उसे भी अब रणजीतसिंह ने हटा दिया।

सन् १८०६ तक सब सिक्ख सेना सवारों की ही थी। अठारहवीं सदी में सिक्ख सवारों ने तीर कमान और भाले के बजाय बन्दूक अपना ली थी, और घोड़े पर चढ़े-चढ़े पथरकला चलाने में वे बड़े होशियार गिने जाते थे। सन् १८०५ में लार्ड लेक के पंजाब आने पर रणजीत भेस बदल कर उसकी छावनी में यह देखने गया था कि शिन्दे और होल्कर को हरा देने वाले अँगरेज़ों की व्यूह-रचना कैसी है। १८०६ ई० में उसने मेटकाफ़ के अँगरक्षकों की सुश्रृंखल गति-विधि देख कर तारीफ़ की। तब से उसने पंजाब में भी वैसी पंक्तिबद्ध पदाति सेना खड़ी करने का निश्चय किया। भीमसेन थापा का ध्यान उससे भी पहले इस ओर जा चुका था, और १८१४-१५ ई० के युद्ध में रणजीत ने जब गोरखों को अँगरेज़ों का मुकाबला करते देखा तो उसका पंक्तिबद्ध नियन्त्रण में विश्वास और भी दृढ़ हो गया। उसने कुछ गोरखा सेना अपने यहाँ रख ली, तथा ब्रिटिश सेना से सीख कर निकले हुए लोगों को सेवा में ले कर पंजाबियों की नियमित सेना तैयार करनी शुरू की।

राजपूत, मराठे और पठान योद्धाओं को पाँत में खड़े हो कर आदेश के अनुसार लड़ने में हेठी मालूम होती थी। सिक्खों में वह भाव बहुत कम था, और जो था भी, उसे रणजीत के प्रोत्साहन ने निकाल दिया। वह पैदल सेना को अच्छा वेतन देता, उसकी क़वायद और साज-सामान पर पूरा ध्यान रखता और बीच-बीच में खुद वर्दी पहन कर क़वायद में शामिल होता था। तोप का काम सिक्खों ने और भी उत्सुकता से सीखा। पंजाबी सेना इस प्रकार प्रायः तैयार हो चुकी थी, जब सन् १८२२ में फ्रान्सीसी सेनापति वेंतुरा और अलार ईरान के रास्ते लाहौर आये और सेवा में लिये गये। उन्होंने उस सेना का नियन्त्रण और पूर्ण कर दिया।

इस बीच रणजीत पच्छिमी पंजाब की तरफ़ क्रमशः बढ़ रहा था। सन् १८१६ ई० में शाहशुजा उसकी शरण से अँगरेज़ों की शरण में लुधियाना भाग आया, और वे उसे ५० हज़ार रुपया वार्षिक वृत्ति देने लगे। सन् १८१८ ई० में शाह महमूद के बेटे ने उसके वज़ीर फ़तहखाँ को मार डाला। फ़तहख़ाँ का एक भाई मुहम्मद-अज़ीम कश्मीर का नाज़िम था। उसने काबुल पर चढ़ाई की। शाह महमूद भाग कर हरात चला गया। तब से दुर्रानी खानदान के पास केवल हरात बचा रहा, और कश्मीर, पेशावर, काबुल, गजनी तथा कन्दहार पर मुहम्मद-अज़ीम अपने भाइयों की मदद से राज करने लगा।

लेकिन इस बीच रणजीतसिंह के सेनापति दीवानचन्द ने मुलतान जीत लिया था, और रणजीत ने अटक पार कर पेशावर के पास खैराबाद में छावनी डाल दी थी। अगले तीन बरस में कश्मीर, डेरा-ग़ाज़ीखाँ और डेरा-इस्माइल-खाँ भी जीते गये। सन् १८२३ में मुहम्मद-अज़ीम पेशावर पर आया। नौशेरा पर काबुल नदी के दक्खिन रणजीतसिंह ने उसका सामना किया। नदी के उत्तर तरफ़ के पठान भी जिहाद की घोषणा कर पहाड़ों पर आ जुटे। रणजीत ने अपनी सेना का एक हिस्सा मुहम्मद-अज़ीम के मुक़ाबले को छोड़ स्वयम् काबुल नदी पार की। सिक्ख रिसाले का पठानों पर हमला विफल हुआ। तब पठानों ने हमला कर सिक्ख पैदल-पाँतों को भी गड़बड़ा दिया। लेकिन गोरखा सैनिकों की पाँतें उस हमले के बीच चट्टान की तरह डटी रहीं। नदी पार से तोपों की मार ने भी पठानों की बाढ़ को रोका। इस बीच में पिछली सिक्ख पाँतें आगे बढ़ आयीं और रिसाले ने फिर हमला किया। रणजीत की पूरी जीत हुई (१४-३-१८२३ ई०)। दूसरे दिन पठान फिर इकट्ठे हुए, लेकिन मुहम्मद-अज़ीम मैदान से भाग गया था। तब खैबर दर्रे तक रणजीतसिंह ने अधिकार कर लिया। पेशावर में उसने मुहम्मद-अज़ीम के एक भाई को अपना सामन्त नियत किया।

इसके बाद मुहम्मद-अज़ीम चल बसा और उसका भाई दोस्त-मुहम्मद काबुल पर राज करने लगा। कन्दहार में भी उसके भाइयों का राज

था। काबुल और कन्दहार ये दो ही प्रदेश अब इन भाइयों के स्वतन्त्र राज्य में थे।

सन् १८१८ ई० में फ़तहख़ाँ के मारे जाने पर अँगरेजों ने शाह शुजा को
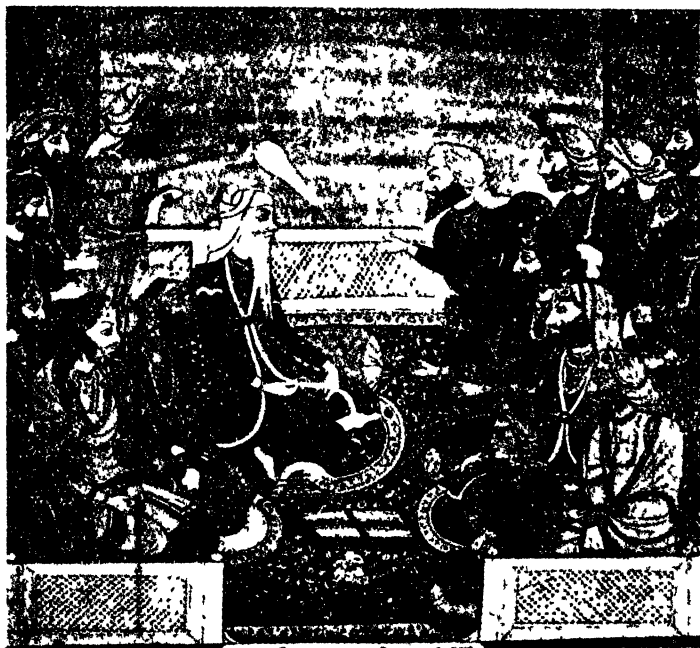
महाराजा रणजीतसिंह दरबार मे

महाराजा के दाहिने बैठे (१) खड्गसिंह (२) नौनिहालसिंह, सामने बैठे (१) हीरासिंह (२) शेरसिंह (३) गुलाबसिंह (४) प्रतापसिंह, सामने खडे (१) ध्यानसिंह (२) सुचेतसिंह।

समकालीन पंजाबी चित्र

[प्रिन्स आव वेल्स म्यू०, मुम्बई, के ट्रस्टियों के सौजन्य से]

भी अफ़गानिस्तान पर चढ़ाई करने जाने दिया था। लुधियाना से बहावलपुर सक्खर के रास्ते वह शिकारपुर तक बढ़ा और वहाँ से हार कर लौटा था।

अध्याय २

अँगरेज़ी शासन का संगठन

(१७६६–१८३६ ई०)

§ १. **मुनरो, एल्फिन्स्टन, मालकम, मेटकाफ़, और बेंटिङ्क का कार्य**—क्लाइव और हेस्टिंग्स की पहली विजयों के बाद जब उनके सामने देश के प्रबन्ध और ज़मीन के बन्दोबस्त के प्रश्न आये, तो उन्हें कोई पद्धति न सूझ पड़ी, और वे साल-ब-साल मालगुज़ारी को नीलाम करते रहे। कार्नवालिस ने बंगाल, बिहार और बनारस में ज़मीन का स्थायी बन्दोबस्त किया और एक शासनपद्धति स्थापित की। आन्ध्र देश के "उत्तरी सरकारों" में तब भी पुराने तरीक़े से मालगुज़ारी की नीलामी चलती रही। सन् १७६२ ई० में कार्नवालिस को टीपू से मलबार और बारामहाल (सेलम, कृष्णागिरि) मिले। बारामहाल का बन्दोबस्त एक फ़ौजी अफ़सर को सौंपा गया। टामस मुनरो उसका सहायक था।

वेल्ज़ली के समय टीपू के राज्य में से कनाड़ा, कोयम्बतूर और नीलगिरि कम्पनी ने ले लिये। निज़ाम को तुंगभद्रा के दक्खिन के बेल्लारि, अनन्तपुर, कडप ज़िले मिले, जो उसने अंगरेज़ों को दे दिये। फिर तांजोर और आरकाट राज्यों पर दख़ल किया गया। इन इलाक़ों में से अधिकांश का बन्दोबस्त टामस मुनरो ने ही किया। बाद में मद्रास अहाते के शासन का संगठन उसी को सौंपा गया, और सन् १८२० से सन् १८२७ तक वह मद्रास का गवर्नर रहा।

वेल्ज़ली के अधीन काम सीखने वाले नवयुवकों में से मौण्ट स्टुअर्ट एल्फ़िन्स्टन, जान मालकम और चार्ल्स मेटकाफ़ के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके कार्य-क्षेत्र क्रमशः महाराष्ट्र, मध्य भारत तथा उत्तर भारत थे।

एल्फिन्स्टन सन् १८१६ से सन् १८२७ तक मुम्बई का गवर्नर रहा; उसके बाद उसी पद पर मालकम ने काम किया। वेल्ज़ली ने अवध के नवाब से इलाहाबाद, फ़र्रुख़ाबाद तथा रुहेलखंड के इलाके लिये, और इटावा से पच्छिम के जमना-तट के ज़िले शिन्दे से जीते। पहले इनका शासन बंगाल अहाते के अधीन रहा। १८३४ ई० से जब आगरा का अलग प्रान्त बना तो मेटकाफ़ उसका पहला गवर्नर नियत किया गया।

लार्ड विलियम बेण्टिंक सन् १८०३ से १८०७ ई० तक मद्रास का गवर्नर था। वेल्लूर में सिपाहियों का एक बलवा होने पर उसे पदच्युत किया गया था। सन् १८२८ में उसे भारत का गवर्नर-जनरल बना कर भेजा गया। उसके बाद एक बरस (१८३५-३६ ई०) मेटकाफ़ उस पद पर रहा। सर टामस मुनरो ने मद्रास में जिस शासन-योजना का विकास किया प्रायः उसी का अनुसरण एल्फिन्स्टन ने मुम्बई में किया, और फिर उन दोनों की नीति का बेण्टिंक ने समूचे भारत पर प्रयोग किया।

§२. **मद्रास और मुम्बई का रैयतवारी बन्दोबस्त**—बारामहाल का मालगुज़ारी-बन्दोबस्त करते समय मुनरो ने यह देखा कि वहाँ ज़मींदार नहीं थे। उसने वहाँ सीधा किसानों से बन्दोबस्त किया। तब से उसका झुकाव रैयतवारी अर्थात् किसानों से सीधा बन्दोबस्त करने की तरफ़ हो गया।

कम्पनी हर इलाके को अधिक से अधिक दुहना चाहती थी। मालगुज़ारी जितनी बढ़ सके बढ़ायी जाती, और उसे सख्ती से वसूल किया जाता। मलबार में अँगरेज़ अफ़सरों के ऐसा करने पर वहाँ के 'राजाओं' और नायर सरदारों ने विद्रोह किया। उस विद्रोह को कड़ाई से कुचला गया। यों धीरे धीरे मलबार से ज़मींदार प्रायः लुप्त हो गये।

ताजोर के किसान अपने मुखियों द्वारा राजा को मालगुज़ारी दिया करते थे। ये मुखिया पट्टकदार कहलाते थे और धीरे-धीरे ज़मींदार बनते जाते थे। अँगरेज़ों ने सीधा किसानों से बन्दोबस्त किया जिससे पट्टकदारों की सफ़ाई हो गयी।

आरकाट के इलाकों मे अनेक छोटे सरदार थे। उनकी जागीरें पालयम और वे पालयगार कहलाते थे। ये पुराने समया के गांवों के मुखिया या राज्याधिकारियों के वशज थे जो नवाब के अनिच्छुक सामन्त बन गये थे। अनेक राज विप्लवो के बीच यहा देश के वास्तविक शासक रहे थे। इनकी सामरिक शक्ति भी काफी थी। नवाब मुहम्मदअली ने इनके दमन के लिए अनेक बार अँगरेजों से मदद ली। अँगरेजो को भी इन्हे कुचल देना अभीष्ट था। सन् १७६६-१८०० ई० मे इनकी अपने-अपने गाँवो से बाहर की जमीने जब्त करके बाकी जमीनो पर एकाएक ११७ फी सदी मालगुजारी बढा दी गयी। इस

सर टामस मुनरो

पर इन्होंने विद्रोह किया तो इनकी जागीरें जब्त की गयी और बहुतों को फाँसी दे दी गयी। मुनरो ने लिखा— 'कोई आवारा राजा सिर उठायेगा तो मै उसे ठीक कर दूँगा।" सन् १८०२-३ मे बचे खुचे पालयगारों के साथ स्थायी जमींदारी और बाकी इलाको मे रैयतवारी बन्दोबस्त किया गया।

"उत्तरी सरकारों" मे सन् १८०२ से १८०५ तक लार्ड वेल्ज़ली ने जमींदारों से स्थायी बन्दोबस्त करा दिया। वहाँ बहुत सी "हवेली" अर्थात् राजकीय

ज़मीनें भी थीं। उनकी चकबन्दी करके उन चकों की ज़मींदारियाँ नीलाम कर दी गयीं। पुराने ज़मींदार तो पुराने स्थानीय शासक थे और पुरानी परम्परा से चलते थे। पर इन नये ज़मींदारी ख़रीदने वालों ने केवल नफ़े के ख़्याल से पूँजी लगायी थी, इसलिए ये किसानों से अधिक से अधिक लगान लेने लगे।

मद्रास के अधिक हिस्सों में किसानों से सीधा बन्दोबस्त करने का उद्देश्य यह नहीं था कि किसानों के पास उनकी पूरी कमाई बनी रहे, प्रत्युत यह कि उपज का जो हिस्सा ज़मींदार ले जाते, वह भी कम्पनी को मिले। रैयतवारी बन्दोबस्त में भी किसान को ज़मीन का मालिक न माना गया था। ईस्ट इंडिया कम्पनी खुद मालिक बन बैठी थी, और मालिक अपनी पूँजी से जिस नफ़े की आशा करता है, भारत के खेतों से वह नफ़ा वह खुद लेना चाहती थी। किसान उसकी दृष्टि में उसकी "रैयत" थे, जिन्हें मज़दूरी भर मिलनी चाहिए थी। इस प्रकार इस पद्धति में हाकिम रैयत को जो खेत सौंप दे, उसका ज़िम्मा उस रैयत को लेना ही पड़ता था। बाद में नफ़ा न होने से अगर वह खेत को छोड़ कर भागे भी, तो उसका पीछा करके उसे पकड़ा जाता। एक-एक कलक्टर के लिए डेढ़-डेढ़ लाख किसानों के साथ बन्दोबस्त करना सम्भव न था। इसलिए छोटे अमले किसानों पर मनमानी करने लगे।

किसानों की दृष्टि से ज़मींदारी और रैयतवारी दोनों बन्दोबस्त एक समान थे। एक में ज़मींदार ज़मीन के मालिक बन बैठे थे और दूसरे में कम्पनी; किसान दोनों दशा में मालिक के बजाय 'रैयत' बन गये थे। पुराने जागीरदार वास्तव में स्थानीय शासक थे, और जिन किसानों से वे वसूली करते थे, ज़मीन के मालिक वही थे। जागीरदारों की शासन-शक्ति अँगरेज़ों ने तोड़ दी। लेकिन इसके बावजूद बंगाल-बिहार में जब कार्नवालिस ने उन जागीरदारों के साथ ज़मीन का बन्दोबस्त किया तो उसका अर्थ केवल यह था कि स्थानीय शासन के कार्य में से वसूली का काम उन्हें सौंपा गया जिसके बदले में उन्हें १० प्रतिशत कमीशन दिया गया। जिन लोगों के साथ बन्दोबस्त किया

गया था, वे प्रायः मालगुज़ारी-वसूली को नीलामी में ख़रीदने वाले व्यापारी थे। लेकिन धीरे-धीरे उनका वह वसूली का ठेका ज़मीन की मिलकियत बनता गया और "नीलाम ख़रीदने वालों ने जो शक्तियाँ हथया लीं, उनके कारण किसानों के पास किसी अधिकार की परछाँही भी नहीं बची, और एक खुशहाल और समृद्ध कृषक जनता दरिद्रता की सबसे निचली सतह पर जा गिरी।"

उस समय मद्रास बोर्ड आव रेविन्यू ने एक ऐसा प्रस्ताव किया जिससे वहाँ के किसानों को उस गढ़े में गिरने से बचाया जा सकता था। भारतवर्ष में उस समय तक सब जगह गाँवों की पुरानी पंचायतें बनी हुई थीं। मद्रास बोर्ड का प्रस्ताव था कि सरकार प्रत्येक गाँव की पंचायत से मालगुज़ारी का स्थायी बन्दोबस्त कर दे, और गाँव के भीतर उसका बँटवारा तथा उसकी वसूली सब पंचायत पर छोड़ दे। इससे किसानों की मिलकियत भी नष्ट न होती और स्थानीय स्वशासन भी उनके हाथों में बना रहता। लेकिन मुनरो के प्रभाव से यह प्रस्ताव स्वीकृत न हो पाया, और सन् १८२० में, मद्रास प्रान्त में जहाँ-जहाँ ज़मींदारों से स्थायी बन्दोबस्त न हो चुका था, वहाँ अस्थायी रैयतवारी बन्दोबस्त कर दिया गया, और उपज की ४५, ५०, ५५ फ़ी सदी तक मालगुज़ारी तय की गयी। पीछे मुनरो ने इस दर को घटा कर उपज का तिहाई कर दिया।

मुम्बई का विशाल प्रान्त तीसरे मराठा युद्ध के बाद बना। वहाँ भी अनेक जगह कृषक ही ज़मीन के मालिक थे, जो मिराशी या मिराशदार कहलाते थे। जहाँ जागीरदार थे, उनकी शक्ति तोड़ने की भरसक चेष्टा की गयी। गाँवों की पंचायतें सब जगह थीं, जो "आत्म-परिपूर्ण छोटे-छोटे राज्य जैसी थीं।" एल्फिन्स्टन ने मालगुज़ारी का बन्दोबस्त तो सीधा कृषकों से कराया (१८२४–२८ ई०), पर वसूली का काम गाँव के मुखियों को सौंप दिया। इससे वे मुखिया सरकारी नौकर बन गये। पंचायतों के हाथ में कोई सामूहिक कार्य न रह जाने से वे धीरे-धीरे लुप्त होती गयीं।

मुम्बई प्रान्त के इस बन्दोबस्त में बहुत ग़लत माप और पैदावार के बढ़ाये हुए अन्दाज़ के आधार पर उपज की ५५ प्रतिशत मालगुज़ारी नियत की गयी।

कृषकों को भयंकर यातनाएँ दी गयीं; वे घर छोड़ कर भागने लगे। सन् १८३५ ई० में विंगेट ने फिर ३० बरस के लिए बन्दोबस्त किया, जिसमें माप तो ठीक की गयी, पर कर की दर ऊँची ही रही। किसान अपनी ज़मीनें बचाने के लिए सूदखोर महाजनों के पंजों में पड़ने लगे।

§ ३. **ग्राम-पञ्चायतें और अँगरेज़ी शासन-योजना**—कार्नवालिस की चलायी शासन-योजना सफल न हुई थी। मिण्टो और हेस्टिंग्स के समय बंगाल-बिहार के ज़िलों के ज़िलों पर डाकुओं का स्वच्छन्द राज बना रहता था। अँगरेज़ राज-कर्मचारी देश से अपरिचित होने के कारण शासन और न्याय का काम न चला सकते थे।

मद्रास में अब शासन के पुनः संगठन का काम भी सर टामस मुनरो को सौंपा गया। मुनरो ने ये प्रस्ताव किये—(१) गाँव-पंचायतें फिर से संगठित कर गाँवों में पुलिस का प्रबन्ध उन्हीं को सौंप दिया जाय; (२) न्याय-विभाग में भरसक देशी जज नियुक्त किये जाँय; और (३) कलक्टर को मजिस्ट्रेट के अधिकार भी दिये जाँय।

उसकी पहली बात न मानी गयी। दूसरी बात अंशतः मानी गयी और छोटे पदों पर देसियों की नियुक्ति होने लगी। तीसरी बात को कम्पनी के डाइरेक्टरों ने उत्सुकता से स्वीकार किया। उन्हें अपनी आमदनी से मतलब था, इसलिए माल-गुजारी वसूल करने वाले हाकिमों के हाथ में अधिक से अधिक ताक़त देना उन्हें पसन्द था। बाद में बेण्टिंक ने यह योजना समूचे भारत के लिए जारी कर दी।

बम्बई का शासन-संगठन एल्फिन्स्टन ने किया। उसने अँगरेज़ों के चलाये हुए कुल नियम-क़ायदों को स्मृतिबद्ध कर दिया। मुनरो की तरह उसने भी छोटे पदों पर भारतीयों को नियुक्त करने की नीति पकड़ी। उसने शिक्षा फैलाने की भी कोशिश की। उस समय की अनेक ग्राम-पंचायतें पाठशालाएँ भी चलाती थीं। उसने उन शालाओं को पुस्तकें छपवा कर देने का प्रबन्ध किया। लेकिन वे पंचायतें स्वयम् लुप्त होने जा रहीं थीं।

§ ४. **उत्तर भारत का महालवारी बन्दोबस्त**—अवध के नवाब के सौंपे हुए इलाक़े सन् १८०१ ई० में सात ज़िलों में बाँटे गये, और उनकी

मालगुज़ारी एकदम २०-३० लाख रुपया वार्षिक बढ़ा दी गयी। यह घोषणा की गयी कि १० बरस बाद स्थायी बन्दोबस्त किया जायगा। सन् १८०३ में शिन्दे से जीते हुए इलाक़े के ५ ज़िले बनाये गये और वहाँ भी ऐसी ही घोषणा की गयी। उस युद्ध और मालगुजारी बढ़ाने का परिणाम सन् १८०४ का दुर्भिक्ष हुआ।

सर चार्ल्स मेट्काफ़
दिल्ली मे अंकित समकालीन चित्र
[दिल्ली म्यू०, भा० पु० वि०]

मिण्टो और हेस्टिंग्स दोनों ने अपने-अपने शासन-काल में इन इलाक़ों में स्थायी बन्दोबस्त कर डालने का अनुरोध किया। लेकिन डाइरेक्टरों ने फ़ैसला किया कि वैसा न होगा।

यह फ़ैसला हो जाने पर सन् १८२२ ई० में उत्तर भारत तथा भोंसले से जीते गये कटक प्रदेश के मालगुज़ारी बन्दोबस्त के लिए यह योजना बनायी गयी कि कुल ज़मीन-मिलकियत की जाँच की जाय, और एक-एक "महाल" अर्थात् जायदाद की एक-एक इकाई पर सरकारी "जुम्मा" तय कर दिया जाय। जहाँ जमींदार हों, वहाँ जमींदारों से और जहाँ किसानों की ज़मीनें हों वहाँ गाँव के मुखियों से बन्दोबस्त किया जाय। इन मुखियों का कलक्टर के रजिस्टर में नम्बर रहता था इससे ये नम्बरदार कहलाये।

यह योजना भी एक अरसे तक सफल न हुई। सरकार की माँग इतनी अधिक थी कि किसान और जमींदार दे न पाते थे। मिलकियत की जाँच में लोग सहयोग न देते थे। सन् १८३० में मेटकाफ़ ने प्रस्ताव किया कि पंचायतों को बनाये रक्खा जाय और व्यक्तिशः किसानों से बन्दोबस्त न किया जाय। सरकार ने यह स्वीकार नहीं किया। सन् १८३३ में बेंटिंक ने मालगुज़ारी की दर घटा दी। उसके अनुसार रौबर्ट बर्ड ने

सन् १८३३ से १८४६ तक इन इलाक़ों का ३० साल के लिए बन्दोबस्त किया।

सागर और नर्मदा प्रदेश अर्थात् आजकल का हिन्दी मध्य प्रान्त सन् १८१८ में अँगरेज़ी शासन में आया। सन् १८६१ ई० तक उसका शासन कभी सीधा भारत-सरकार के और कभी उत्तर-पच्छिमी प्रान्त (आधुनिक युक्त प्रान्त) के अधीन रहा। शुरू में वहाँ त्रिवार्षिक और पंचवार्षिक बन्दोबस्त होता रहा। मराठा सरकार जितनी मालगुज़ारी लेती थी, अँगरेजों ने एकदम उससे सातगुनी कर दी। सन् १८३५-३६ में २०-वार्षिक बन्दोबस्त किया गया, पर मालगुज़ारी की दर तब भी मराठा दर से तिगुनी रही। फल यह हुआ कि "परगने मानो मुर्दा हो गये। ऐसी बरबादी हुई कि मानव जीवन के चिन्ह न दिखायी देते थे।"

§ ५. **नमक और अफ़ीम का एकाधिकार**—कम्पनी ने जो भी नया प्रदेश पाया वहाँ क्लाइव की नीति का अनुसरण करते हुए नमक और अफ़ीम के कारोबार पर अपना एकाधिकार रक्खा।

§ ६. **शिक्षा, क़ानून और अन्य सुधार**—कलकत्ते में पहले-पहल सन् १८१७ में डैविड हेयर नामक एक घड़ीसाज़ ने एक अँगरेज़ी स्कूल खोला। सन् १८२३ में कम्पनी की सरकार ने शिक्षा के लिए कुछ ख़र्च मंज़ूर किया। कलकत्ते में एक "मदरसे" की स्थापना सन् १७८५ में और बनारस में संस्कृत कालेज की स्थापना सन् १७६१ में ही हो चुकी थी। अब दिल्ली और आगरा में भी कालेज खोले गये, और संस्कृत और अरबी की कुछ पुस्तकें छापी गयीं।

सन् १८३३ में कम्पनी को नया चार्टर मिलने पर शिक्षा के सम्बन्ध में एक कमिटी बैठायी गयी। मैकाले उसका सभापति था। भारतवासियों को कैसी शिक्षा दी जाय, यह प्रश्न उस कमिटी के सामने था। कमिटी में कुछ ऐसे अँगरेज़ थे जो संस्कृत, फ़ारसी आदि "प्राच्य" भाषाओं का अध्ययन और "प्राच्य" पुरातत्व की खोज करते थे। इनका मत था कि इन्हीं भाषाओं और इनके पुराने साहित्यों द्वारा भारतीय युवकों को शिक्षा दी जाय।

दूसरा पक्ष पाश्चात्य शिक्षा वालों का था। बंगाल में उन्नीसवीं शती के आरम्भ में (१७७४-१८३३ ई०) राममोहन राय नामक एक सुधारक प्रकट हुए थे उनका कहना था कि भारतवासियों को "प्राच्य" शिक्षा से वैसा लाभ न होग, जैसा युरोपियन गणित विज्ञान आदि की शिक्षा देसी भाषाओं में पाने से होगा।

मैकाले ने "प्राच्य" शिक्षा का मज़ाक उड़ाया और पाश्चात्य पक्ष का साथ दिया। पर उसने पश्चिमी विज्ञान के बजाय अँगरेजी भाषा और साहित्य की शिक्षा पर ही ज़ोर दिया, और इस बात की उपेक्षा की कि देशी भाषाओं द्वारा भी शिक्षा दी जा सकती थी। वास्तव में भारतीयों की शिक्षा के लिए ठीक मार्ग यही था कि देसी भाषाओं में पाश्चात्य विज्ञान को अपना लिया जाता। मैकाले का एक और प्रयोजन भी था—"जहाँ हमारी भाषा जायगी, वहाँ हमारा व्यापार भी पहुँचेगा।" अन्त में अँगरेज़ी पक्ष की जीत हुई। तब से अँगरेज़ी स्कूलों-कालेजों की स्थापना होने लगी।

सन् १८३३ ई० के नये चार्टर के अनुसार कम्पनी का व्यापार उठा दिया गया; अब से उसका काम केवल शासन रह गया। भारत में व्यापार करने तथा बसने के लिए सब अँगरेज़ों को स्वतन्त्रता और प्रोत्साहना दी गयी। भारत की मुल्की सेवा (सिविल सर्विस) में भाग लेने वाले युवकों की शिक्षा के लिए इंगलैंड में प्रबन्ध किया गया। तब तक तीनों प्रान्तों के गवर्नर अलग-अलग क़ायदे (रेगुलेशन) बनाते थे। अब यह तय हुआ कि समूचे भारत के लिए गवर्नर-जनरल क़ानून बनाया करे। क़ानूनों के मसविदे तैयार करने को गवर्नर-जनरल की कौंसिल में एक अतिरिक्त मेम्बर नियत किया गया। पहलेपहल यह पद मैकाले को मिला। मैकाले ने इस पद पर रहते हुए भारतीय दण्ड-विधान (इंडियन पिनल कोड) का मसविदा तैयार किया।

लार्ड विलियम बेण्टिंक ने मुनरो और एल्फिन्स्टन का अनुसरण करते हुए भारतवासियों के लिए छोटे ओहदे खोल दिये। मालगुज़ारी की दर बेण्टिंक ने सब जगह कम की। तब तक देश के भीतरी व्यापार पर जगह-जगह चुंगी लगती थी। बेण्टिंक ने बंगाल से कुल चुंगी-चौकियाँ उठा दीं।

राजा राममोहन राय ने सती प्रथा के खिलाफ़ आन्दोलन उठाया था। बेण्टिंक ने एक क़ायदे द्वारा उस प्रथा को रोक दिया। समूचे भारत के रास्तों पर तब ठग लोग यात्रियों को लूटते-मारते थे। बेण्टिंक ने कर्नल स्लीमन को उनके उन्मूलन का काम दिया। तब तक फ़ारसी अदालती भाषा थी। बेण्टिक ने अँगरेज़ी और प्रान्तीय भाषाओं को वह स्थान दे दिया।

§ ७. **बेण्टिक के समय की राजनीतिक घटनाएँ**—मैसूर के जिस शिशु राजा को वेल्ज़ली ने स्थापित किया था, बेण्टिंक ने उसे पेन्शन दे कर अलग कर दिया (सन् १८३१ ई०); अगले ५० वर्ष मैसूर का शासन अँगरेज़ों के हाथ में रहा। कछार और 'कुर्ग' (कोड्गु) राज्यों की भीतरी अव्यवस्था से लाभ उठा कर बेण्टिंक ने उन्हें ज़ब्त कर लिया। 'कुर्ग' की पहाड़ी भूमि अँगरेज़ों के बसने के लिए उपयुक्त समझी गयी। वहाँ बहुत से अँगरेज़ क़हवे की काश्त कराने को बस गये।

दौलतराव शिन्दे सन् १८२७ ई० में मर चुका था। उसकी विधवा बायजा-बाई बालक राजा जनकोजी के नाम पर शासन चलाती थी। बेण्टिक ने चाहा कि राजा पेन्शन ले कर राज्य छोड़ दे। लेकिन ग्वालियर का रेज़िडेण्ट कैवेंडिश इस षड्यन्त्र से सहमत न हुआ और उसने "आगरा को बम्बई से जोड़ देने का सुयोग खो दिया।"

जयपुर और जोधपुर राज्यों के मामलों में भी बेण्टिंक ने दख़ल दिया और साँभर ज़िले तथा साँभर झील पर कुछ समय के लिए क़ब्ज़ा कर लिया।

सन् १८३० ई० से अँगरेज़ सतलज से आगे बढ़ने का आयोजन भी करने लगे।

अध्याय ३

उत्तर-पच्छिमी सीमान्त की ओर बढ़ना

(१८३०-१८४६ ई०)

§१. **मध्य एशिया में रूसी और अँगरेज़ अग्रदूत**—हम देख चुके हैं* कि १५वीं-१६वीं शती में रूसियों ने अपने देश के पूरबी भाग से मंगोलों को निकाल दिया था। उसी प्रसंग में वे यूराल से पूरब बढ़ते गये। सन् १५८० ई० में उन्होंने इर्तिश नदी के निचले काँठे में सिबिर नामक क़सबे पर दख़ल कर लिया। वहाँ से पूरब तरफ़ निर्जन बर्फ़ीले प्रदेशों पर अधिकार जमाते हुए सन् १६३९ में वे ओखोत्स्क समुद्र तक जा पहुँचे। सिबिर के नाम से इस विशाल प्रदेश का नाम उन्होंने सिबिरिया रक्खा। १७ वीं शती के मध्य तक उनका साम्राज्य दक्खिन तरफ़ बैकाल झील तक पहुँच गया। १९वीं शती के शुरू से वे कोह काफ़ के रास्ते ईरान को दबाने लगे और उनके अग्रदूत मध्य एशिया में पहुँचने लगे। सन् १८१५ में एक रूसी व्यापारी लदाख के राजा तथा रणजीतसिंह के नाम रूसी अमात्य की चिट्ठियाँ ले कर आया।

इधर अँगरेज़ अग्रदूत भी अब भारत से मध्य एशिया को जाने लगे। सन् १८१९ में मूरक्राफ़्ट नामक अँगरेज़ पंजाब-लदाख के रास्ते यारक़न्द और बुखारा की यात्रा के लिए रवाना हुआ। उसके बाद कई अँगरेज़ों ने मध्य एशिया की यात्रा की।

नैपोलियन के पतन के बाद फ्रान्स और इंगलैंड की पुरानी स्पर्द्धा ख़त्म हुई, और रूस तथा इंगलैंड में यह नयी स्पर्द्धा शुरू हो गयी।

---

*ऊपर, पृ० ३१५।

§ २. **सिन्धु-नौचालन-योजना**—सिन्ध प्रान्त उत्तर-पच्छिमी देशों की कुंजी है। मुलतान-डेराजात जीतने के बाद से रणजीतसिंह उसे ले लेने का मौक़ा देख रहा था; शिकारपुर पर तो उसका ख़ास तौर से दावा था। इधर अँगरेज़ भी सिन्ध पर घात लगाये हुए थे। सिन्ध नदी की जाँच करने का उन्होंने अब एक अच्छा बहाना बनाया। इंगलैंड के राजा की तरफ़ से रणजीतसिंह को भेंट करने के लिए एक गाड़ी और घोड़े बम्बई भेजे गये, और उन्हें सिन्ध और रावी नदियां द्वारा लाहौर भेजना तय हुआ! जब लेफ्टिनेण्ट बर्न्स इस बेड़े को ले कर सिन्ध में घुसा (१८३१ ई०) तो नदी के किनारे एक सैयद ने हाथ उठा कर कहा, "सिन्ध अब गया! अँगरेज़ों ने हमारी नदी को देख लिया!"

रणजीत भी अँगरेज़ां की इस चाल से बेचैन हो सिन्ध की सीमा पर अपना अधिकार दृढ़ करने लगा। उसकी रोकथाम करने को बेंटिक रोपड़ में उससे मिला (अक्टूबर १८३१ ई०)। रोपड़ आने से पहले वह कर्नल पौटिंजर को सेना के साथ हैदराबाद भेज चुका था। सिन्ध के अमीरों को यह सन्धि करने को बाधित किया गया कि वे अँगरेज़ी जहाज़ों के लिए सिन्ध नदी को खुला रक्खेंगे और उसमें गोदी (डौक-यार्ड) स्थापित करेंगे; परन्तु इसके साथ यह शर्त थी कि कोई जंगी सामान या बेड़ा सिन्ध में से न गुज़रेगा। यह हो जाने पर रणजीत से लाहौर में कहा गया कि वह भी सिन्ध-सतलज-संगम के ऊपर सतलज में अँगरेज़ी नावों के लिए वैसी ही सुविधा कर दे। उससे यह भी कहा गया कि ब्रिटिश सरकार उसे शिकारपुर जीतने की इजाज़त नहीं दे सकती। रणजीत इस पर बहुत झुँझलाया, तो भी उसने सतलज का रास्ता खोल दिया। सिन्ध के मुहाने से रोपड़ तक अब अँगरेज़ी स्टीम-बोटें चलने लगीं। मिट्ठनकोट (सिन्ध-सतलज-संगम के नीचे) तथा हरीके-पत्तन (व्यास-सतलज-संगम पर) के सामने अँगरेज़ कारिन्दे इस व्यापार की देखभाल के लिए रहने लगे।

§ ३. **बर्न्स की मध्य एशिया यात्रा**—सन् १८३२ के शुरू में बर्न्स तीन साथियों के साथ दिल्ली से मध्य एशिया की यात्रा के लिए

निकला। पंजाब अफगानिस्तान हो कर वह बोखारा तक गया और सन् १८३३ में वापिस आ कर इंगलैंड चला गया। वहाँ उसका बड़ा स्वागत हुआ। इंगलैंड का राजा विलियम चतुर्थ भी उससे मिला और उसकी कहानी बड़ी रुचि से सुनने के बाद कहा, "तुम्हारा जीवन बना रहे, हमारे पूरबी साम्राज्य का लाभ हो।" सन् १८३५ में बर्न्स भारत लौट आया।

बर्न्स मध्य एशिया वेष में

§४. सिक्ख राज का दक्खिन और पच्छिम से घेरा जाना—(अ) शाहशुजा की अफ़ग़ानिस्तान पर दूसरी* चढ़ाई (१८३३ ३५ ई०)—इस सिलसिले में अँगरेजी सरकार ने शाहशुजा को रुपये की मदद दे कर फिर अफगानिस्तान पर चढ़ाई करने दी। उस उथलपुथल में कोई न कोई पक्ष अँगरेजों की शरण माँगेगा, सो निश्चित ही था।

रणजीतसिंह के तटस्थ रहे बिना शाहशुजा चढ़ाई न कर सकता था, इसलिए उसने उससे सन्धि की और सिन्ध पार के उसके जीते सब इलाक़े उसे विधिवत् दे दिये। शाह लुधियाने से बहावलपुर के रास्ते सिन्ध में घुसा

*लुधियाना आने के बाद से यह शाहशुजा की दूसरी चढाई थी, सन् १७९० और १८१५ में भी वह प्रयत्न कर चुका था, उन्हें भी गिनें तो यह चढाई चौथी थी।

और शिकारपुर के पास सिन्धियों को हरा कर क़न्दहार की ओर बढ़ा। रणजीतसिंह ने सोचा कि काबुल में सफल होने पर शाह का रुख़ शायद बदल जाय, इसलिए उसने सेनापति हरिसिंह नलवा को भेज कर पेशावर को अपने सीधे शासन में ले लिया।

क़न्दहार पर शाहशुजा और ख़ैबर पर हरिसिंह को देख दोस्त-मुहम्मद ने अँगरेज़ों से शरण माँगी। लेकिन १-७-१८३४ ई० को उसने कन्दहार के पास शाह को हरा दिया, और तब अँगरेज़ों को भूल गया। शाह शुजा लुधियाना लौट आया।

इ. सिन्ध के लिए स्पर्द्धा (१८३५-३७ ई०) —शाहशुजा के लौटने पर शिकारपुर के शासक ने अपने को रणजीतसिंह की रक्षा में सौंपना चाहा। रणजीत के पोते नौनिहालसिंह की अधीनता में पंजाबी सेना सिन्ध की सीमा पर आ जुटी। तब अँगरेज़ों ने दख़ल दे कर कहा कि हैदराबाद में अब से अँगरेज़ रेज़िडेण्ट रहेगा और वही सिन्धियों के बाहरी मामलों का नियन्त्रण करेगा। रणजीत के सरदारों ने उससे आग्रह किया कि अँगरेज़ों की न सुने, लेकिन उसने सिर हिलाया और कहा, "मराठों के दो लाख भाले (अँगरेज़ो के मुक़ाबले में) कहाँ गये ?" और फिर उस मामले को भूल जाने के लिए उसने उसी नौनिहाल की शादी पर, जो सिन्ध का विजेता होता, गवर्नर-जनरल को निमन्त्रित किया। गवर्नर-जनरल के बजाय जंगी लाट सर हेनरी फ़ेन शादी में सम्मिलित हुआ (मार्च १८३७ ई०)। उस मौक़े पर उसने पंजाब की शक्ति का अन्दाज़ लगा लिया और उसके अधीन एक अफ़सर ने लाहौर इलाक़े का पूरा नक़शा बना लिया जो अगले युद्ध में बहुत काम आया।

उ. सिक्ख-अफ़ग़ान युद्ध (सन् १८३५-३७ ई०)—शाह शुजा को भगाने के बाद दोस्त मुहम्मद ने सिक्खों के खिलाफ़ युद्ध-घोषणा की। वह ख़ैबर पार तक आया। ११ मई सन् १८३५ को रणजीत ने उसे प्रायः घेर लिया; तब वह लड़े बिना भाग निकला।

हरिसिंह ने ख़ैबर से आगे बढ़ने को जमरूद की क़िलाबन्दी की। दोस्त मुहम्मद के बेटे अकबरख़ाँ ने जमरूद पर हमला किया। ३०-४-१८३७ ई०

की लड़ाई में हरिसिंह मारा गया और सिक्खों की हार हुई। लेकिन अफ़गान जमरूद को ले न सके और पीछे हट गये। रणजीत ने शीघ्र बड़ी कुमुक भेजी और खुद रोहतास तक आ गया। वह दोस्त मुहम्मद को अँगरेज़ों के हाथ में न जाने देना चाहता था, इसलिए उसे मना कर सन्धि की। पर इस बीच अँगरेज़ दूत भी काबुल पहुँच चुका था, और उसने सिक्खों-अफ़गानों के मामले में दख़ल देना चाहा। रणजीत ने देखा कि अँगरेज़ अब उसे पच्छिम तरफ़ भी रोकना और घेरना चाहते हैं।

ऋ. काबुल में अँगरेज़ 'वाणिज्य'-दूत—सन् १८३६ में लार्ड ऑकलैंड भारत का गवर्नर-जनरल बन कर आया। उसने बर्न्स को अँगरेज़ी 'वाणिज्य-दूत' बना कर काबुल भेजा। दोस्तमुहम्मद ने चाहा कि अँगरेज़ उसे पेशावर का इलाक़ा रणजीतसिंह से वापिस दिला दें। बर्न्स ने उसे अँगरेज़ों की मदद मिलने की आशा दिलायी।

तभी ईरानियों ने रूसियों की मदद से हरात को घेर लिया और रूसी दूत काबुल पहुँचा। कर्नल पौटिंजर मुस्लिम फ़कीर का वेष धारण कर हरात के क़िले में जा घुसा और क़िले के रक्षकों का नेता बन उसने बहादुरी से ईरानियों का मुक़ाबला किया।

बर्न्स ने दोस्तमुहम्मद को आशाएँ तो बहुत दिलायीं, पर उन्हें पूरा न कर सका। कारण यह हुआ कि उसकी सरकार का रुख़ तब और ही था। वह एक भारी षड्यन्त्र पका रही थी। तब वह काबुल से वापिस लौट आया। उधर भारत से एक जंगी बेड़ा ईरान की खाड़ी में पहुँचा, जिससे डर कर ईरानियों ने हरात का घेरा उठा दिया (९-९-१८३८ ई०)।

ऌ. सिक्खों का लदाख जीतना—अँगरेजों ने सिक्ख राज्य की प्रगति पूरब, दक्खिन तथा पच्छिम तरफ़ रोक दी, पर वह उत्तर तरफ़ हिमालय के बाँध को पार कर बढ़ने लगा। गुलाबसिंह नामक एक डोगरा* राजपूत एक

*रावी और चिनाब के बीच हिमालय की तराई, जिसका मुख्य नगर जम्मू है, डुग्गर कहलाती है, और उसके निवासी डोगरे।

सिपाही के रूप में रणजीतसिंह की सेना में भरती हुआ था। अपनी योग्यता के बल पर उसने धीरे-धीरे जम्मू की जागीर प्राप्त की। उसके छोटे भाई ध्यानसिंह और सुचेतसिंह भी ऊँचे पदों पर पहुँचे। तीनों को राजा का पद मिला। बाद में रावी से जेहलम तक सारे पहाड़ी इलाकों का शासन उन्हें सौंपा गया। गुलाबसिंह के अधीन किश्टवार के सेनापति ज़ोरावरसिंह ने १८३५ ई० में तिब्बत के सबसे पच्छिमी प्रान्त लदाख पर चढ़ाई की और उसे जीत लिया।

§५. **त्रिपक्ष सन्धि**—उत्तरपच्छिमी भारत के प्रश्न पर अँगरेज़ राजनीतिज्ञों में इस समय तीन विचार-धाराएँ प्रचलित थीं। एक मत यह था कि सतलज और थर अँगरेज़ी राज की बहुत अच्छी सीमाएँ हैं; और यदि रूस का प्रभाव अफ़ग़ानिस्तान तक पहुँच भी जाय तो भी सिक्खों की मैत्री पर भरोसा रखना चाहिए। दूसरा मत बर्न्स का था। वह यह कि अँगरेज़ों को अफ़ग़ानिस्तान से मैत्री करके रूस की दाल वहाँ न गलने देनी चाहिए। "वेल्ज़ली ने अफ़ग़ानों पर ईरान द्वारा दबाव डलवाया था, अब हम सिक्खों द्वारा डाल रहे हैं; क्यों न हम अफ़ग़ानों से सीधा सम्बन्ध रक्खें ?" लेकिन लन्दन और शिमला के राजनेताओं को न सिक्खों से प्रेम था, न अफ़ग़ानों से; उन्होंने एक हिम्मत की कल्पना की थी। कल्पना यह थी कि शाहशुजा को मीरजाफ़र बना कर काबुल की गद्दी पर बैठाया जाय, जिससे एक ही मार में अफ़ग़ानिस्तान अँगरेज़ों के हाथ की कठपुतली बन जाय, सिन्ध शाह के नाम पर उनके क़ाबू में आ जाय और पंजाब तीन तरफ़ से घिर जाय !

परन्तु रणजीतसिंह की सहमति के बिना यह योजना न चल सकती थी। इसलिए गवर्नर-जनरल का कौंसिलर मैकनाटन, जो कि इस षड्यन्त्र का दिमाग़ था, सन् १८३८ की गरमी में रणजीत के पास गया। शाहशुजा कई बार पहले भी अपनी गद्दी वापिस लेने के लिए रणजीत से मदद माँग चुका था, और उन दोनों के बीच सन्धि का मसविदा भी तैयार हो गया था। पर वह बात इस आशंका से टल गयी थी कि अँगरेज़ न जाने इस मामले में क्या रुख़ लें। रणजीत ने पहले समझा, अँगरेज़ अब उस योजना के

लिए सहमति दे रहे हैं। लेकिन जब उसे मालूम हुआ कि वे इसमें सचेष्ट भाग लेंगे, और पंजाबी सेना के बजाय अँगरेज़ी सेना ही शाहशुजा को काबुल ले जायगी, तब वह बातचीत अधूरी छोड़ कर चल दिया। मैकनाटन ने जब उसे सन्देश भेजा कि वह भाग ले या न ले, काबुल पर चढ़ाई होगी ही, तब वह बड़ी अनिच्छा से षड्यन्त्र में शामिल हुआ। अँगरेज़ों का यह आग्रह था कि चढ़ाई दो तरफ़ से हो—पंजाब से और सिन्ध से, और साथ ही यह कि अँगरेज़ी सेना शाहशुजा के साथ सिन्ध के रास्ते से जाय। इसमें उनके दो मतलब थे, एक तो वे शाह को रणजीत के हाथ में नहीं देना चाहते थे, और दूसरे, इस बहाने वे सिन्ध को पूरी तरह क़ाबू में कर लेना चाहते थे।

§ ६. **अफ़ग़ानिस्तान पर चढ़ाई**—फ़ीरोज़पुर में अँगरेज़ी सेना जमा हुई और शाहशुजा को साथ लिये नये जंगी लाट सर जौन कीन की नायकता में सतलज के बायें-बायें सिन्ध में घुसी। मैकनाटन तथा बर्न्स उसके साथ थे। सिन्ध में उस फ़ौज के दाख़िल हो जाने पर सिन्ध के अमीरों से एक बड़ी रक़म ली गयी तथा उनसे इक़रार कराया गया कि आगे से वे सिन्ध में एक 'आश्रित' ब्रिटिश सेना रक्खेंगे। ख़ैरपुर के अमीर ने बक्खर का क़िला अँगरेज़ों को "उधार" दिया।

दर्रा बोलन को पार कर इस सेना ने कन्दहार और ग़ज़नी फ़तह कर लिये। दोस्त-मुहम्मद काबुल से भाग गया। अगस्त सन् १८३६ में ब्रिटिश सेना ने शाहशुजा को काबुल की गद्दी पर बैठा दिया। तभी रूसियों ने मध्य एशिया में खीवा के राज्य पर चढ़ाई की, लेकिन वे उसमें पूरी तरह विफल हुए (नवम्बर १८३६ ई०)।

उधर शाहशुजा का बेटा तैमूर लुधियाना के अँगरेज़ एजेण्ट के साथ सिक्खों की रक्षा में पंजाब के रास्ते बढ़ा। लेकिन सिक्खों और अँगरेज़ों का भीतर-भीतर संघर्ष चल रहा था। लार्ड आकलैंड रणजीतसिंह के पास आया और उसे इस बात के लिए राज़ी किया कि अफ़ग़ानिस्तान से अँगरेज़ी सेना पंजाब के रास्ते लौट सके। तभी रणजीतसिंह की मृत्यु हो गयी (२७-६-१८३६ ई०)।

§ ७. **कुमार नौनिहालसिंह**—रणजीतसिंह की मृत्यु पर उसका बेटा खड़गसिंह महाराजा तथा ध्यानसिंह वज़ीर बना। खड़गसिंह जितना ढीला था, उसका उन्नीस बरस का बेटा नौनिहालसिंह उतना ही तेजस्वी था। राज्य की सब बागडोर नौनिहाल के हाथ में चली गयी।

लार्ड कीन की सेना तब पंजाब हो कर लौटी और नौनिहाल को उसे रास्ता देना पड़ा, लेकिन अँगरेज़ी और पंजाबी सेना एक दूसरे को शत्रु की तरह घूरती रहीं। दोस्त-मुहम्मद और उसके पठान विद्रोह की तैयारी कर रहे थे। नौनिहाल उन्हें मदद देने लगा। दूसरी तरफ़ वह नेपालियों से अँगरेज़ों के ख़िलाफ़ सहयोग करने लगा।

नेपाल का राजा गीर्वाणयुद्धविक्रम सन् १८१६ ई० में नौजवान ही मर गया था। उसका बेटा तब दो बरस का बच्चा था। राज्य की बागडोर सन् १८३७ ई० तक भीमसेन थापा के ही हाथ में रही। इस बीच नेपाल में अँगरेज़ों के खिलाफ़ युद्ध-भावना बराबर बनी रही और नेपाली दूत न केवल भारत के देशी राज्यों को, प्रत्युत भूटान, बरमा और चीन को भी उभाड़ने की कोशिश करते रहे। १८३७ ई० में भीमसेन का भतीजा मातबरसिंह पंजाब पहुँचा। उसी बरस नेपाल के राजा ने भीमसेन को क़ैद में डाल दिया, और राज में दूसरा पक्ष प्रबल हुआ। लेकिन अँगरेज़ों के प्रति उसकी भी वही नीति रही। इसी समय लदाख के सिक्ख शासक ज़ोरावरसिंह ने बोलौर (राजधानी स्कर्दू) को जीत लिया, और लदाख से पूरब के तिब्बती इलाक़ों को लेते हुए नेपाल की तरफ़ बढ़ने लगा।

५ नवम्बर १८४० ई० को महाराजा खड़गसिंह की मृत्यु हुई। नौनिहाल अपने पिता की अन्त्येष्टि-क्रिया करके लौटता था जब एक छत के गिरने से उसकी जान जाती रही। तभी दोस्त मोहम्मद ने भी आत्मसमर्पण कर दिया और उसे क़ैद कर कलकत्ते पहुँचाया गया।

§८. **सिक्ख सेना की शक्ति का उदय**—नौनिहालसिंह की मृत्यु पर उसकी माँ चन्दकौर राज करने लगी। रणजीत का दत्तक पुत्र शेरसिंह उसका प्रतिनिधि तथा ध्यानसिंह वज़ीर रहा। लेकिन चन्दकौर पर अतरसिंह

तथा अजीतसिंह सिंधनवाला सरदारों का प्रभाव था जिनसे शेर और ध्यान की बनती न थी। वे दोनों लाहौर से हट गये और बहुत सी सेना को मिला कर उन्होंने जनवरी १८४१ ई० में लाहौर को आ घेरा। चार दिन बाद समझौता हुआ। चन्दकौर को जागीर दी गयी, शेरसिंह महाराजा बना, तथा सेना का वेतन एक रुपया मासिक बढ़ गया। सिन्धनवाले भाग कर अँगरेज़ो की शरण में पहुँचे।

लेकिन सेना अब शेरसिंह के काबू में न रही। वह जहाँ-तहाँ जिन अफ़सरो और दूसरे लोगों से नाराज़ थी, उनसे बदला चुकाने लगी। लोग डरने लगे कि सारे पंजाब में लूट मचेगी; अमृतसर के व्यापारी अँगरेज़ों की रक्षा की पुकार करने लगे। अँगरेज़ो ने भी मौके से लाभ उठाना चाहा। मैकनाटन ने शाहशुजा के नाम पर पेशावर और डेराजात का लेना चाहा। लुधियाने का पोलिटिकल एजेण्ट महाराजा शेरसिंह की "मदद" के लिए लाहौर पर चढ़ाई करने को तैयार हो गया। जब रणजीतसिंह का विश्वस्त सेवक फ़कीर अज़ीज़ुद्दीन यह प्रस्ताव ले कर आया तो शेरसिंह ने उसके मुँह पर हाथ रख कर अपनी गर्दन पर अँगुली फेरते हुए संकेत किया कि चुप रहो, ऐसी बात मुँह से निकालोगे तो सेना मेरी गरदन उतार लेगी।

लेकिन सेना शीघ्र शान्त हो गयी और उसने कोई लूट-मार न की। सिक्ख सेना निरी भाड़े की टट्टू न थी; उसके अन्दर एक उच्च भाव भी था। उसकी विभिन्न टुकड़ियों की पंचायतें बन गयीं थीं जो अपने को "खालसा" या सिक्ख जनता का प्रतिनिधि और उसके हितों का रक्षक समझती थीं। अपनी स्वतन्त्रता के लिए वे सजग थीं और अपनी जत्थाबन्द एकता और नियन्त्रण का उन्हें अभिमान था। साधारण बातों में वे नियुक्त अफ़सरों के आदेश मानती रहीं, पर देश के शासन में अपनी समझ के अनुसार दख़ल देने लगीं। पंजाब की यह सेना अधिकतर सिक्खों की थी, पर उसमें हिन्दू और मुसलिम सैनिक और अफ़सर भी काफ़ी थे। अँगरेज़ और उनके कारिन्दे पंजाब की स्वतन्त्रता हरना चाहते हैं, यह भाव सेना में फैल गया था, और उनके प्रति वह बड़ी सशंक थी।

कश्मीर में सेना ने अपने अफ़सर को मार डाला था। वहाँ शान्ति-स्थापना के लिए राजा गुलाबसिंह को भेजा गया। तब से कश्मीर के शासन को भी उसने अपने क़ाबू में कर लिया। नौनिहाल की नीति पर चलते हुए उसने पठानों और नेपालियों से मेल रक्खा। मई-जून सन् १८४१ में ज़ोरावरसिंह ने सिन्ध और सतलज के स्रोतों की दूनें जीत कर मानसरोवर के पास छावनी डाल दी और हिमालय के उस पार पंजाब और नेपाल की सीमाएँ मिला दीं! मैकनाटन पेशावर लेना चाहता था; पंजाब-सरकार ने गुलाबसिंह को पेशावर सौंपना तय किया।

उस दशा में अँगरेज़ों ने महाराजा शेरसिंह पर दबाव डाल कर उसे मना लिया कि गुलाबसिंह को पेशावर न दिया जाय तथा ज़ोरावरसिंह तिब्बतियों को गारतोक वापिस दे दे। इससे पहले कि महाराजा का हुक्म जोरावर के पास पहुँचता, ल्हासा की चीनी सेना ने पूस के जाड़े में उसे आ घेरा। बर्फ़ में ठिठुरते हुए सिक्ख सैनिक अपनी बन्दूकों के कुन्दे जला कर हाथ गरमाने लगे। ज़ोरावर उस [illegible] मारा गया और नेपाल की सीमा वाली सेना तहसनहस हो गयी। मानसर[illegible] के पास ज़ोरावर की समाध है जिसे तिब्बती अब भी [illegible]जते हैं।

§ ६. अफ़ग़ानों का विद्रोह—अँगरेज़ों ने अफ़गानिस्तान के मुख्य-मुख्य शहरों में छावनियाँ डाल दीं थीं, तो भी देश को काबू में न कर सके। दो बरस में न तो वे देश का बन्दोबस्त कर सके, और न वहाँ से फ़ौज भरती कर सके। शिया-सुन्नियों के बीच "निफ़ाक फैलाने" और अफ़गानों की भाड़े की सेना खड़ी करने की मैकनाटन की सब कोशिशें बेकार हुईं। फलतः अफ़ग़ानिस्तान को क़ाबू में रखने को बराबर भारत से फ़ौज लानी पड़ती और भारत के ख़र्च से शासन चलाना पड़ता। इसके अलावा, अफ़ग़ान अँगरेज़ों की बड़ी फ़ौज का मुक़ाबला न करते, पर उनकी छोटी टुकड़ियों और उनके रसद-सामान पर बराबर छापे मारते थे।

निष्फलता की खीझ से अँगरेज़ों की ऐंठ बढ़नी लगी। मैकनाटन, हरात और पेशावर जीतने की धुन में था। काबुल के अँगरेज़ अफ़सरों ने अनेक

अफ़ग़ान परिवारों की इज़्ज़त ख़राब की। इस बात को काबुली भूलने वाले न थे। २ नवम्बर १८४१ ई० को उन्होंने बर्न्स का मकान घेर लिया और उसे सड़क पर खींच कर मार डाला। काबुल के अँगरेजों ने मदद के लिए कन्दहार और गन्दमक सन्देश भेजे; पर कोई मदद न आयी। इस बीच उनकी रसद भी अफ़ग़ानों ने छीन ली। तब ११ दिसम्बर को मैकनाटन ने अकबरख़ाँ से यह सन्धि की कि अँगरेजों को अफ़ग़ानिस्तान से लौटने दिया जाय तो वे दोस्त मोहम्मद को छोड़ देंगे। अकबरख़ाँ ने ओल माँगे। अभी यह बात-चीत चलती थी कि मैकनाटन ने फिर अफ़ग़ान सरदारों को अकबर ख़ाँ के ख़िलाफ़ भड़काना चाहा। मैकनाटन और अकबरख़ाँ का मिलना तय हुआ। अकबर ने इन तुच्छ षड्यन्त्रों के बारे में उससे सफ़ाई तलब की, तब दोनों गर्म हो उठे। मैकनाटन वहीं मारा गया।

अमीर दोस्त मुहम्मद

इसके बाद जनवरी में फिर अफ़ग़ानों से एक सन्धि कर, पनी अतोपें और रसद उन्हें सौंप कर, तथा १२० क़ैदी, जिनमें दो अफ़सर तथा अ· स्त्रियाँ थीं, अकबरख़ाँ को ओल दे कर, अँगरेजी सेना और उसके हालो कुल १६ हज़ार आदमी वापिस चले। एक हफ्ते में जगदलक दर्रे तक प पहुँचते वे सब ख़तम हो गये! एक घायल डाक्टर ब्राइडन बच कर उस ·हानी सुनाने जलालाबाद पहुँचा।

जलालाबाद वाली सेना भी घिर गयी थी। फ़ीरोज़पुर से चार रेजिमें के रास्ते उसकी मदद को पेशावर भेजी गयीं। पेशावर में अँगरेज़ों

अधिकारियों से अनुरोध किया कि वे उनकी मदद करें या खुद जलालाबाद तक बढ़ें। सिक्ख नाज़िम ने अपनी रेजिमेंट के पंचों से पूछा। उन्होंने घृणा से इनकार कर दिया। लार्ड आकलैंड ने तब जनरल पोलक को पेशावर भेजा और कन्दहार के जनरल नौट को अफ़गान-युद्ध का अधिनायक बना दिय। तभी आकलैंड के स्थान में एलिनबरो गवर्नर-जनरल हो कर आया (२८-२-१८४२)। उसके आने के शीघ्र बाद अँगरेज़ी सेना को ग़ज़नी भी छोड़ना पड़ा और शाहशुजा गोली से मारा गया।

पर उसी समय पोलक ने ख़ैबर पार किया और दस दिन बाद जलालाबाद पहुच गया, जहाँ ब्रिटिश सेना अब वीरता से लड़ रही थी। एलिनबरो ने नयी हारों से घबरा कर पोलक को पेशावर वापिस आने और नौट को कन्दहार से लौटने का हुक्म भेजा, परन्तु उन दोनों ने वे हुक्म नहीं माने।

१०. **चीन से युद्ध**—इस बीच में अँगरेज़ों का चीन से भी युद्ध चल रहा था। चीन में पहले-पहल सोलहवीं सदी में पुर्तगाली व्यापारी पहुँचे थे और उन्होंने मचाओ बन्दरगाह ले लिया था। उनकी लुटेरी प्रवृत्ति देख कर चीन-सम्राट् ने और किसी बन्दर में उन्हें घुसने न दिया। ओलन्देज़ और अँगरेज़ १७ वीं सदी में वहाँ पहुँचे। सन् १७५७ ई० से युरोपियन व्यापार के लिए चीन का केवल एक सबसे दक्खिनी बन्दरगाह काङ्तुङ (कैंएटन) नियत कर दिया गया था। परन्तु वहाँ भी वे लोग बसने न पाते थे। वे मचाओ से ख़ास मौसम में बिना परिवारों के काङ्तुङ आने पाते और व्यापारिक लेन-देन कर लौट जाते थे। शुरू में यह व्यापार एकतरफ़ा था। चीन से ये कपास रेशम, चाय आदि ले जाते, और बदले में कोई चीज़ इनके पास लाने को न होती, इसलिए सोना-चाँदी ही लाते थे। धीरे-धीरे ये भी कई चीज़ें लाने लगे जिनमें अफ़ीम मुख्य थी। पीछे अफ़ीम का आयात इतना बढ़ता गया कि सन् १८३० ई० से चीन के निर्यात का पलड़ा हलका रहने लगा। भारत में ईस्ट इंडिया कम्पनी का अफ़ीम के व्यापार पर एकाधिकार होने से अँगरेज़ों को इस व्यापार में दुहरा नफ़ा था।

चीनि सम्राट् ने सन् १८३८ में अफ़ीम के व्यापार को बन्द करने की कोशिश की। अँगरेज़ व्यापारियों की सब अफ़ीम ज़ब्त कर ली गयी और उनसे ज़मानत माँगी गयी कि आगे से अफ़ीम न लायेंगे। इसपर अँगरेज़ काङ्तुङ से हाङ्काङ हट गये और युद्ध छेड़ दिया (१८४० ई०)। उन्हों ने काङ्तुङ की रास्ता-बन्दी कर दी, उत्तर की तरफ़ बढ़ कर तट को उजाड़ा, और पाँच बन्दरगाह छीन लिये। उसके बाद काङ्तुङ पर दख़ल कर लिया, और जहाज़ों से याङ्चे नदी में घुस कर चीनी साम्राज्य के एक सूखे बाँस की तरह दो टुकड़े करने लगे।

अफ़ग़ान विद्रोह के कारण चीन से शीघ्र सन्धि की गयी (अगस्त १८४२ ई०)। हाङ्काङ अँगरेजों को मिला; ज़ब्त अफ़ीम के दाम के अलावा बड़ा हरजाना भी उन्होंने पाया। काङ्तुङ से शंघाई तक पाँच बन्दरगाह व्यापार के लिए खोल दिये गये और उनमें रहने तथा खुला व्यापार करने का अधिकार भी मिल गया। सबसे बढ़ कर यह बात हुई कि चीन ने चुंगी नियत करने का अपना अधिकार छोड़ दिया और आगे से विदेशी व्यापारियों की सलाह से हलकी चुंगी लगाना तय किया।

§११. अफ़ग़ान युद्ध का अन्त—एलिनबरो ने अब नौट को ग़ज़नी काबुल ख़ैबर हो कर लौटने की तथा पोलक को उससे सहयोग करने की इजाज़त दे दी। पोलक जलालाबाद से चला और राह में अफ़ग़ानों को हराते हुए फिर काबुल पर अँगरेज़ी झंडा जा गाड़ा (१६-६-४२ ई०)। एक दिन बाद नौट भी वहाँ आ पहुँचा। एलिनबरो के आदेश से वह ग़ज़नी से महमूद के मक़बरे के वे किवाड़ उखाड़ लाया जो सोमनाथ के मन्दिर से ले जाये गये माने जाते थे। अँगरेज़ क़ैदियों को छुड़ाने के बाद उन्होंने काबुल का बाज़ार लूट कर जला दिया, और तब भारत वापिस लौटे। उनके अटक पार करने पर दोस्तमुहम्मद को भी क़ैद से छोड़ दिया गया। एलिनबरो ने फ़ीरोज़पुर में लौटती सेना का स्वागत किया (जनवरी १८४३ ई०)। "सोमनाथ के दरवाज़ों" का उसने बड़ा प्रदर्शन कराया,

पर वास्तव में वे सोमनाथ के पुराने मन्दिर के न थे। आगरे तक पहुँचने के बाद वे वहाँ क़िले में डाल दिये गये।

§१२. **सिन्ध पर दख़ल**—सिन्धियों ने अपने देश में अँगरेज़ी सेना को घुसने दिया और उसे अपने पड़ोसियों के विरुद्ध युद्ध का आधार बनने दिया था। इसका फल उन्हें अब भोगना था।

एलिनबरो ने सर चार्ल्स नेपियर को उनके देश पर दख़ल करने भेजा। नेपियर ने अमीरों पर नयी सन्धि मढ़ी, जिसका सार यह था कि आश्रित सेना के लिए जो रुपया वे देते हैं, उसके बदले ज़मीन देनी होगी, और सिन्ध में अँगरेज़ी सिक्का चलेगा। इससे पहले कि अमीर उसपर दस्तख़त करें, वह इलाक़ों पर दख़ल करने और इस तरह हुक्म चलाने लगा मानो वही देश का शासक हो। इस पर जनता ने उभड़ कर रेज़िडेन्सी को घेर लिया। अमीरों की ३० हज़ार सेना का नेपियर ने मियानी पर ३ हज़ार से सामना किया (१७-२-१८४३ ई०)। उनके तोपची दल और रिसाले के नेता को वह पहले ही ख़रीद चुका था। उसकी जीत निश्चित थी।

इसके बाद उसने हैदराबाद को घेर कर सर किया। ब्रिटिश सेना ने उस धनी शहर को खुल कर लूटा; अकेले नेपियर को उस लूट में से सात लाख रुपये मिले। अँगरेज़ सारजेण्टों और सैनिकों की स्त्रियाँ अमीरों के जनानों में भेजी गयीं; और उन्होंने उन अभागिनियों की नाकों और कानों से क़ीमती ज़ेवर नोच-नोच कर विनोद किया और अपनी जेबें भरीं। रेज़िडेण्ट सर जेम्स आउटराम ने इस लूट का एक रुपया भी छूने से इनकार किया। लेकिन नेपियर एक सीधा सिपाही था; उसे मक्कारी पसन्द न थी। जब इस धींगाधींगी पर कुछ लोगों ने अँगुली उठायी तो उसने सीधा जवाब दिया, "हमारा भारत जीतने का...एकमात्र उद्देश्य रुपया था। पिछले साठ बरस में भारत से एक अरब पौंड से अधिक निचोड़ा जा चुका कहा जाता है। इसमें से एक-एक शिलिंग लहू में से बीना गया, पोंछा गया और

क़ातिल की जेब में रक्खा गया है; पर चाहे कितना ही पोंछो और धोओ, निगोड़ा दाग़ तो छुटता नहीं।"

हैदराबाद जीतने के एक महीना बाद नेपियर ने खैरपुर (उत्तरी सिन्ध) के अमीर को डब्बो पर हराया, और उसके बाद समूचे सिन्ध पर दख़ल कर लिया।

§ १३. **गवालियर का अन्तिम पराभव**—सिन्ध के बाद पंजाब की बारी थी। लेकिन अँगरेज पंजाब की तरफ़ बढ़ते तो उन्हें बायीं ओर से एक और शत्रु का ख़तरा रहता। वह थी गवालियर की सेना। गवालियर अभी तक अँगरेज़ों का आश्रित या अधीन न हुआ था। सन् १८०४ में दौलतराव शिन्दे ने आश्रित सेना रखने की सन्धि की थी, लेकिन होल्कर-युद्ध के बाद की सन्धि द्वारा वह रद्द हो गयी थी*। १८१७ ई० की सन्धि से उसने राजपूताने पर आधिपत्य तो छोड़ा, लेकिन स्वयम् अँगरेज़ों के अधीन न हुआ था। महादजी शिन्दे ने जिस सेना की नींव रक्खी थी, वह अभी तक मौजूद थी, और सतलज के दक्खिन वही एकमात्र सधी हुई सुसज्जित भारतीय सेना थी। अँगरेजों की दृष्टि में "ऐसी बड़ी सेना का यहाँ रहना सतलज से आने वाले शत्रु के मुक़ाबले को बढ़ने वाली हमारी सेना के लिए ख़तरनाक" था। इसलिए वे मनाते थे कि "गवालियर दरबार और उसकी सेना को भूकम्प निगल जाय तो अच्छा हो।"

७-२-१८४३ ई० को राजा जनकोजीराव शिन्दे की एकाएक मृत्यु हुई। उस की ११ वर्ष की विधवा ८ बरस के एक बच्चे, जयाजीराव, को गोद ले कर राज करने लगी। असल राज-काज दरबार के हाथ में रहा। एलिनबरो ने दरबार पर दबाव डाल कर अपने एक पिट्ठू को प्रधान नियत कराया। परन्तु कुछ समय बाद रानी और दरबार ने उसे हटा कर सर्वसम्मति से दादा खासगीवाला को प्रधान नियत किया। दादा योग्य शासक था। उसने सेना का सब बकाया वेतन दे डाला; युरोपियन और दोगले अफ़सरों को हटा दिया

---

*ऊपर पृ० ५०७।

तथा अनेक अँगरेज़-विरोधियों को, जिन्हें गत महाराजा ने रेज़िडेण्ट के दबाव में आ कर हटा दिया था, फिर से पद दिये।

एलिनबरो ने गवालियर के उत्तर और पूरब सेना जमा कर दरबार से मुतालबा किया कि दादा को उसके हाथ सौंप दें। दरबार ने दब कर ऐसा कर दिया तो एलिनबरो ने उसे और दबाया। अँगरेज़ी सेना दोनों तरफ़ से बढ़ी। उधर लड़ाई की कोई तैयारी न थी, इसी से चम्बल के घाटों पर भी उसे किसी ने न रोका। मुसीबत सिर पर आ जाने पर गवालियर की सेना लड़ी। एक ही दिन (२९-१२-१८४३ ई०) गवालियर के उत्तर महाराजपुर तथा दक्खिन पनियार पर लड़ाइयाँ हुईं, जिनमें गवालियर की नेतृहीन सेना बहादुरी से लड़ कर हारी। महाराजपुर की जीत अँगरेज़ों को काफ़ी मंहगी पड़ी।

सिन्ध पर दख़ल करने के कुछ मास बाद यदि गवालियर पर भी अँगरेज़ दख़ल कर लेते तो देशी राज्य भड़क उठते। इसलिए एलिनबरो ने संयम से काम लिया और गवालियर को अधीन राज्य बना कर ही सन्तोष किया।

§ १४. **पंजाब में सेना का राज और उसके ख़िलाफ़ तैयारी**—सन् १८४३ ई० में सिक्खों ने कश्मीर के उत्तरपच्छिम गिल्गित जीत लिया। वह उनकी अन्तिम विजय थी। सन् १८३५ ई० में फ़ीरोज़पुर के जागीरदार के निःसन्तान मरने पर अँगरेज़ी सरकार ने उस शहर को ले कर वहाँ एक भारी छावनी डाल दी थी। एलिनबरो ने अम्बाला, कसौली और जुतोग (शिमला) में भी नयी छावनियाँ डालीं।

सिन्धनवाला सरदारों को अँगरेज़ी सरकार की कोशिश से सिक्ख दरबार में फिर ऊँचा स्थान मिल गया। अजीतसिंह सिन्धनवाला महाराजा शेरसिंह का घनिष्ठ मित्र बन गया। इसके बाद एक दिन (१५-९-१८४३ ई०) उसने एकाएक शेरसिंह, कुमार प्रतापसिंह, और वज़ीर ध्यानसिंह की हत्या कर डाली। ध्यान के बेटे हीरासिंह की प्रेरणा से सेना ने लाहौर का क़िला घेर लिया; अजीतसिंह लड़ाई में मारा गया। तब रणजीतसिंह की एक छोटी रानी जिन्दाँकौर का ५ साल का बच्चा दिलीपसिंह महाराजा तथा हीरासिंह उसका वज़ीर बनाया गया।

एलिनबरो पंजाब पर घात लगाये बैठा था। वह सतलज में लाने को बम्बई में लोहे की ऐसी नावें तैयार करवा रहा था जो पोंएटून की तरह भी बर्ती जा सकें। एप्रिल १८४४ ई० में उसने लिखा, "मेरी अभिलाषा है कि नवम्बर १८४५ ई० तक हमको सतलज पार न करनी पड़े।"

अगले महीने अतरसिंह सिन्धनवाला ने, जो कि थानेसर में अँगरेज़ों की शरण में था, अपने दल के साथ फ़ीरोज़पुर पर सतलज पार की और एक प्रसिद्ध सन्त को तथा रणजीतसिंह के एक दत्तक बेटे को अपने साथ मिला कर लाहौर की तरफ़ बढ़ने लगा। वज़ीर हीरासिंह ने इस संकट के अवसर पर खालसा पंचायत के सामने खड़े हो विनती की और उन्हें याद दिलाया कि सिन्धनवाले अँगरेज़ों के हथियार हैं। एक सेना तब उन के ख़िलाफ़ बढ़ी। लड़ाई में अतरसिंह और उसके साथी मारे गये।

हीरासिंह राजकाज में अपने शिक्षक पंडित जल्ला की सलाह से चलता था। जल्ला विचारशील आदमी था। पंजाब के लोकमत को प्रभावित करने के लिए वह प्रेस की स्थापना की बात भी सोचता था। उसका ख़्याल था कि पंजाब की मालगुज़ारी का बड़ा अंश गुलाबसिंह के हाथ चला जाने से राज्य की क्षति होती है। इसलिए उसने सेना में धीरे-धीरे यह विचार फैला दिया कि गुलाबसिंह से उसकी जागीरें वापिस लेनी चाहिए। वह दूसरे सरदारों की जागीरें भी ज़ब्त करने लगा। लेकिन इस काम में उसने कुछ जल्दी की। जिन सरदारों की जागीरें ज़ब्त की गयीं थीं, वे सिक्ख थे, और सिक्ख सेना को उकसाने लगे। इस बीच जल्ला के मुँह से रानी जिन्दाँ के विषय में कुछ अनुचित शब्द निकल गये। रानी के भाई जवाहरसिंह ने तब सेना को एकदम भड़का दिया। जल्ला और हीरासिंह पकड़ कर मार दिये गये (२१-१२-१८४४ ई०)।

कुछ अव्यवस्था के बाद जवाहरसिंह तथा एक लालसिंह ने नया शासन बनाया। उन्होंने गुलाबसिंह से समझौता कर लिया। लेकिन सेना के पंचों ने समझौते की शर्तें न मानीं और जम्मू पर चढ़ाई की। चतुर गुलाब ने दान और विनय द्वारा सेना को खुश किया, और अपनी जागीरों का बड़ा अंश

राज्य को सौंप दिया। उसके कुछ सैनिक लाहौर की सेना से झगड़ पड़े, तब उसने अपने को सेना के हाथ में सौंप दिया और क़ैदी हो कर वह उनके साथ लाहौर तक गया। वह क़ैदी चाहता तो आसानी से वज़ीर बन सकता था क्योंकि सेना उसकी योग्यता और विनय की कायल थी। लेकिन ग़ैर-सिक्ख होने के कारण उसे उनपर भरोसा न था। उसकी उपस्थिति में जवाहरसिंह बाक़ायदा वज़ीर बनाया गया (१४-५-१८४५ ई०)।

जवाहर तुच्छ आदमी था। सेना के प्रभाव से घबरा कर उसने दो बारा सतलज पार भागने की कोशिश की, पर सेना चौकन्नी थी। रणजीतसिंह के एक और दत्तक बेटे ने अटक में विद्रोह किया। वह पकड़ कर लाहौर लाया गया। जवाहर ने उसे मरवा डाला। इस बात से सेना ऊब उठी। पंचों ने कहा कि ऐसी बातें राज्य में होने पायेंगी तो वे सब ख़तरे में पड़ जायेंगे। पंचायतों की संगत जुटी और उसमें तय हुआ कि जवाहर को मृत्यु-दंड दिया जाय। २१-६-१८४५ ई० को उसे खालसा संगत के सामने बुलाया गया। बहुत सा सोना और रत्न ले कर हाथी पर बैठे हुए, महाराजा को साथ लिये वह वहाँ पहुँचा और भेंट-पूजा से पंचों को फुसलाना चाहा। तब उसे सख़्ती से कहा गया कि चुप रहे और महाराजा को एक तम्बू में बिठा दिया गया। तब पंचों की आज्ञा से सैनिकों ने आगे बढ़कर जवाहर को गोली से मार दिया। इसके बाद राज्य में किसी क़िस्म की लूटमार या अव्यवस्था न हुई।

अब गुलाबसिंह को वज़ीर बनने के लिए बुलाया गया, पर वह त्रास के मारे न आया। इसपर नवम्बर १८४५ ई० में लालसिंह को वज़ीर तथा तेजसिंह को प्रधान सेनापति चुना गया।

उधर लॉर्ड एलिनबरो की जगह पर लार्ड हार्डिंज आ गया था (१-८-१८४४ ई०) और पंजाब के पड़ोस की छावनियों में सेना और सामान बराबर बढ़ाया जा रहा था। सितम्बर १८४५ ई० में बम्बई वाले नाव पोण्टून फ़ीरोज़पुर आ पहुँचे। सिक्ख सरदारों के साथ षड्यन्त्र चल ही रहे थे। सिक्खों के अनेक स्वार्थी सरदार सदा से चाहते थे कि पंजाब में

अँगरेज़ दख़ल दें जिससे वे अपनी जायदादों में स्थिर हो जाँय। सतलज के पूरब के सरदारों ने इसी प्रेरणा से अपने को अँगरेज़ों की रक्षा में सौंपा था। सतलज के पच्छिम के सरदार पहले रणजीतसिंह की प्रतिभा से और अब शास्त्र-बद्ध जनता के तेज से पराभूत रहे। वे अब सोचने लगे कि सेना के नाश से ही उनका बचाव होगा। जिन लालसिंह और तेजसिंह को सिक्खों ने अपना नेता चुना वे न केवल उसी क़िस्म के सरदारों में से थे प्रत्युत अँगरेज़ों के षड्यन्त्र में गहरे शामिल हो कर भड़काऊ कारिन्दों का काम कर रहे थे।

§१५. **सतलज की लड़ाइयाँ**—अक्टूबर में हार्डिंज पंजाब की तरफ़ रवाना हुआ। लालसिंह और तेजसिंह ने सेना को अँगरेज़ों की तैयारी दिखाकर ताना देते हुए पूछा—"क्या तुम देखते रहोगे जब कि पंजाब को विदेशी पददलित करेंगे?" वीर सिक्खों ने उत्तर दिया—"हम जान पर खेल कर अपनी भूमि को बचायेंगे।" वे न केवल इन नीच देशद्रोहियों के बहकाने में आ गये, प्रत्युत युद्ध के समय एक नेता की ज़रूरत देखते हुए पंचायतें बन्द कर इन्हीं के हाथ में सेना की कुल बागडोर सौंप दी! यों नवम्बर १८४५ ई० में, ठीक उस समय जब कि अँगरेज़ चाहते थे, सिक्खों ने युद्ध का निश्चय किया, और उनकी सेना सतलज की ओर बढ़ी।

शुरू दिसम्बर में हार्डिंज अम्बाला पर प्रधान सेनापति गफ़ से आ मिला। अम्बाला से अँगरेज़ी सेना फ़ीरोज़पुर की तरफ़ बढ़ी। सिक्खों ने फ़ीरोज़पुर के ऊपर सतलज पार की। फ़ीरोज़पुर में तब केवल ७ हज़ार अँगरेज़ी सेना थी। सिक्खों के लिए स्पष्ट रास्ता यह था कि सब से पहले उस छावनी को छीन लेते। लेकिन लालसिंह और तेजसिंह को तो अपनी सेना को पिसा देना अभीष्ट था। उन्होंने अँगरेज़ अफ़सरों को सन्देश भेजा कि डरें नहीं, और अपने सिक्खों से कहा कि इस तुच्छ सेना से क्या लड़ना, आगे बढ़ कर गवर्नर जनरल को मारो या क़ैद करो! यों अपनी सेना को आगे ले जा कर फ़ीरोज़पुर से २० मील, मुदकी गाँव पर, लालसिंह ने उसके एक अंश को अँगरेज़ों की बड़ी फ़ौज के साथ टकरा दिया (१८ दिसम्बर

१८४५ ई०)। गफ़ ने उसे धकेल दिया और तय किया कि शत्रु से लड़ने से पहले फ़ीरोज़पुर वाली टुकड़ी से मिला जाय।

सिक्ख सेना की हरावल मुदकी और फ़ीरोज़पुर के बीच फीरूशहर* गाँव के गिर्द घोड़े के सुम की शकल में पड़ी थी। २१ दिसम्बर को अम्बाला और फ़ीरोज़पुर की सेनाओं के मिल जाने पर हार्डिंज और गफ़ ने उसपर सन्ध्या से एक घंटा पहले हमला किया। अँगरेज़ी सेना भरोसे से बढ़ी, उनकी तोपें गोले उगलने लगीं। लेकिन सिक्ख तोपों ने तेज़ी से और ठीक निशाने से जवाब दिया; तोपों के बीच से सिक्ख पदाति दृढ़ता से बन्दूकें दाग़ते रहे। इस मुक़ाबले को देख कर सब दंग रह गये। अँगरेज़ों की तोपें उखड़ गयीं, बढ़ते हुए दस्ते धक्के खा कर लौटे, पाँतें टूट गयीं और अँधेरे में नायकों को पता न चलता कि उनके सिपाही कहाँ गये। ढेर हुई सेना जहाँ जाड़े से बचने को आग जलाती, वहीं सिक्ख तोपों के गोले आ कर पड़ते। अँगरेज़ उस दिन जिस धरती पर खड़े थे, उसपर उन्हें भरोसा न था। कोई रक्षित सेना उनके नज़दीक न थी; सिक्खों के पास दूसरी ताज़ी सेना तैयार थी।

गफ़ और हार्डिञ्ज ने तब भी हिम्मत करके हमला किया और दूसरे दिन सुबह सिक्खों को उस शिविर से ढकेल दिया। लेकिन तभी सिक्ख सेना का दूसरा अंश, तेजसिंह की नायकता में, आ गया। ग़द्दार तेजसिंह जान बूझ कर देर करता रहा, जिससे लालसिंह वाली सेना पूरी पस्त हो जाय और अँगरेज़ फिर अपनी पाँतें बाँध लें। उसके बाद भी उसने दृढ़ता से हमला न किया, और छोटी-मोटी मुठभेड़ें करके ठीक उस समय भाग निकला जब कि अँगरेज़ी तोपों का गोला ख़तम हो चुका था और उनकी सेना का एक अंश फ़ीरोज़पुर लौट रहा था। उस समय यदि सिक्ख दृढ़ता से बढ़ते तो अँगरेज़ों की बाक़ी सेना की पूरी सफ़ाई हो जाती।

इस लड़ाई से पता चला कि सिक्ख तोपों की मार अँगरेज़ी तोपों से लम्बी, गोला ज़्यादा भारी, पछाड़ कम तथा चलाने वाले अँगरेज़ी चालकों

*'फीरूशहर' का अँगरेज़ी में 'फ़ीरोज़शाह' बना दिया गया है।

से अच्छे थे। सिक्ख नेताओं की ग़द्दारी से अँगरेजों की जीत तो हुई, पर उनकी शक्ति को लकुवा मार गया। उन्होंने सिक्खों को आराम से सतलज पार कर नयी तैयारी करने दी, तथा स्वयम् दूर-दूर से नयी सेनाएँ और एक-एक दो-दो अफ़सर भी बुलाये। उन्हें अब दिल्ली और जमना के घाटों की चिन्ता थी!

अँगरेज़ों की कुमुक आने पर उन्होंने फ़ीरोज़पुर से हरिके पत्तन तक मोर्चे बन ये। सिक्ख सामने सतलज के उस पार थे। सरहिन्द इलाके में रसद-सामान जुटाने और लाने में भी अँगरेजों को दिक्क़त होने लगी। तभी दस हज़ार सिक्ख सेना ने रणजोरसिंह के नेतृत्व में लुधियाने के सामने सतलज पार की। मेजर-जनरल हैरी स्मिथ को लुधियाना बचाने भेजा गया। रणजोर लुधियाने के सात मील पच्छिम बद्दोवाल पर था; स्मिथ ने दाहिने घूम कर, उससे बच कर, निकलने की कोशिश की (२१-१-१८४६ ई०)। लेकिन सिक्ख उसका रास्ता काटने बढ़े। मुख्य सेना के आने पर स्मिथ मुक़ाबला करने के पाँतें बनाने लगा। तब उसने देखा कि चुस्त सिक्खों ने उसके पिछली तरफ़, रेत के टीलो के पीछे-पीछे से, चुपके चुपके अपनी तोपें ला कर उसका बाँया पासा घेर लिया है। 'ये तोपें बड़ी फुर्ती और ठिकाने से गोलों की धारा बहाने लगीं। उनके गोलों की लगातार साँय-साँय में झुंड के झुंड गिरते सैनिकों की कराहें न सुन पड़ती थं।।" स्मिथ ने सेना को फिर कूच का हुक्म दिया। सिक्खों ने पीछा न किया, "क्योंकि उनका कोई नेता न था, या जो था वह अँगरेज़ों की हार न चाहता था।" यह मुक़ाबला फीरुशहर के मुक़ाबले की तरह सैनिकों ने अपनी सूझ से किया था। उन्होंने स्मिथ की टुकड़ी का तमाम असबाब लूट लिया और अनेक अँगरेज़ क़ैद किये।

सिक्खों के हौसले अब बढ़ने लगे। समूची सेना ने स्वाभाविक प्रेरणा से गुलाबसिंह को बुला कर वज़ीर बनाया। गद्दार लालसिंह और तेजसिंह भीतर-भीतर काँपने लगे। २७ जनवरी को गुलाबसिंह लाहौर पहुँचा। लेकिन वह बहुत देर से पहुँचा! रणजोरसिंह बद्दोवाल से सतलज के किनारे १५ मील नीचे हट गया था। लुधियाना पहुंच कर नयी कुमुक के साथ हैरी स्मिथ

उसके मुकाबले को निकला। अलीवाल और बुंदरी गाँवों पर २८ जनवरी को फिर उनकी लड़ाई हुई। रणजोरसिंह अपने डोगरों के साथ भाग निकला; सिक्ख तोपची और पदाति वीरता से लड़े, पर उनकी पूरी हार हुई। इस हार ने अवसरदर्शी गुलाबसिंह का रुख़ बदल दिया। अब वह भी अँगरेज़ों से बातचीत करने लगा। हार्डिञ्ज ने भी देखा, सिक्खों के समान वीर सुसज्जित बहुसंख्यक सैनिकों का वैसे योग्य नेता के संचालन में चले जाना खतरनाक है, और उसे ख़रीद लेने का निश्चय किया।

हार्डिञ्ज ने कहा कि सिक्ख सरकार को स्वीकार किया जा सकता है, बशर्ते कि वह अपनी सेना को तोड़ दे। गुलाबसिंह ने कहा कि सेना पर उसका क़ाबू नहीं है। तब यह तय हुआ कि सिक्ख सेना पर अँगरेज़ हमला करें और जब वह पिट जाय तब सिक्ख सरकार खुल्लम-खुल्ला उसका साथ छोड़ दे तथा अँगरेज़ों को बे-रोक-टोक लाहौर जाने दे। "सयानी नीति और बेहया ग़द्दारी की ऐसी अवस्थाओं के बीच सुबराहान की लड़ाई लड़ी गयी।"

शुरू फ़रवरी में दिल्ली से अँगरेज़ों की क़िलातोड़ तोपें आ गयीं, जिन्हें सिक्खों के ख़िलाफ़ मैदान में बर्तना तय किया गया था। सिक्ख सरकार के देशद्रोह के कारण सिक्ख सेना को रसद-बारूद भी ठीक न मिल रहा था। उनकी मुख्य सेना सतलज के पूरब सुबराहान के मोर्चे पर जमा हुई। मोर्चाबन्दी किसी एक योजना या आदेश पर न हुई थी। "सैनिकों ने सब कुछ किया, पर नेताओं ने कुछ नहीं किया था। हिम्मती दिल और मेहनती हाथ बहुत थे, पर चलाने वाला दिमाग़ कोई न था।" मध्य और बायें पासे में सधे हुए सैनिक और अच्छी मोर्चा-बन्दी थी; दाहिना पासा नदी की बालू में था, जहाँ मोर्चे बनाना कठिन था, और वहीं अनियमित सेना तेजसिंह के नेतृत्व में "रहने दी गयी या जान बूझ कर रक्खी गयी थी।" अँगरेज़ों ने उसी पासे पर सब से ज़ोर की चोट लगाना तय किया।

१० फ़रवरी को प्रातःकाल के अँधेरे और गहरी धुन्ध में अँगरेज़ी सेना चुपचाप बढ़ी। सिक्ख झटपट तैयार हुए। सूर्योदय के साथ ही

अँगरेज़ी तोपखाने ने मुँह खोला और तीन घंटे बौछार करता रहा। लेकिन सब विफल हुआ। सिक्ख "दमक के बदले दमक और आग के बदले आग लौटाते हुए" निडर डटे रहे।

दूर की गोलाबारी से कुछ बनता न देख अँगरेज़ी सेना का बायाँ पासा हमले के लिए बढ़ा और शत्रु के बढ़े हुए मोर्चों और खन्दकों में जा घुसा। ग़द्दार तेजसिंह पहला हमला होते ही भागा और सतलज पार करते हुए पुल के बीच की एक नाव डुबाता गया। तब अँगरेज़ों का दाहना पासा भी बढ़ा, और बार-बार ढकेले जा कर भी बढ़ता ही रहा। सख़्त मुक़ाबले के बावजूद उन्होंने खाई कूद कर धुसबन्दी पर चढ़ कर, शत्रु की तोपों को छीन लिया। लेकिन लड़ाई ख़तम न हुई। सिक्ख पाँतों में सब जगह छेद हो जाने पर भी उनकी अकेली-दुकेली तोपें जहाँ-तहाँ चलती रहीं, और उनकी पाँत के मध्य में वीर आदमी डटे थे जो चप्पा-चप्पा ज़मीन के लिए जूझते थे। गोलों की मार के बीच धुसबन्दी पर बेधड़क खड़े अनेक सिक्ख तलवार घुमा कर अपने तोपचियों को दिखाते थे कि किधर गोरों के झुण्ड जमा हैं। धीरे-धीरे सब मोर्चे ले लिये गये और सिक्ख सेना नदी की तरफ़ ढकेली गयी। पर अन्त तक "एक भी सिक्ख ने समर्पण न किया या शरण न माँगी। वे भौंहें ताने और बेरुख़ी दिखाते धीरे-धीरे टहलते हुए हट जाते थे या अकेले-अकेले शत्रु-दल से लड़ते हुए निश्चित मौत पाते थे। पराजितों के अदम्य तेज को देख विजेता चकित रह जाते; उनके शस्त्र उनपर वार करते रुक जाते थे। परन्तु नेताओं की प्रतिहिंसा तृप्त न हुई थी, या कूट नीति अपना हिसाब न चुका पायी थी। लाशों के ढेरों के बीच खड़े हो उन्होंने तोपख़ाने को और आगे—क़रीब सतलज के अन्दर तक—बढ़े चलने का आदेश दिया, जिससे कि वह सेना, जो इतने दिन तक उनकी शक्ति की अवहेलना करती रही थी, पूरी तरह नष्ट हो जाय।"

अँगरेज़ी सेना सतलज पार कर पंजाब में घुसी। अमृतसर की तरफ़ अभी २० हज़ार सिक्ख सेना और थी; पर उनकी पंचायती शक्ति टूट चुकी थी, और दरबार ने अँगरेज़ों से सुलह कर ली थी। सेना ने दरबार की यह बात मान ली

कि वज़ीर गुलाबसिंह, लाहौर में सिक्ख राज रखते हुए, जैसी चाहे सुलह करें। पंजाब-सरकार ने अँगरेज़ों को सतलज-व्यास का दोआबा तथा डेढ़ करोड़ रुपया हरजाना देना मान लिया।

गुलाबसिंह की आकांक्षा पंजाब का वज़ीर बनने की थी। हार्डिञ्ज ने देखा कि वह वज़ीर बन जाय तो बची-खुची सिक्ख सेना के सहारे अब भी पंजाब में मज़बूत राज्य खड़ा कर लेगा। इसलिए उसने उसे सिक्खों से अलग करना तय किया। लाहौर दरबार डेढ़ करोड़ में से पचास लाख की रक़म ही दे पाया था। बाक़ी १ करोड़ के बजाय अँगरेज़ों ने व्यास से सिन्ध तक का पहाड़ी इलाक़ा ले कर उसमें से काँगड़ा और हज़ारा के सिवाय बाक़ी ७५ लाख में गुलाबसिंह को बेच दिया, और उसे महाराजा का पद दिया।

देश-द्रोही लालसिंह वज़ीर बनाया गया। वह और उसके साथी बची-खुची सिक्ख सेना के मुकाबले में भी न टिक पाते इसलिए उन्होंने दिलीपसिंह के बालिग़ होने तक अँगरेज़ी सेना को पंजाब में रख लिया और एक अँगरेज़ रेज़िडेन्ट को दरबार का मुखिया बना कर पूरा शासन सौंप दिया।

§ १९. **कोट की हत्याएँ (१८४६ ई०)**—लार्ड एलिनबरो ने अपने शासनकाल में नेपाल को भी जीतने की योजना बनायी थी। सन् १८४३ ई० में नेपाल के महाराजा ने सेनापति मातबरसिंह को वापिस बुला कर प्रधान मन्त्री बनाया। तभी जंगबहादुर नामक व्यक्ति रानी की सहायता से शक्तिशाली हो उठा। उसने १८४५ ई० में मातबरसिंह को महल में बुलवा कर मार डाला। फिर सितम्बर १८४६ ई० में रानी के हुकुम से ३१ सरदारों को काठमाडू के कोट में बुलवा कर उनके सौ अनुचरों सहित एकाएक मरवा डाला। कुछ और हत्याएँ करने के बाद उसने राजा और रानी को भी बनारस भगा दिया और युवराज को गद्दी दी। जंगबहादुर ने अपने और अपने भाइयों के वंश में नेपाल का प्रधान मन्त्रित्व स्थिर कर दिया। महाराजा तब से नाम का महाराजा पर असल में नज़रबन्द हो गया।

अध्याय ४

खंडहरों की सफ़ाई

§१. **खंडहरों की सफ़ाई**—भारतीय राज्य चोटें खा-खा कर खण्डहर बन चुके थे; अब उन खण्डहरो की सफ़ाई करना बाक़ी था। अँगरेज़ अब भारत की ज़मीन और साधनों से नफ़ा कमाने को अधीर हो रहे थे। सिन्ध जीतने पर एक अच्छा कपास का क्षेत्र उनके हाथ आ गया था। लेकिन पंजाब, बराड और नागपुर की कपास भी उन्हें ललचा रही थी। नीलगिरि और कोडुगु में कहवे की तथा बिहार-बंगाल में नील और पाट की खेतियाँ करा के अँगरेज पूँजीपति नफ़ा कर रहे थे। अवध की ज़मीन भी वैसे व्यवसाय के लिए उन्हें लुभाती थी। कुमाऊँ और शिमला में उन्होंने नयी बस्तियाँ बसायीं और बग़ीचे लगाये थे। नेपाल को देख कर भी उनके मुँह में पानी भर आता था।

अँगरेज़ों के हाथ में अब नये यन्त्र और साधन भी आ गये थे जिनके द्वारा वे समूचे भारत पर शीघ्र पूरा दख़ल कर लेने की सोचते थे। सन् १८१३-१४ ई० में स्टिफिन्सन ने लोहे की पटरी पर दौड़ने वाला एञ्जिन बना दिखाया था और १८२५-३० ई० में इंग्लैण्ड में पहली रेलगाड़ी चल पड़ी थी। तभी आम्पीयर नामक फ्रान्सीसी ने बताया कि बिजली से चुम्बक-शक्ति का काम लिया जा सकता है, और इस आधार पर १८३६ ई० में मोर्स नामक अमेरिकन ने तारलेखन (टेलीग्राफ़ी) की ईजाद की। भाप से चलने वाले जहाज़ (स्टीमर) फ्रान्स और अमेरिका में उन्नीसवीं सदी के शुरू से ही जारी थे, और हम देख चुके हैं कि सिन्ध और पंजाब के युद्धों में उनका प्रयोग हुआ था। लोहे के तारों और पटरियों से अब सारे भारत को कसा जा सकता था।

इस कार्य के लिए सन् १८४७ ई० के शुरू में डलहौसी को हार्डिञ्ज का उत्तराधिकारी बना कर भेजा गया। उसने कहा, "मैं हिन्दुस्तान की ज़मीन को समथर कर दूँगा," और आते ही खंडहरों की सफ़ाई में लग गया।

§ २. दूसरा सिक्ख युद्ध (१८४८-४६ ई०)—सिक्ख राज्य के एक बार क़ाबू में आते ही अँगरेज़ उस पर अपना शिकजा कसने और मुसलमानों को सिक्खों के ख़िलाफ़ उभाड़ने लगे। रणजीतसिंह के विश्वस्त मन्त्री फ़कीर अज़ीज़ुद्दीन का भाई नूरुद्दीन दरबारियों में से एक था। उसके द्वारा रेज़िडेण्ट ने दरबार में अपना पक्ष दृढ़ करके रानी जिन्दाँ को लाहौर से शेखूपुरा हटा दिया। वे अँगरेज़ अफ़सर, जो पंजाबी हाकिमों की "मदद" के लिए सीमान्त के ज़िलों में भेजे गये थे, पच्छिमी पंजाब की लड़ाकू मुस्लिम जातियों से षड्यन्त्र करने लगे। इस प्रकार एडवर्ड्स सिन्ध काँठे के टिवाणों को तथा ऐबट और निकल्सन हज़ारा ज़िले के हज़ारियों को उभाड़ रहे थे।

रणजीतसिंह के समय का मुलतान का नाज़िम दीवान सावनमल और उसका बेटा मूलराज सिक्ख राज्य के सब से योग्य शासकों में से थे। अब दीवान मूलराज से शासन ले लेने के लिए एक काहनसिंह और दो अँगरेज़ों को भेजा गया। मुलतान में बलवा हो गया (१९-४-१८४८ ई०); अँगरेज़ों के साथ के रक्षक मुलतानियों से जा मिले। मूलराज के शासन में प्रजा बहुत सुखी थी। उस इलाक़े के हिन्दू, सिक्ख, मुस्लिम, सभी उसके झंडे के नीचे जमा होने लगे। महारानी जिन्दाँकौर ने भी उसे पत्र भेज कर उत्साहित किया। रेज़िडेण्ट करी ने नूरुद्दीन की मदद से महारानी को क़ैद कर बनारस भेज दिया। सिक्ख सैनिक इसपर क्षुब्ध हो उठे। लेकिन उन्हें सूझता न था कि क्या करें। वे कहते, 'हमारी महारानी निर्वासित हो गयीं, दिलीपसिंह अँगरेजों के हाथ में है, लड़ें तो किसके लिए लड़ें! किन्तु यदि मूलराज चढ़ाई करे तो हम सरदारों और अफसरों को पकड़ कर उससे जा मिलेंगे।" इससे प्रकट है कि वीर और स्वाधीनता-प्रेमी सिक्ख अपना कोई राष्ट्रीय संगठन न होने के कारण किंकर्त्तव्यविमूढ हो गये थे।

मुलतान के बलवे को दबाने के बजाय करी उसके बहाने लाहौर-दरबार को ज़लील करने लगा। उसने दरबार से कहा कि बलवे को दबाओ, नहीं तो पंजाब को दख़ल किया जायगा। उधर एडवर्ड्स सिन्धसागर के क़बीलों को ले कर मूलराज से लड़ने लगा। दरबार की तरफ़ से सरदार शेरसिंह मूलराज के ख़िलाफ़ गया, पर उसकी सेना मूलराज से जा मिली (१४-६-१८४८ ई०)।

शेरसिंह का पिता चतरसिंह हरिपुर-हज़ारा में हाकिम था। इसी समय ऐबट ने हज़ारियों को भड़का कर उसे घिरवा दिया था। इस दशा में शेरसिंह भी उत्तर की तरफ़ गया और उसने सिक्खों की ओर से अँगरेज़ों के विरुद्ध युद्ध-घोषणा की। काबुल के अमीर दोस्तमुहम्मद ने सिक्खों को सहायता देने की सन्धि की। लेकिन लाहौर दरबार अब भी रेज़िडेण्ट के क़ाबू में रहा, और उसकी सेना अन्त तक अँगरेजों के हाथ में रही।

जंगी लाट गफ़ लाहौर से शेरसिंह के ख़िलाफ़ बढ़ा। शेरसिंह के पास उससे कम सेना थी। चिनाब के घाट रामनगर पर पहली मुठभेड़ हुई जिसमें किसी पक्ष की जीत न हुई। डेढ़ मास बाद जेहलम के काँठे में चिलियाँवाला पर शेरसिंह ने गफ़ को बुरी तरह हरा दिया (१३ जनवरी १८४६ ई०)। तब वह अँगरेजी सेना के गिर्द घूम कर लाहौर की तरफ़ बढ़ने लगा, जहाँ गुलाबसिंह भी उससे आ मिलने का इरादा कर रहा था। उधर दोस्तमुहम्मद के पठान भी युद्ध की गति-विधि को देख रहे थे। गफ़ ने सिक्ख सेना का पीछा किया और गुजरात पर उन्हें आ पकड़ा। यदि सिक्ख वहाँ शेरसिंह की योजना पर लड़ते तो गफ़ की शायद फिर हार होती और वह पठानों और सिक्खों के बीच घिर जाता, लेकिन अपने साथी सरदारों का बहुमत शेरसिंह को मानना पड़ा और गुजरात पर सिक्खों की हार हुई (२२ फ़रवरी १८४६ ई०)। तब वे फिर पीछे मुड़े। अँगरेजी सेना ने उनका पीछा किया। रावलपिंडी पहुँच कर सिक्खों ने आत्म-समर्पण कर दिया (१२ मार्च, १८४६ ई०)। उधर नौ मास तक बहादुरी से लड़ने के बाद मूलराज भी जनवरी में समर्पण कर चुका था। महारानी जिन्दाँकौर ने बनारस से भाग कर नेपाल में शरण ली।

लार्ड डलहौसी ने पंजाब पर दख़ल कर लिया (२६ मार्च १८४९ ई०), और तीन अफ़सरों का एक बोर्ड पंजाब के शासन के लिए नियत किया। बाद में बोर्ड के बजाय अकेले जौन लारेन्स को चीफ़ कमिश्नर बनाया गया। इन लोगों ने पंजाब को बहुत शीघ्र निःशस्त्र करके शान्त कर दिया, और सबसे अद्‌भुत बात यह की कि कुछ ही बरसों में स्वाधीनवृत्ति सिक्खों को पूरा भाड़े का सिपाही बना दिया।

§ ३. **दूसरा बरमा युद्ध**—बरमा तट के अराकान और तेनासरीम प्रान्त अँगरेज़ों के अधीन थे। उनके बीच का पगू का प्रान्त ले लेने से बंगाल की खाड़ी का समूचा तट उनके हाथ में आ जाता। यह भी ख़्याल था कि पगू में सोने की खानें हैं। इसलिए डलहौसी ने सन् १८५२ में उसे छीन लिया। वह घटना, जो कि एक अमेरिकन राजनेता के शब्दों में, "एक छीनाखसोटी की कहानी" है, संक्षेप में इस प्रकार है।

दो अँगरेज़ी नावों के कप्तानों ने बरमा के समुद्र में तीन बगाली माँझियों को मार डाला। रंगून की बरमी अदालत ने इसपर उन्हें १७१ पौंड जुरमाने की सज़ाएँ दीं। भारत सरकार ने इस पर बरमा-राज से ६२० पौंड हरजाना तलब किया, और उसे वसूल करने के लिए दो जंगी जहाज़ भेज दिये। बरमा के राजा ने हरजाना देना मान लिया। तब ब्रिटिश जहाज़ के नायक ने कहा कि उसके आदमियों का रंगून के शासक ने अपमान किया है और बरमा के राजा का बड़ा जहाज़ छीन लिया। वह बात ख़तम हुई तो डलहौसी ने इस चढ़ाई के खर्चे का १ लाख पौंड तलब किया, और उसके न मिलने पर पगू प्रान्त पर दख़ल कर लिया।

§. ४ **ज़ब्तियाँ और दख़ल**—भारतवर्ष को "समथर" बनाने की नीति कम्पनी के डायरेक्टर सन् १८३४ में ही निश्चित कर चुके थे, और उसके अनुसार कई छोटी-छोटी रियासतें राजाओं के निःसन्तान मरने पर ज़ब्त कर ली गयीं थीं। महाराष्ट्र में एक "इनाम कमीशन" जाँच कर रहा था, जिसने ३५ हज़ार "इनामों" (जागीरों) में से प्रायः २१ हज़ार को ज़ब्त करवाया। अब उसी तरह महाराष्ट्र में सतारा, बुन्देलखंड में जैतपुर तथा

उड़ीसा में सम्भलपुर रियासतें ज़ब्त की गयीं। १८५१ ई० में बिठूर में बाजीराव चल बसा; उसने नानासाहब नामक व्यक्ति को गोद ले रक्खा था। डलहौसी ने उसे बाजीराव वाली पेन्शन देना स्वीकार न किया।

सन् १८५३ में निज़ाम से बराड ले लिया गया। नज़र तो उसके समूचे राज्य पर थी, पर वह इस समय बच गया। उसी बरस झाँसी के राजा के मरने पर उसकी विधवा लक्ष्मीबाई के ग द लिये बेटे को गद्दी नहीं दी गयी। उसके बीस दिन बाद नागपुर में भी वही बात हुई। वहाँ से राजा के रत्न-आभूषण भी नीलामी के लिए कलकत्ते भेजे गये और हाथी-घोड़े सब माँस के मूल्य पर नीलाम कर दिये गये। अवध का नवाब वाजिदअली शाह १८४७ ई० में गद्दी पर बैठा था। वह अपनी सेना की क़वायद की ओर बहुत ध्यान देने लगा। १३ फ़रवरी सन् १८५६ को उससे राज ले कर उसे कलकत्ते में नजरबन्द कर दिया गया। इसके बाद डलहौसी भारत की बागडोर कैनिंग को दे कर इंग्लैंड चला गया।

सतारा के राजा और नानासाहब ने अपने एलची लन्दन भेजे। नानासाहब ने इस विषय में कुछ और भी सोच लिया था। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने कहा, "मेरा झाँसी देंगा नहि।" लक्ष्मीबाई बनारस में एक मराठा परिवार में पैदा हुई और बचपन में नाना की बहन की तरह बिठूर में पली थी।

———

अध्याय ५

स्वाधीनता का विफल युद्ध

§ १. **स्वाधीनता-युद्ध का आयोजन**—स्वाधीनता-युद्ध का विचार पहले-पहल शायद बिठूर में नानासाहेब और उसके मन्त्री अज़ीमुल्ला के बीच पैदा हुआ। लन्दन में अज़ीमुल्ला और सतारा के एलची रंगो बापूजी ने इस विषय पर परामर्श किया था। अज़ीमुल्ला अँगरेज़ी और फ्रान्सीसी दोनों भाषाएँ बोल सकता था। लन्दन से युरोप घूमता हुआ वह भारत लौटा। अँगरेज़ और रूसी तब क्रीमिया में लड़ रहे थे (१८५४–५६ ई०); इसलिए अज़ीमुल्ला ने समझा, भारत के उठने का यह अच्छा मौक़ा है। उसके भारत पहुँचने के बाद सन् १८५५ में उसने और नाना ने तथा रंगो बापूजी ने भारत के तमाम राज्यों को स्वाधीनता-युद्ध में शामिल होने के लिए निमन्त्रण भेजे। दिल्ली में बादशाह बहादुरशाह और बेगम ज़ीनतमहल, कलकत्ते में नवाब वाजिदअली शाह तथा उनका वज़ीर अलीनक़ीखाँ आदि उनकी योजना में सम्मिलित हो गये।

आन्दोलन के नेताओं ने देशभाइयों को सम्बोधित कर लिखा, "भाइयो, हम खुद ही विदेशी की तलवार अपने बदन में घोपते हैं।" इसलिए उन्होंने अँगरेज़ों की तमाम भारतीय सेना को अपनी तरफ़ मिलाने की कोशिश की और दूर-दूर तक गुप्त रूप से प्रचारक भेजे। इन प्रचारकों में से फ़ैज़ाबाद का मौलवी अहमदशाह आगे चल कर मुख्य नेताओं में से एक हुआ। अँगरेज़ी सरकार के बहुतेरे मुलाज़िम, पुलिस तथा अँगरेज़ों के बावर्ची, भिश्ती आदि भी संगठन में मिलाये गये।

सन् १८५५-५६ ई० में अँगरेज़ों का ईरान से भी युद्ध चलता था। ईरानियों ने हरात को घेरा, जिसके जवाब में अँगरेज़ों ने बुशहर बन्दर ले कर उन्हें घेरा उठाने को बाधित किया। मई १८५६ ई० में ईरान ने सन्धि की और

तब अँगरेज़ी सेना वहाँ से सीधे चीन की चढ़ाई के लिए जाने लगी। काबुल के अमीर दोस्त मुहम्मद से भी सिक्ख युद्ध के बाद १८५५ और १८५७ ई० में सन्धियाँ की गयीं।

सन् १८५३ से कम्पनी की फ़ौज में एक नये क़िस्म के कारतूस चले थे जिनकी टोपी दाँत से काटनी पड़ती थी। जनवरी १८५७ में कलकत्ते के पास बारकपुर छावनी के सिपाहियों को दमदम के कारख़ाने के एक मेहतर से मालूम हुआ कि उन्हें गाय और सुअर की चर्बी से चिकना किया जाता है। इस ख़बर ने देश भर में फैले अँगारो को एकाएक सुलगा दिया।

३१ मई १८५७ ई० सारे भारत में एक साथ विद्रोह करने का दिन नियत किया गया था। यह बात केवल छावनियों के नेताओं को मालूम थी; बाकी लोगों ने उनकी आज्ञा पालने का प्रण किया था। मार्च में नाना और अज़ीमुल्ला "तीर्थयात्रा" के लिए निकले और दिल्ली, अम्बाला, लखनऊ, कालपी में अपने संगठन को देखते तथा ज़ाहिरा अँगरेज़ अफ़सरो से दिल खोल कर मिलते हुए बिठूर लौट आये।

§२. **मंगल पाँडे और मेरठ का बलवा**—छावनियों के अन्दर विप्लव के नेताओं ने बड़ी कोशिश की कि कारतूसों के मामले से सिपाही भड़कें नहीं और ३१ मई तक बिलकुल शान्त रहें। लेकिन धर्मान्धता ने सिपाहियों को बेक़ाबू कर दिया। फ़रवरी में बारकपुर की एक पलटन ने उन कारतूसों को बर्त्तने से इनकार किया। उसी पलटन के मंगल पाडे नामक एक सिपाही ने २६ मार्च को पाँत के आगे कूद कर अपने साथियों को धर्म-युद्ध के लिए ललकारा, और तीन अफ़सरों को वहीं ढेर कर दिया। मंगल पांडे को फाँसी दी गयी, और बारकपुर की दो पलटनें तोड़ दी गयीं। अली नूकी ख़ाँ ने बड़ी होशियारी से बंगाल की छावनियों में अपने केन्द्र बनाये थे, और ये दोनों पलटनें उस सगठन में शामिल थीं। इनके अब निहत्थे हो बैठने से बंगाल के संगठन की कमर टूट गयी। मंगल पांडे के नाम से आगामी युद्ध में अँगरेज़ सभी विद्रोही सिपाहियों को पांडे कहने लगे।

मेरठ के रिसाले में ८५ सिपाहियों को चर्बी वाले कारतूस न छूने के अपराध में दस-दस साल की सज़ाएँ दी गयीं। उनके साथियों ने पहले तो निश्चित तिथि तक शान्त रहना तय किया, लेकिन जब वे शहर में से जाते थे तब शहर की स्त्रियों ने उन्हें ताने दिये कि तुम्हारे भाई तो क़ैद में गये और तुम मक्खियाँ मार रहे हो! उन्होंने उसी रात (६ मई) दिल्ली में नेताओं को ख़बर भेजी और दूसरे दिन बलवा करके दिल्ली को चल दिये। गोरी फ़ौज के अफ़सरों को भी यह न सूझा कि तोपख़ाने से उनका पीछा करें।

दूसरे दिन वे दिल्ली पहुँचे। वहाँ कोई गोरी फ़ौज न थी। अँगरेज़ अफ़सर एक देसी सेना को ले कर उनके मुकाबले को आये तो वह सेना भी विद्रोहियों से जा मिली। वे अफ़सर मारे गये और तार-बाबू पंजाब के कुछ स्थानों को ख़बर दे ही पाया था कि काट दिया गया। लाल क़िले में पहुँच कर विद्रोहियों ने सम्राट् बहादुरशाह से कहा कि हमारा नेतृत्व कीजिये। बहादुरशाह और बेगम ज़ीनतमहल ने देखा कि अब ३१ मई तक रुके रहना असम्भव है, इसलिए उन्होंने स्वाधीनता का एलान कर दिया। क़िले के पास बड़ा शस्त्रागार था; उसके भीतर नौ अँगरेज़ थे। उन्होंने उसे सौंपने के बजाय बारूदख़ाने में आग लगा कर अपने साथ २५ विद्रोहियों और अनेक शहरियों को भी उड़ा दिया। उसके बाद भी शस्त्रागार में बहुत बन्दूकें थीं जो विद्रोहियों के हाथ आयीं। शस्त्रागार पर अधिकार हो जाने के बाद बाकी सभी देसी पलटनें विद्रोहियों से मिल गयीं। १६ मई तक दिल्ली से अँगरेज़ी राज के सब चिह्न मिट गये।

§३. **दबाने की पहली चेष्टाएँ**—मेरठ-पलटन के इस उतावले कार्य से युद्ध की योजना गड़बड़ा गयी, और अंगरेज़ों को सँभलने का मौक़ा मिल गया। उत्तर भारत की देसी पलटनें प्रायः सब "पुरबियों"* अर्थात् अवध वालों की थीं। ये सब विप्लव के संगठन में आ गयीं थीं। विप्लव शुरू होते ही ये सब से पहले गोरी पलटनों पर हमला करतीं। इस दृष्टि से युद्ध की

*हमारे देश में दिशाओं की गिनती अन्तर्वेद से है। ठेठ हिन्दी के इलाके के पूरब सबसे पहले अवध पड़ता है, इसी से वहाँ के निवासी पुरबिये कहलाते हैं।

योजना में सबसे नाजुक कड़ी पंजाब था, क्योंकि एक तो वह "पुरबियों" के अपने घर से दूर था और दूसरे उत्तर भारत की प्रायः सब गोरी सेना पंजाब में जमा थी। अँगरेज़ों को पहले ख़बर मिल जाने से पंजाब की पुरबिया पलटनें खतरे में पड़ गयीं।

१३ मई को मियाँमीर (लाहौर) की देसी सेना को परेड के समय तोपखाने और गोरे रिसाले से घेर कर शस्त्र रखवा लिये गये। उसी दिन फ़ीरोज़पुर की पलटन ने बलवा कर दिया, और फ़ीरोज़पुर के महत्वपूर्ण नाके को शत्रु के हाथ छोड़ वह दिल्ली को चल दी!

२१ मई को पेशावर की पलटन से शस्त्र रखवाये गये, और उसके बाद पेशावर के उत्तर होती-मर्दान की पलटन पर चढ़ाई की गयी। इस पलटन के लोगों ने भागना चाहा, तब उन्हें पकड़-पकड़ कर तोपों के मुँह पर बाँध कर उड़ा दिया गया या सिन्ध नदी में बहा दिया गया।

उधर लार्ड कैनिंग ने दिल्ली की ख़बर पाते ही जंगी लाट को, जो शिमले में था, फ़ौरन दिल्ली पर चढ़ने का हुक्म दिया। जंगी लाट अम्बाला पहुँचा, पर जनता द्वारा पूरा बहिष्कार होने से रसद का सामान न जुटा सका। इस दशा में पटियाला, नाभा, और जींद के राजाओं ने उसे मदद दी। वे तीनों सिक्ख राजा जिनके इलाके जमना और सतलज के बीच पड़ते हैं, अँगरेज़ों के कारण ही अपनी हस्ती को क़ायम समझते थे। पहले वे रणजीतसिंह से बचने को अँगरेज़ों की शरण में गये थे, फिर सिक्ख युद्धों में अपने भाइयों के ख़िलाफ़ लड़े थे। अब उनकी मदद से अँगरेज़ी सेना रास्ते की ग्रामीण जनता को बीभत्स यातनाओं से मारती हुई दिल्ली की तरफ़ बढ़ी।

मेरठ वाली गोरी फ़ौज भी उससे मिलने को बढ़ी। इससे पहले कि वे मिल पाँय, ३० मई को दिल्ली के क्रान्तिकारियों ने मेरठ वाली फ़ौज पर हमला किया। गोरों ने उनके बायें पासे को तोपें छोड़ कर पीछे हटने को बाधित किया। लेकिन जब वे तोपों पर क़ब्जा करने को बढ़े तब तोपों के बीच छिपे हुए एक सिपाही ने पलीता लगा कर अपने साथ बहुत से गोरों को भी उड़ा दिया।

ईरान का युद्ध तभी समाप्त हुआ और अँगरेज़ों ने चीन से झगड़ा कर लिया था। लॉर्ड कैनिंग ने अब चीन जाती फ़ौज को लौटा लिया। लखनऊ के चीफ़ कमिश्नर हैनरी लारेन्स ने 'रेज़िडेन्सी' की क़िलाबन्दी शुरू की। उसी प्रकार कानपुर के सेनापति ह्वीलर ने एक क़िला बनाया। ह्वीलर ने उसके अलावा नानासाहेब से मदद माँगी। नाना कानपुर में आया और ह्वीलर ने ख़ज़ाने की रक्षा का काम उसे सौंप दिया!

§४. विप्लव का चौमुखा फूटना—(१) अन्तर्वेद और अवध— ३१ मई से १० जून तक रुहेलखंड, दोआब और अवध के हर ज़िले में सेना और प्रजा ने स्वाधीनता की घोषणा कर बहादुरशाह का हरा झंडा फहराया और अँगरेज़ी राज के चिह्न मिटा दिये। रुहेलखंड में बहादुरख़ाँ ने नये शासन का संगठन किया; इलाके की रक्षा के लिए स्वयम्सेवक भरती किये और बरेली की पलटन को बख़्तख़ाँ के नेतृत्व में दिल्ली भेज दिया।

कानपुर में अँगरेज़ों ने नये क़िले में शरण ली, और नाना ने ६ जून से उसका मोहासरा शुरू किया। इलाहाबाद के क़िले में कुछ सिक्ख सेना थी। क्रान्तिकारियों की उन्हें समझाने की सब कोशिशें बेकार हुईं और उस क़िले पर अँगरेज़ी झंडा फहराता रहा। बनारस के आसपास विद्रोह होने पर ४ जून को बनारस की देसी सेना से शस्त्र रखवाने की कोशिश की गयी। लेकिन उन्होंने मुकाबला किया और इलाके में फैल गये। बनारस के राजा तथा सिक्ख सैनिकों की मदद से शहर पर अँगरेज़ों का अधिकार बना रहा।

अवध में केवल लखनऊ शहर हेनरी लॉरेंस के हाथ में बना रहा। स्वाधीनता के प्रचारक अहमदशाह को फाँसी की सजा सुना कर फ़ैजाबाद जेल में रक्खा गया था। उसे विद्रोहियों ने फाँसी की कोठरी से निकाल कर क्रान्ति का नेता बनाया। अन्तर्वेद में अनेक जगह और अवध में प्रायः सब जगह युद्ध के नेताओं ने व्यक्तिगत रूप से अँगरेज़ों को अपने घरों में शरण दी और लखनऊ या बनारस पहुँचा दिया। ये अँगरेज़ इलाकों के

जानकार थे और इन्होंने गोरी सेना के साथ शीघ्र लौट कर क्रान्ति के दबाने में बड़ी मदद की।

(२) **बिहार-बंगाल**—बिहार-बंगाल में उत्तेजना काफ़ी थी। तो भी बिहार का संगठन उतना मज़बूत न था, इसी से ठीक समय पर वहाँ कुछ न हुआ। कलकत्ते में १४ जून को बारकपुर की एक और पलटन से शस्त्र रखवा लिये गये, और १५ जून को वाजिदअली शाह और अली नक़ी ख़ाँ को क़िले में क़ैद कर दिया गया।

(३) **विन्ध्यमेखला**—नसीराबाद (अजमेर) की पलटन २८ मई को ही विद्रोह कर दिल्ली की तरफ़ चल दी। झाँसी की रानी और बाँदा का नवाब अन्तर्वेद के साथ ही उठे। ग्वालियर में कम्पनी की सेना १४ जून को विद्रोह करके जयाजीराव शिन्दे से कहने लगी कि हमारा नेतृत्व करो और आगरा, दिल्ली, कानपुर पर चढ़ाई करो। "शिन्दे के लिए बदला लेने का बहुत ही बढ़िया मौक़ा था। यदि वह इस सेना के साथ अपनी मराठा सेना को भी ले कर निकलता तो आगरा और लखनऊ एकदम ले लिये जाते,······ इलाहाबाद के क़िले का घेरा पड़ जाता और······विद्रोही बनारस के रास्ते कलकत्ते पर जा पहुँचते।" लेकिन शिन्दे अपने मन्त्री दिनकरराव की सलाह से विद्रोहियों को टालता रहा और वह सेना वहीं खाली बैठी रही।

मऊ की पलटन ने विद्रोह कर इन्दौर की रेज़िडेन्सी पर हमला किया। होल्कर की अपनी सेना भी उनसे मिलना चाहती थी, पर होल्कर भी उसी तरह टालता रहा। प्रजा ने इन राजाओं को उभाड़ने की कोशिश की, पर ये लोग न उठे।

नसीराबाद और नीमच की पलटनें ५ जुलाई को आगरा पर आ टूटीं। अँगरेज़ों ने क़िले में शरण ली। भरतपुर के राजा की सेना विद्रोहियों के मुक़ाबले को भेजी गयी। उन लोगों ने कहा—हम ख़ुद विद्रोह न करेंगे, क्योंकि हमारे राजा का हुक्म नहीं है, पर अपने इन भाइयों पर गोली न चलायेंगे। ऐसा ही बर्त्ताव जयपुर जोधपुर की सेनाओं ने भी किया। स्पष्ट है कि राज-

पूताने और मालवे में प्रजा और सेना सब जगह स्वतन्त्र होने को तत्पर थी, पर जिनसे वह नेतृत्व और संचालन की आशा करती थी उन्होंने धोखा दिया।

(४) **पंजाब और नेपाल**—जालन्धर और फिलौर की पुरबिया पलटनों पर अँगरेज़ों को सन्देह न हुआ था। ६ जून को ये विद्रोह कर लुधियाना की तरफ़ बढ़ीं। लुधियाने के अँगरेज़ों ने सतलज का पुल तोड़ दिया और नाभा की सिक्ख सेना के साथ घाट पर सामना किया। तो भी क्रान्तिकारियों ने नदी पार कर ली, गोरों और सिक्खों को भगा दिया और लुधियाने पर कब्ज़ा कर लिया। इसके बाद वहाँ उनका कोई नेता न होने से वे दिल्ली चले गये। यदि वे लुधियाने पर कब्ज़ा बनाये रखते तो पंजाब से दिल्ली जाने वाली कुमुक का रास्ता काट सकते, तथा पटियाला, नाभा और जींद के देशद्रोहियों पर पीछे से चोट कर सकते।

सिक्खों को अपनी स्वतन्त्रता गँवाये आठ ही बरस बीते थे, पर उनके देश पर काबू रखने वाली अँगरेज़ी सेना का बड़ा अंश जब विद्रोह कर के चला गया तब भी उन्होंने सिर न उठाया। वे पिछली हार से पस्तहिम्मत हो गये थे, और अब उनके सामने अँगरेज़ों ने विद्रोहियों को जैसे कुचल दिया उससे उनपर अँगरेज़ों की संगठित शक्ति का आतंक और भी जम गया। उनके सरदार पहले से ही विश्वासघाती थे। अँगरेज़ों ने १८४८ ई० में पंजाबी मुसलमानों को सिक्खों के ख़िलाफ़ उभाड़ा था; अब क्योंकि युद्ध का नेता सम्राट् बहादुरशाह था इसलिए सिक्खों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ उभाड़ा! सरहद्दी मुस्लिम क़बीले इस वक़्त चढ़ाई न करें इसलिए मुल्लों को घूस दे कर उनमें प्रचार करने भेजा। यों पंजाब की वीर जातियाँ लज्जास्पद रूप से बेवकूफ़ बनती रहीं। इसके अलावा जॉन लॉरेन्स ने पंजाब के ज़िलों से ६ प्रतिशत सूद पर कम्पनी के लिए एक क़र्ज़ उठाया। लोगों ने काफ़ी दबाव पड़ने पर अपना रुपया दिया, लेकिन जब एक बार दे दिया तो उनका स्वार्थ अँगरेज़ों के साथ बँध गया।

नेपालियों ने अपनी १८१६ ई० वाली हार का बदला लेने की जैसी कोशिशें कीं थीं, वैसी किसी और भारतीय जाति ने न कीं थीं। अब भी अँगरेज़ वह

सोचते थे कि नेपाली इस मौके को न चूकेंगे। लेकिन जंगबहादुर पूरी तरह अँगरेज़ों के साथ था और उसके नेतृत्व में गोरखों ने अँगरेज़ों का साथ दिया।

(५) दक्खिन—दक्खिन में विप्लव संगठित रूप से नहीं हो सका। अँगरेज़ों ने पहले-पहल भारतीय सेना मद्रास में ही भरती की थी और वह प्रायः तिलंगों अर्थात् आन्ध्रों की थी। क्रान्ति के नेता तिलंगों तक नहीं पहुँच सके। हैदराबाद की प्रजा और सेना में जून-जुलाई में बड़ी उत्तेजना थी; लेकिन निज़ाम के वज़ीर सलारजंग ने उसे दबा कर बराबर अँगरेज़ों का साथ दिया। नागपुर की पलटन १३ जून को उठना चाहती थी, पर उससे पहले ही मद्रासी सेना ने वहाँ पहुँच कर उसे दबा दिया। इसी तरह बम्बई की पल्टन की दशा हुई। कोल्हापुर, बेलगाँव और जबलपुर में जुलाई, अगस्त, सितम्बर में विद्रोह हुए जो दबा दिये गये। रंगो बापूजी को भागना पड़ा, उसके लड़के को फाँसी दी गयी। दक्खिनी महाराष्ट्र में सन् १८५८ तक कुछ विफल चेष्टाएँ होती रहीं।

§ ५. इलाहाबाद और कानपुर का पतन—अम्बाला और मेरठ वाली अँगरेज़ी सेनाएँ ७ जून को दिल्ली के पास आ मिलीं। एक गोरखा पलटन भी उनसे आ मिली थी। दिल्ली के पास बुन्देल-की-सराय पर क्रान्तिकारियों से उनकी गहरी लड़ाई हुई। उसके बाद सेनापति बर्नार्ड ने दिल्ली के पच्छिम पहाड़ी पर डेरा लगा दिया।

पंजाब और बंगाल में क्रान्तिकारी संगठन टूट जाने और बिहार के फ़िलहाल चुप रहने से अँगरेज़ दिल्ली और बनारस से अपनी कार्रवाई शुरू कर सके। बनारस से सेनापति नील इलाहाबाद की तरफ़ बढ़ने लगा। रास्ते के गाँवों में आम रास्तों पर टिकटिकियाँ खड़ी कर उसके सैनिक निहत्थे आदमियों को फाँसी चढ़ाते जाते। इसके बाद वे आम और नीम के पेड़ों पर लोगों को लटकाने लगे। फाँसी चढ़ने वालों के अंगों से अँगरेज़ी ८ और ६ अंकों की शक्लें बना कर वे विनोद करते। उसके बाद यातना देने की कला के कई नये तरीक़े उन्होंने ईजाद किये। आदमी की गर्दन में

लकड़ियाँ बाँध कर जला देना, युवतियों के केशों और कपड़ों में आग लगा कर तमाशा देखना और समूचे गाँवों को घेर कर आग लगा कर तमाम प्राणियों सहित भून देना—ये उस अँगरेजी सेना के विनोद के कुछ तरीके थे।

११ जून को नील इलाहाबाद पहुँचा और क़िले पर अँगरेज़ी झंडा देख कर चकित हुआ। ४०० सिक्खों ने उस झंडे की रक्षा की थी। नील ने फ़ौरन गोरों को क़िले के भीतर रख कर सिक्खों को गाँव जलाने भेज दिया। एक हफ्ते की लड़ाई के बाद उसने इलाहाबाद शहर पर अधिकार कर के उसी तरह बदला चुकाया। कानपुर में घिरे हुए अँगरेज़ तब नील को मदद के लिए पुकार रहे थे। लेकिन नील के सब पैशाचिक कृत्यों के बावजूद भी देहाती जनता दबी न थी और इसीलिए वह समय पर कानपुर न पहुँच सका।

कानपुर के अँगरेज़ों ने निराश हो २५ जून को शस्त्र रख दिये। नाना-साहेब ने उनके प्रयाग पहुंचाने के लिए नावों का प्रबन्ध कर दिया। सतीचौरा घाट पर उन्हें विदा करने को अज़ीमुल्ला तथा नाना का भाई बालासाहेब उपस्थित थे। तभी नील के जुल्मों से पीड़ित लोग, जो कानपुर में जमा हो रहे थे, बदले की पुकार मचाने लगे। ज्योंही नावें चलीं कि लोग उन पर टूट पड़े। नाना के पास यह खबर पहुँची तो उसने हुक्म भेजा कि स्त्रियों और बच्चों को बचाया जाय। १२५ स्त्रियाँ-बच्चे, जो वहाँ थे, बचा कर नज़रबन्द रक्खे गये और पुरुष सब पंक्ति में खड़े कर मार डाले गये।

कानपुर की लड़ाई खतम होते ही लखनऊ पर क्रान्तिकारियों का दबाव बढ़ा और २६ जून को हेनरी लारेन्स ने चिनहट गाँव पर उनसे हार कर रेज़िडेन्सी में शरण ली। क्रान्तिकारियों ने वाजिदअली शाह के नाबालिग बेटे को अवध का नवाब घोषित किया। उसकी माँ हज़रतमहल उसके नाम पर शासन चलाने लगी।

तभी सेनापति हैवलाक, जो ईरान से लौटा था, मुख्य अफ़सर नियत हो इलाहाबाद पहुँचा, और गाँवों को घेर कर जलाता हुआ कानपुर की तरफ़

बढ़ा। नाना की सेना को हरा कर उसने फ़तहपुर में प्रवेश किया और उस शहर को लूटने के बाद ज़िन्दा भून दिया। ख़बर पा कर नाना खुद मुक़ाबले के लिए बढ़ा। तभी अँगरेज़ों के कुछ जासूस पकड़े गये जिनसे यह भेद खुला कि बीबीगढ़ की कोठी में नज़रबन्द अँगरेज़ स्त्रियाँ चोरी से इलाहाबाद ख़बरें भेजती रही हैं। इस बात से तथा फ़तहपुर की घटना से उत्तेजित कुछ सिपाहियों ने नाना की इजाज़त बिना उन सब को क़त्ल करके पड़ोस के कुएँ में फेंक दिया*। एक सख़्त लड़ाई में नाना को हराने के बाद १७ जुलाई को हैवलाक ने कानपुर में प्रवेश किया। नाना फ़तहगढ़ (फ़र्रुख़ाबाद) की तरफ़ हट गया।

§६ **दिल्ली का पतन**—इस बीच दिल्ली पर सख़्त लड़ाई जारी थी। पंजाब से जान लारेन्स अँगरेज़ों को बराबर नयी कुमुक भेज रहा था। शहर के भीतर शस्त्रों के कारख़ाने खुले थे जिनमें तत्परता से काम हो रहा था। बादशाह ने एक ऐलान निकाल कर स्वाधीन भारत में गो-हत्या की मुमानियत कर दी।

१२ जून से क्रान्तिकारियों ने बाहर निकल कर अँगरेज़ी फ़ौज पर हमले शुरू किये। लेकिन उनमें योग्य नेता की कमी थी। शुरू में शाहज़ादे सेनाओं के नेता बनाये गये। वे नेतृत्व तो क्या करते, उलटा उनकी उच्छृंखलता से शहर में अव्यवस्था मची रहती। इस दशा में बरेली के सेनापति बख़्तख़ाँ की ओर सब की निगाहें लगी थीं। २ जुलाई को वह दिल्ली पहुंचा और बादशाह के हुक्म से प्रधान सेनापति नियत हुआ। बख़्तख़ाँ ने तमाम जनता को शस्त्रबद्ध होने का हुक्म दिया। ३ जुलाई की परेड में २० हज़ार सेना दिल्ली में मौजूद थी। अगले रोज़ ख़ुद बख़्तख़ाँ ने पहाड़ी पर हमला किया। ६ से १४ जुलाई तक पहाड़ी पर सख़्त लड़ाई होती रही।

बख़्तख़ाँ योग्य और वीर सेनापति था, लेकिन वह साधारण कुल का था। उस युग के भारतवासी नेतृत्व को ऊँचे कुल की पैदाइश से अलग कर

* इन स्त्रियों की बेइज्जती और अंगच्छेद किये जाने की अनेक कल्पित कहानियाँ बना ली गयीं थीं जो तहक़ीक़ात से सब निर्मूल सिद्ध हुईं।

के न देख सकते थे। इसी से बख्तख़ाँ के आदेश पूरी तरह न माने जाते। जो लोग भाड़े के सिपाही होने की दशा में किसी भी गोरे के हुक्म पर जान देने को भी दौड़ पड़ते थे वही स्वाधीन होने पर अपने नेता के आदेश मानने में ननु-नच करते! यदि जयाजीराव शिन्दे जैसा कोई नेता क्रान्तिकारियों को मिल जाता तो उनकी सफलता में कोई सन्देह न था। इस दशा में उदारचेता बहादुरशाह ने अनेक भारतीय राजाओं के पास इस आशय का पत्र अपने हाथ से लिख कर भेजा—"मेरी यह ख़्वाहिश है कि तमाम हिन्दोस्तान आज़ाद हो जाय। इसके लिए जो क्रान्तिकारी युद्ध शुरू किया गया है वह तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक कोई ऐसा शख़्स जो क़ौम की मुख़्तलिफ़ ताक़तों को संगठित कर एक ओर लगा सके और जो अपने को तमाम क़ौम का नुमाइन्दा कह सके, मैदान में आ कर इस क्रान्ति का नेतृत्व अपने हाथों में न ले ले। अँगरेज़ों के निकाल दिये जाने के बाद अपने ज़ाती फ़ायदे के लिए हिन्दोस्तान पर हकूमत करने की मुझ में ज़रा भी ख़्वाहिश नहीं है। अगर आप राजा लोग आगे आने को तैयार हों तो मैं अपने तमाम शाही अख़्तियार आप के किसी ऐसे संघ के हाथ में सौंप दूँगा जिसे इस काम के लिए चुन लिया जाय।"

इस बीच पंजाब से एक नयी सेना और तोपख़ाना ले कर निकल्सन दिल्ली आ रहा था। बख़्तख़ाँ ने उसका रास्ता काट कर तोपें छीनने का निश्चय किया और नजफ़गढ़ की ओर बढ़ा (२५ अगस्त)। वहाँ पहुँचने पर नीमच वाली पलटन ने बरेली वाली पलटन के पास डेरा डालना स्वीकार न किया और बख्तख़ाँ की आज्ञा न मान कर एक पड़ोसी गाँव में डेरा डाला! निकल्सन ने उन्हें अलग पड़ा देख कर हमला किया। नीमच वाली पलटन [illegible] लड़ती हुई समूची काटी गयी। वह वीरता किस काम की थी?

[illegible] अँगरेज़ी सेना ने बढ़ कर आक्रमण करना शुरू किया। [illegible] दिल्ली की फ़सील पर हल्ला बोला। गोले-गोलियों की बौ[illegible]रवाज़े का एक हिस्सा उड़ा कर निकल्सन के नेतृत्व में उ[illegible]स गये। भीतर भी चप्पा-चप्पा ज़मीन के लिए

सख्त लड़ाई जारी रही। एक तंग गली में अक्षरशः खून की धारा बह गयी
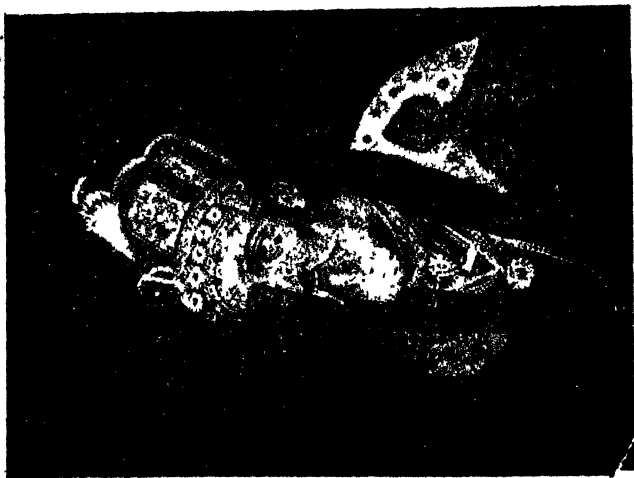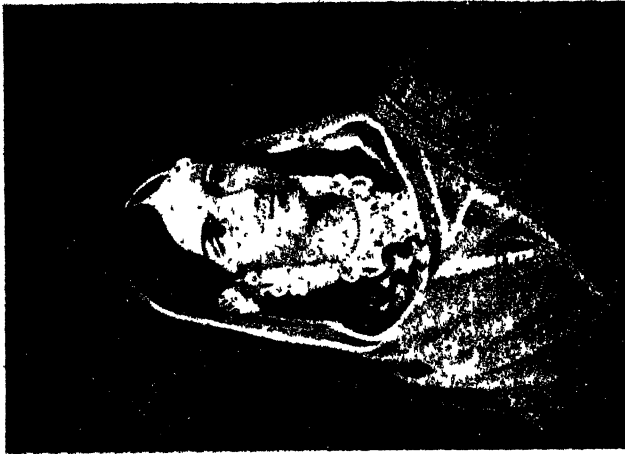
बहादुरशाह और ज़ीनतमहल

दिल्ली के हाथी दाँत पर बना हुआ समकालीन चित्र

और निकल्सन सहित अँगरेज़ों के तीन नेता गिर गये। सेनापति विल्सन ने

लौटना तय किया। "लौटना !" घायल पड़े निकल्सन ने चीख कर कहा—"लौटने की बात की तो मुझ में अब भी इतना दम है कि विल्सन की जान ले लूँगा !" क्रान्तिकारियों का एक दल दिल्ली छोड़ कर प्रान्त में फैल गया; दूसरा दल दस दिन तक उसी तरह डट कर लड़ता रहा। जब तीन-चौथाई शहर लिया जा चुका तो बख्तखाँ ने सम्राट् से कहा कि आप मेरे साथ निकल चलें, हम इलाके में युद्ध जारी रक्खेंगे। लेकिन बादशाह के एक सम्बन्धी ने बादशाह को धोखा दे कर पकड़वा दिया। वही आदमी हडसन नामक अँगरेज के हाथ अनेक शाहज़ादों को पकड़वाता रहा। बादशाह और बेगम ज़ीनत-महल रँगून भेजे गये, शाहज़ादे मार डाले गये।

इसके बाद क़त्ले-आम और बलात्कार की बारी आयी। एल्फ़िन्स्टन के शब्दों में अँगरेजों ने "नादिरशाह को निश्चय से मात कर दिया।" पुरुष, स्त्री, बच्चे की कोई तमीज़ न थी। "सब ओर मुर्दों का बिछौना बिछा हुआ था। हमारे घोड़े इन्हें देख कर डर से बिदकते थे।" अपनी इज्ज़त बचाने को कुओं में कूदने वाली स्त्रियों के कारण अनेक कुएँ पट गये। बदला चुकाने के कई नये तरीके बरते गये—जैसे जिन्दा आदमी को संगीनों से छुवा कर धीमी आँच पर भूनना, या ताँबे के जलते टुकड़ों से दाग़ कर मारना आदि। और शर्म के साथ यह दर्ज करना पड़ता है कि इन कामों में सिक्ख गोरों का साथ दे रहे थे। गुरु नानक के अनुयायियों का इतना पतन आश्चर्य-जनक प्रतीत होता है। लेकिन एक बार जब आदमी गुलामी स्वीकार कर ले और भाड़े का सिपाही बन जाय तब उसमें और पशु में कोई अन्तर नहीं रह जाता।

तीन दिन की खुली लूट के बाद बाक़ायदा एक "लूट-दफ़्तर" (प्राइज़ एजेन्सी) कायम किया गया जिसने दिल्ली को पूरी तरह उजाड़ डाला।

इधर अवध में गहरा युद्ध जारी था। २० जुलाई को लखनऊ रेज़िडेन्सी पर क्रान्तिकारियों ने पहला हमला किया। हेनरी लारेन्स गोली का शिकार हुआ। नील को कानपुर में छोड़ हैवलाक गंगा-पार कर लखनऊ रवाना हुआ। लेकिन उस इलाके की तमाम प्रजा अँगरेज़ों के खिलाफ़ खड़ी थी और तीन

बार कोशिश करने पर भी वह गंगा से आगे न बढ़ सका। इसके अलावा, जब उसने गंगा पार की तो नाना बिठूर को वापिस ले कर कानपुर की तरफ़ बढ़ा, और तभी ख़बर आयी कि बिहार में भी विद्रोह भड़क उठा है। २५ जुलाई को पटना में पीर अली नामक नेता को फाँसी दी गयी, जिसपर दानापुर की पलटन विद्रोह कर शाहाबाद ज़िले में जगदीशपुर के राजा कुँवरसिंह के यहाँ चली गयी, और उस अस्सी बरस के बूढ़े राजा ने आरा शहर पर हमला किया। १२ अगस्त को हैवलाक कानपुर वापिस आ गया; १७ को उसने नाना के सेनापति तात्या टोपे को हराया। तब उसने कुमुक के लिए कलकत्ते सन्देश भेजा। इस बीच कुँवरसिंह को अँगरेज़ों ने जंगलों में भगा दिया था और नेपाल का जंगबहादुर पूरबी अवध पर चढ़ाई करने पर क्रान्तिकारियों द्वारा पीछे धकेल दिया गया था।

लखनऊ के भीतर भी क्रान्तिकारियों की वही दशा थी जो दिल्ली में। बहादुरी थी, लेकिन नियन्त्रण और अनुशासन का तथा सञ्चालन की एकसूत्रता का अभाव था। क्रान्तिकारियों की तोपों ने एक बार रेज़िडेन्सी की दीवार में इतना बड़ा छेद कर दिया कि समूची सेना भीतर घुस सकती थी; पर किसी ने उससे लाभ न उठाया। केवल तीन आदमियों ने भीतर घुसने की कोशिश की; और उन तीन ने चाहे निकल्सन से बढ़ कर वीरता दिखायी, तो भी सामूहिक चेष्टा के बिना वह वीरता किस काम की थी?

नयी कुमुक के साथ १५ सितम्बर को आउटराम कानपुर पहुँचा। अब हैवलाक के बजाय उसे मुख्य अफ़सर नियत किया गया था। जब हैवलाक मुख्य अफ़सर नियत हो कर आया था तो नील ने उसके प्रति कुछ गुस्ताख़ी की थी। हैवलाक ने उसे लिखा, "यदि सार्वजनिक हित में बाधा पड़ने का डर न होता तो मैं तुम्हें क़ैद कर लेता।" उसके बाद नील रूठ नहीं गया, प्रत्युत सच्चे दिल से सहयोग देता रहा। आउटराम ने आ कर देखा कि हैवलाक यदि लखनऊ की तरफ़ नहीं बढ़ सका तो इसमें उसका कुछ दोष न था। इसलिए उसने पहला आदेश यही दिया कि "मैं वीर हैवलाक को अपने पद का अधिकार सौंपता हूँ; लखनऊ का मोहासरा उठने तक मैं

एक स्वयम्सेवक की तरह उसके अधीन काम करूँगा।" अँगरेज़ अपने सार्वजनिक चरित्र में व्यक्तिगत भावों को किस प्रकार अनुशासित कर लेते हैं!

अब हैवलाक, आउटराम और नील तीनों गंगा पार कर २३ सितम्बर को लखनऊ के पास आ निकले। दो दिन बाद वे शत्रु की पाँतों में से रास्ता काटते हुए रेज़िडेन्सी में जा पहुँचे। लेकिन वे खुद अपने साथियों की तरह मोहासरे में फँस गये। नील उस लड़ाई में मारा गया।

§७. **लखनऊ और झाँसी का पतन**—भारत में क्रान्ति शुरू होते ही इंग्लैंड से गोरी सेनाओं और अनुभवी सेनापतियों की कुमुक रवाना की गयी। ऐसे दो सेनापति सर कालिन कैम्बेल और सर ह्यू रोज़ अब कलकत्ता और बम्बई पहुँच गये थे। कैम्बल कलकत्ते से जंगी बेड़े के साथ चल कर ३ नवम्बर को कानपुर पहुँचा। उधर दिल्ली से एक अँगरेज़ सेनापति दोआब में नील से बढ़ कर ज़ुल्म करता हुआ कानपुर आया। कानपुर से कैम्बल लखनऊ गया और १४ नवम्बर को रेज़िडेन्सी की तरफ़ बढ़ने लगा। १० दिन की सख़्त कशमकश के बाद, जिसमें मकानों के एक-एक कमरे और एक-एक सीढ़ी के लिए लड़ाई होती रही, वह रेज़िडेन्सी का उद्धार कर सका। शहर तब भी क्रान्तिकारियों के हाथ में रहा।

कैम्बल जिस दिन लखनऊ पहुँचा, उसी दिन तात्या टोपे ने कालपी का क़िला ले लिया और उसके बाद कानपुर के अँगरेज़ नायक को घेर कर "अँगरेज़ी सेना से उसका कैम्प, उसका सामान और मैदान सब कुछ छीन कर" शहर ले लिया। कैम्बल को लखनऊ से लौटना पड़ा। कानपुर वापिस ले कर उसने तात्या को कालपी भगा दिया।

अब अवध, रुहेलखंड, दोआब और बुन्देलखंड क्रान्ति के मुख्य क्षेत्र थे। इसलिए कैम्बल ने एक सेनापति को कानपुर से इटावा के रास्ते दोआब में भेजा; दो अँगरेज़ सेनापति और तीसरा जंगबहादुर पूरब से लखनऊ की ओर बढ़े; और सर ह्यू रोज़ बम्बई से मऊ आ कर बुन्देलखंड की तरफ़ चला।

लखनऊ में मौलवी अहमदशाह ने कोशिश की कि अँगरेज़ी सेना के अवध तक पहुँचने से पहले आउटराम की टुकड़ी का सफ़ाया कर दे। "अहमद-शाह एक महान आन्दोलन और एक बड़ी सेना दोनों का नेतृत्व करने के योग्य था।" लेकिन वह भी बख़्तखाँ की तरह साधारण कुल का था, और उसके आदेश पूरी तरह माने न जाते थे। एक बार तो उसके प्रतिस्पर्द्धियों ने बेगम हज़रतमहल को बहका कर उसे क़ैद तक करा दिया। बाद में छुटने पर उसके साथ बेगम खुद भी मैदान में आयी, लेकिन उसी असंगठित रूप से काम होता रहा।

कैम्बल दोआब से फिर लखनऊ घूमा। पूरब से आने वाली तीनों सेनाएँ मार्च में उससे आ मिलीं। ६ से १५ मार्च तक लखनऊ शहर में वैसी ही लड़ाई हुई जैसी सितम्बर में दिल्ली में हुई थी; और बाद में वैसी ही घटनाएँ। हज़रतमहल और अहमदशाह ने मोहासरे में से निकल कर युद्ध जारी रक्खा।

अँगरेज़ी सेनाएँ जब अवध पर चढ़ाई कर रहीं थीं, तब कुंवरसिंह आज़म-गढ़ ले कर बनारस की तरफ़ बढ़ा। शत्रु का आधार काटने की उसकी इस कोशिश से कैनिंग को, जो इलाहाबाद में था, चिन्ता हुई। लेकिन कुँवरसिंह इसे छोड़ कर जगदीशपुर चला गया, जहाँ रास्ते के एक घाव से उसकी मृत्यु हुई।

मऊ से चल कर, सागर और चन्देरी लेते हुए ह्यू रोज़ झाँसी की तरफ़ बढ़ा। एक अँगरेज़ सेनापति ने तभी जबलपुर से सागर के रास्ते बाँदा पर चढ़ाई की। लक्ष्मीबाई ने झाँसी के चौगिर्द इलाक़े को वीरान कर दिया था, लेकिन ग्वालियर और ओरछा राज्यों की मदद के कारण रोज़ को रसद की तकलीफ़ न हुई। २० मार्च को वह झाँसी के सामने पहुँचा; २४ को रानी ने लड़ाई शुरू की। तात्या टोपे रानी की मदद के लिए बढ़ा; लेकिन रोज़ ने उसे हरा कर भगा दिया। सख्त लड़ाई के बाद ३ एप्रिल को अँगरेज़ी सेना एक भारतीय गद्दार की मदद से झाँसी के किले में जा घुसी। लक्ष्मीबाई १०-१५ साथियों के साथ निकल भागी, और पीछा करने वालों को काटते-

गिराते कालपी जा पहुँची। बाँदा और महोबा के सर हो जाने पर बाँदा का नवाब अलीबहादुर भी वहीं आ पहुँचा।

§८. **अवध, रुहेलखंड और विन्ध्यमेखला में पिछली कशमकश**—लखनऊ के पतन के बाद अवध के नेताओं ने क्रान्तिकारियों के नाम आदेश निकाला, "खुले मैदान में दुश्मन का सामना मत करो; नदियों के घाटों पर पहरा रक्खो, दुश्मन की डाक काटो, रसद रोको और चौकियाँ तोड़ दो। फिरंगी को चैन न लेने दो।" यह एक दो हारों से ख़त्म होने वाला युद्ध नहीं था। नानासाहब, हज़रतमहल और अहमदशाह मैदान में थे। दिल्ली का एक शाहज़ादा फ़ीरोज़ भी वहीं आ पहुँचा था। कैम्बल ने उन्हें उत्तर की तरफ़ धकेलने की कोशिश की। इस कोशिश में उसका एक साथी सेनापति मारा गया। शाहजहाँपुर को ले कर कैम्बल रुहेलखंड की तरफ़ बढ़ा जो बहादुरख़ाँ के नेतृत्व में अब तक स्वाधीन था। ५ मई को बहादुरख़ाँ सहित सब नेता बरेली में घिर गये, लेकिन शहर सर होने तक वे सब निकल गये। अहमदशाह ने फिर शाहजहाँपुर ले लिया, और जब कैम्बल ने उसे वहाँ घेरा तो नाना, हज़रतमहल और फ़ीरोज़ मदद को पहुँच उसे बचा लाये। ५ जून को अवध के एक ग़द्दार ज़मींदार ने अहमदशाह की दग़ा से हत्या करके उसका सिर अँगरेज़ी डेरे में पहुँचा दिया। एक अँगरेज़ ऐतिहासिक के शब्दों में "मौलवी अहमदशाह सच्चा देशभक्त था। उसने किसी निहत्थे की हत्या से अपनी तलवार पर धब्बा न लगाया था। संसार के वीर और सच्चे लोगों में उसका नाम आदर के साथ याद किया जाना चाहिए।"

कालपी में तात्या टोपे, लक्ष्मीबाई और अलीबहादुर के अतिरिक्त नानासाहब का भतीजा रावसाहब तथा बुन्देलखंड के अनेक सरदार जमा हुए थे। डेढ़ मास के अवकाश में वे अपना एक नेता न चुन सके। तात्या टोपे, जिसमें अँगरेज़ों के दृष्टि से "एक सच्चे सेनापति के स्वाभाविक गुण मौजूद थे", बहुत ही साधारण कुल में पैदा हुआ था—वह बाजीराव के दानाध्यक्ष का बेटा था। लक्ष्मीबाई स्त्री थी, और सो भी सिर्फ़ २२ वर्ष की

लड़की ! ये लोग इसी पसोपेश में रहे कि ह्यू रोज़ कालपी की तरफ़ बढ़ आया। लक्ष्मीबाई ने तब दक्खिन बढ़ कर कोंच पर उसका मुकाबला किया, लेकिन वह उसे रोक न सकी और रोज़ ने कालपी भी ले ली (२४ मई)। क्रान्तिकारी नेता बच कर निकल गये।

महारानी लक्ष्मीबाई

[महारानी के भतीजे श्री गोविन्द चिन्तामण ताम्बे के सौजन्य से]

इसके बाद एक नयी योजना के अनुसार तात्या गुप्त रूप से ग्वालियर गया। उसके लौटने पर २८ मई को सब ने जयाजीराव शिन्दे के पास पत्र भेजा, "हमारे और अपने पुराने सम्बन्ध को याद कीजिये। हमें आपसे सहायता की आशा है, जिससे हम दक्खिन की ओर बढ़ सकें।" मदद देने के बजाय शिन्दे मुकाबले के लिए निकला; पर उसकी सेना क्रान्तिकारियों से आ मिली, और वह आगरा की ओर भाग गया।

ग्वालियर में दरबार करके रावसाहब को पेशवा तथा तात्या को उसका सेनापति नियत किया गया। लक्ष्मीबाई ने चाहा कि सेना को तुरन्त तैयार कर मैदान में लाया जाय। लेकिन रावसाहब को अभी दावतों और उत्सवों से छुट्टी न थी! इतने में ह्यू रोज़ १७ जून को ग्वालियर पर आ पहुँचा।

ग्वालियर राज्य की सेना कम्पनी की सेना के सामने न ठहर सकी। तो भी लक्ष्मीबाई ने बिखरी सेना को इकट्ठा किया और मुकाबले के लिए डट गयी। दो दिन तक वह "अलौकिक वीरता" से लड़ती रही। दूसरे दिन शत्रु भीतर घुस आये और रानी उनके बीच घिर गयी। शत्रु की पाँतों को चीर कर रानी ने दूसरे क्रान्तिकारियों से मिलने की कोशिश की। गोरे सवारों ने उसका पीछा किया। उनमें से अनेक को काट गिराने के बाद वह स्वयम् वीर गति को प्राप्त हुई।

मौलवी अहमदशाह की घृणित हत्या से अवध में युद्ध की आग और भड़क उठी। क्रान्तिकारी दल घाघरा के उत्तर अयोध्या के सामने नवाबगंज पर इकट्ठे हुए और फिर लखनऊ पर चढ़ाई करने की सोचने लगे। एक अँगरेज़ सेनापति ने उन पर हमला किया। अवध की समथर भूमि गुरिल्ला युद्ध के लिए उपयुक्त नहीं है, तो भी वह युद्ध साल भर जारी रहा।

तात्या टोपे, रावसाहब और अलीबहादुर के साथ ग्वालियर से निकल कर दक्खिन जाने की कोशिश करने लगा। अँगरेज़ी सेनाएँ बराबर उसे आगे पीछे से घेरने की कोशिश करती रहीं। पहले वह राजपूताने की ओर मुड़ा; टोंक का नवाब उसके मुकाबले को आया; पर नवाब की सेना तोपों सहित उससे आ मिली, और तात्या मेवाड़ में आ निकला। वहाँ उसकी तोपें छिन गयीं; और तीन सेनाओं से बच कर चम्बल पार कर वह झालरा-पाटन पहुँचा। झालावाड़ का राजा मुकाबले को आया, लेकिन उसकी सेना भी तात्या की चुम्बक शक्ति से खिंच गयी, और राजा को ३२ तोपें तथा १५ लाख रुपया देना पड़ा। इसके बाद छः सेनापति उसे घेरने को दौड़ते रहे; कहीं वह अपना सब कुछ गँवा देता, तो कहीं फिर नयी सेना, नया ख़ज़ाना और नया तोपख़ाना पा लेता। अन्त में ललितपुर में वह पाँच तरफ़ से घिरता मालूम हुआ, लेकिन उस घेरे को तोड़ कर, तीन सेनाओं के पीछा करने के बावजूद होशंगाबाद पर नर्मदा पार कर अक्टूबर में वह नागपुर आ निकला! यदि एक साल पहले महाराष्ट्र में पेशवा का सेनापति आ गया होता तो शायद दशा और ही होती। लेकिन अब उसे नागपुर से

कोई मदद न मिली। वह बड़ोदा की ओर फिरा; फिर उत्तर भारत को लौटा और छः महीने उसी तरह लड़ता रहा। अन्त में अलवर के पास एक विश्वासघाती ने उसे धोखे से पकड़ा दिया (७-४-१८५६)।

१ नवम्बर १८५८ को महारानी विक्टोरिया ने अपने एलान से ईस्ट इंडिया कम्पनी का अन्त कर भारत का शासन सीधा अपने हाथों में ले लिया। बेगम हज़रतमहल ने उसके उत्तर में एलान निकाला, "हमारी प्रजा को इसपर एतबार नहीं करना चाहिए, क्योंकि कम्पनी के क़ानून, कम्पनी के अँगरेज़ मुलाज़िम, कम्पनी का गवर्नर-जनरल और कम्पनी की अदालतें ...... सब ज्यों की त्यों बनी रहेंगी।"

अवध के क्रान्तिकारी और छः महीने तक उसी तरह लड़ते रहे। "वे बिना रसद के जहाँ चाहें जा सकते थे, क्योंकि लोग सब जगह उन्हें भोजन पहुँचा देते थे। वे बिना पहरे के अपना असबाब जहाँ चाहें छोड़ सकते थे। उन्हें सदा अपनी और अँगरेज़ों की स्थिति का ठीक पता रहता था, क्योंकि लोग उन्हें घंटे-घंटे पर सूचना देते रहते थे।" एप्रिल १८५६ तक यों युद्ध चलता रहा। अन्त में अवध के ६० हज़ार स्त्री-पुरुष-बच्चे नेपाल-तराई में धकेल दिये गये। नानासाहब ने जंगबहादुर से ईन निर्वासितों के लिए रहने की इजाज़त माँगी। लेकिन उसने उलटा नेपाल में अँगरेज़ी सेना को घुसने दिया। अनेक लोग शस्त्र फेंक कर वेष बदल कर लौट आये; अनेकों ने "हार मानने की अपेक्षा नेपाल के जंगलों में भूखों मर जाना पसन्द किया।" हज़रत-महल को नेपाल दरबार ने शरण दी। अँगरेज़ों ने नेपाल से जो तराई का इलाका १८१६ ई० में छीना था, वह अब लौटा दिया।

अध्याय ६

कम्पनी-राज में भारत की आर्थिक और सामाजिक दशा

§१ कम्पनी के शासन में भारतीय किसानों की हालत—एक व्यापारी मंडली ने हमारे देश को जीत लिया और किसानों से उनकी ज़मीन की मिलकियत भी छीन ली। व्यापारी अपना धन्धा नफ़े के ख़ातिर ही करते हैं। उन व्यापारियों ने भारतवर्ष की भूमि और जनता को अपने कारोबार का साधन बना डाला। "हर हिन्दुस्तानी के बारे में यही समझा जाता (था) कि वह ईस्ट इंडिया कम्पनी की कमाई करने को पैदा हुआ प्राणी है।"

हमने देखा है कि रैयतवारी पद्धति में खेती का नफ़ा ज़मीन के मालिक की हैसियत से कम्पनी ले लेती थी; किसानों को खाली मज़दूरी मिलती थी। लेकिन बहुत बार उनकी मज़दूरी भी खेती से न निकलती थी; तब वे खेत छोड़ना चाहते थे, पर उन्हें छोड़ने न दिया जाता था, जिसका यह अर्थ था कि वे बँधे हुए ग़ुलाम बन गये थे। इस दशा में या तो कर्ज़ ले कर या यातनाओं से बाधित हो कर ही वे लगान दे पाते थे। मद्रास इलाके में लगान की वसूली के लिए जो यातनाएँ प्रचलित थीं, उनका परिगणन एक सरकारी रिपोर्ट में यों किया गया है—

"धूप में खड़ा रखना; भोजन या हाजत के लिए न जाने देना; किसानों के मवेशियों को चरने न जाने देना; ··· मुर्ग़ा बनाना; अँगुलियों के बीच डंडियाँ डाल कर दबाना; चिमटे, चाबुक की मार, ··· दो नादिहन्दों के सिर टकराना या दोनों को पीठ की ओर से केशों से बाँध देना; शिकञ्जे में कसना; गधे या भैंस की पूँछ से केश बाँध देना; इत्यादि।"

ऐसी यातनाएँ कब तक सही जातीं? धीरे-धीरे उनका स्थान ऋण ने ले लिया। "वे रैयत जो पहले समृद्ध थे, ज़मीन पर पूँजी लगा सकते थे,···

अपनी उपज को जब तक अच्छे दाम न मिलें रोक रखते थे, अब भारी सूद वाले ऋण में डूब" गये।

पहले किसान न केवल अपनी ज़मीनों के मालिक थे, प्रत्युत गाँव के भीतर सरकारी मालगुज़ारी का बँटवारा और वसूली उनकी पंचायतें ही करती थीं। अब ये काम तुच्छ सरकारी कारिन्दे करने लगे, और किसान का काम केवल हुक्म मानना रह गया। इस पद्धति का परिणाम यह हुआ कि "हर आदमी अपनी नज़रों में गिर गया और सदा के लिए ताबेदारी में फँस गया। आत्मनिर्भर ईमानदार व्यक्ति वाली मर्दानी चाल उसकी न रही। अपने से बड़े की कृपा या त्यौरी की परवा न कर सम्मान से सीधा खड़ा होना उसके लिए असम्भव हो गया।"

इस दशा में भी यदि खेती जारी रही तो इस कारण कि "भूख से लाचार हो कर किसान खेती करने को बाधित होता था।"

§२ शिल्प का ह्रास—कम्पनी का पुराना 'व्यापार" भी सन् १८३३ तक जारी रहा। उस "व्यापार" के लिए अब मालगुज़ारी में से ही पूँजी बचा ली जाती थी; इसलिए उस पूँजी से जो माल ख़रीद कर इँग्लैंड भेजा जाता था, उसके बदले में कुछ न आता था। यह पूँजी व्यापारी रेज़िडेण्टों की कोठियों में बाँट दी जाती थी। रेज़िडेण्ट लोग खास दिन पर पड़ोस के जुलाहों की हाज़िरी तलब करते और उन्हें रुपया अगाऊ दे देते थे। माल की दर रेज़िडेण्ट तय कर देते थे, जुलाहा न माने तो उसके घर पर पहरा बिठा दिया जाता था। माल लाने में देरी हो तो चमौटी लिये चपरासी भेजा जाता था जिसका ख़र्चा जुलाहे पर पड़ता था। रेगुलेशन बनाया गया था कि जो जुलाहा कम्पनी से अगाऊ ले, वह और किसी को माल न दे। ज़मींदारों और किसानों को हुक्म था कि व्यापारी रेज़िडेण्टों और उनके कारिन्दों से अदब से बरतें और उन्हें जुलाहों के घर पहुँचने में बाधा न दें। सन् १८१३ से कम्पनी के सिवाय दूसरे अँगरेज़ों को भी भारत में व्यापार करने की इजाज़त मिल गयी। ये खानगी व्यापारी चमौटी और शिकञ्जे का प्रयोग और भी खुल कर करते थे। यों पलाशी के बाद से अँगरेज़ों ने व्यापार का जो नया तरीक़ा निकाला था, वह सन् १८३३ तक जारी रहा।

गुलामी की ये यातनाएँ भोगने के बाद भारतीय शिल्प को अब सर्वनाश का सामना करना था। भारतवर्ष का विदेशी व्यापार अब पूरी तरह अँगरेज़ों के क़ाबू में था। अठारहवीं शती से ही वे भारतीय माल को अपने देश में घुसने से रोकने लगे थे।* नैपोलियन ने युरोप के सब बन्दरगाहों को अँगरेज़ी माल के लिए बन्द कर दिया। उस दशा में अँगरेज़ों ने अपने कारख़ानों का फ़ालतू माल भारत पर लादना शुरू किया। तो भी "सन् १८१३ तक भारतीय कपड़ा इँग्लैंड में अँगरेज़ी कपड़े से ५०, ६० फ़ी सदी कम दाम पर भी नफ़े में बिक सकता था। तब उसपर ७०, ८० फ़ी सदी चुंगी या सीधी रोक लगा दी गयी। ऐसा न होता तो पेसली और माँचेस्टर की मिलें शुरू में ही बन्द हो जातीं और फिर भाप की ताक़त से भी न चल सकतीं।"

इसके बाद चौथाई शताब्दी तक भारत में ब्रिटिश कपड़े पर २॥ फ़ी सदी चुंगी रही, और ब्रिटेन में भारतीय पर १० से १००० फ़ी सदी तक। सन् १८१६-१७ में भारतीय जुलाहों ने अपने देश की जनता को पहनाने के बाद १६६ लाख रुपये का कपड़ा बाहर भेजा। सन् १८४६-४७ तक वह सारा निर्यात गायब हो गया, उल्टा ४ करोड़ का कपड़ा इँग्लैंड से भारत को आया। सूरत, ढाका और मुर्शिदाबाद की समृद्ध बस्तियाँ उजड़ गयीं। ढाका की आबादी डेढ़ लाख से ३० हज़ार रह गयी और उसे जंगल और मलेरिया ने आ घेरा।

कोई कोई भारतीय शिल्प इस संहार के बीच भी बहादुरी से डटे रहे। मारवाड़ और गुजरात में रंग-बिरंगी चुनरियाँ तैयार होती थीं। लड़कियाँ अपनी चपल अँगुलियों से कपड़े में गाँठें बाँध कर उसे एक रंग में रँगतीं, फिर नयी गाँठें बाँध कर दूसरे रंग में; इस तरह एक कपड़े पर कई रँग चढ़ाये जाते और वह कपड़ा 'बाँधणी' कहलाता था। भारत के ऐसे रेशमी 'बाँधणे' (रुमाल) फ्रान्सीसियों को बहुत भाते थे और सन् १८५७ तक उनका व्यापार चमकता रहा। "यह भारत की मरती कारीगरियों में से अन्तिम थी।"

---

* ऊपर पृ० ४९३, ४९४।

सन् १८४० तक कलकत्ते और बम्बई में अच्छे जहाज बनते थे। बम्बई के पारसियों ने इस व्यवसाय में नाम कमाया था। लेकिन इंग्लैंड में सन् १६५१ से १८४६ तक ऐसे "नाविक कानून" रहे कि इंग्लैंड में जो माल आय वह अँगरेज़ी जहाजों में ही आय। जिन देशों के साथ इंग्लैंड की बराबरी की सन्धियाँ थीं, उनमें भी अंगरेजी जहाजों को सुविधाएँ थीं। उन सुविधाओं से वञ्चित होने के कारण भारत में जहाज़ बनाने का काम चल न सका।

"भारत के जो लोग दस्तकारी से खाली होते गये, वे मुख्यतः कृषि में गये।" यों ज़मीन पर बोझ बढ़ता गया और जंगलों और चरागाहों वाली ज़मीनें भी खेती में लगायी जाने लगीं।

§३. **खिराज तथा राष्ट्रीय ऋण**—भारतवर्ष को जीतने और काबू रखने का सब खर्चा तो ई० इं० कम्पनी ने भारत से वसूल किया ही, उसके अलावा भारतीय सेना को जब अँगरेज़ों के स्वार्थ के लिए मिस्र, जावा, बर्मा, अफ़गानिस्तान, चीन और ईरान भेजा तब उसका खर्चा भी भारत से लिया। अकेले अफ़गान युद्ध के लिए भारतीय जनता को १५ करोड़ रु० देना पड़ा। दूसरी तरफ़, भारतवर्ष का ग़दर दबाने के लिए जो गोरी सेना विलायत से आयी, उसकी इंग्लैंड से चलने से छः महीने पहले तक की तनख्वाहें तथा इंग्लैंड की छावनियों में भारतीय सेवा के नाम से जमा सेना की १८६० तक की तनख्वाहें भी भारत ने दीं।

इन सब खर्चों और अंगरेज़ हाकिमों की भारी तनख्वाहों के बावजूद भी कम्पनी के कुल शासन-काल में सरकारी व्यय से आय अधिक हुई। लेकिन ब्रिटिश सरकार का जो बोर्ड आव् कण्ट्रोल लन्दन में था, उसका खर्चा और कम्पनी की पूँजी पर डिविडेण्ड या मुनाफ़ा भी भारत की जनता को देना पड़ता था। जिस साल सरकारी आमदनी खर्चे से कम हुई, या जब-जब उसमें से मुनाफ़ा देने की गुंजाइश न रही, तब-तब कम्पनी भारत के नाम पर कर्ज़ लेती गयी और उससे अपना मुनाफ़ा पूरा करती रही। उस कर्ज़ का सूद भारतीय जनता पर पड़ता गया। यों कम्पनी के शासन में हर साल क़रीब ३०, ३५ लाख पौंड इस लन्दन के खर्चे और मुनाफ़े के लिए भारत से इंग्लैंड

को जाता रहा। यह कुल मालगुज़ारी का क़रीब $\frac{1}{10}$ होता था। अँगरेज़ हाकिम जो अपनी निजी बचत भेजते वह अलग थी। इस खिराज की खातिर भारत पर जो ऋण लदता गया, वह सन् १८५८ ई० में ६६५ लाख पौंड था।

यह खिराज सोने चाँदी के रूप में नहीं, प्रत्युत माल के रूप में प्रतिवर्ष जाता रहा। हमने देखा है कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी पहले मालगुज़ारी में से बचत करके उससे कपड़ा खरीद कर विलायत भेजती थी। पीछे जब भारत के शिल्पियों से खरीदने को कुछ न रहा, तब अन्न के रूप में यह जाने लगा। दूसरे देशों को भारत जितना माल भेजता उतना ही उनसे मँगाता भी था। पर इंग्लैंड को वह "आयात से निर्यात की अधिकता द्वारा खिराज देता" रहा। एक तो दस्तकारी की चीज़ों को अन्न दे कर खरीदना ही दरिद्रता का कारण था, दूसरे यह गुलामी का कर भी भारतीय जनता अन्न में चुकाने लगी। एक स्पष्टवादी अँगरेज़ के शब्दों में "हमारी पद्धति एक स्पञ्ज के समान है जो गंगा-तट से सब अच्छी चीज़ों को चूस कर टेम्स तट पर जा निचोड़ती है।" इस पद्धति का एक ही परिणाम हो सकता था—दुर्भिक्ष, बार-बार दुर्भिक्ष।

§४. **गोरे प्लाण्टर तथा भारतीय कुली**—उक्त कारणों से देश में एक बड़ी संख्या ऐसे लोगों की होती गयी जो किसी भी शर्त पर मज़दूरी करने को तैयार थे। उन्नीसवीं शती के शुरू से अनेक गोरे भारत की खेती-बाड़ी में पूँजी लगा कर उन सस्ते मज़दूरों से लाभ उठाने लगे। बंगाल-बिहार में वे नील की खेती कराने लगे। सन् १८१३ ई० से भारत में गोरी बस्तियाँ बसाने की बाकायदा कोशिशें होने लगीं। कोडुगु (कुर्ग) और नीलगिरि में कहवे और सिनकोने की काश्त के लिए तथा आसाम, कुमाऊँ और काँगड़ा में चाय की खेती के लिए गोरों को माफ़ी ज़मीनें दी गयीं। अपने देश के अनेक खनिजों की तरफ़ भारतवासियों का ध्यान न था। बर्दवान की कोयले की खानें पहलेपहल सन् १८१४ ई० में अँगरेज़ों ने खुदवाना शुरू किया।

निलहे गोरे किसानों पर पाशविक ज़ुल्म करते। बंगाली लेखक दीनबन्धु मित्र ने अपने नाटक 'नीलदर्पण' में उन ज़ुल्मों का चित्रण किया।

सन् १८५६-६० ई० में निलहों के ख़िलाफ़ किसानों ने एक साथ विद्रोह किया; उसके बाद से नील की खेती कम रह गयी और उसमें कुछ सुधार हुए।

भारत में गोरों को बसाने की कोशिशें सफल न हुईं, क्योंकि अँगरेज़ "अपना अन्तिम जीवन भारत में बिताना न चाहते" थे। उसका भी कारण यह था कि वे भारत में अपना समाज न खड़ा कर सके--वे भारतवासियों का न तो अमेरिका के मूल बाशिन्दों की तरह संहार कर सके, और न उन्हें आफ़्रिका-निवासियों की तरह इतना रौंद ही सके कि भारत में स्वतन्त्र युरोपियन समाज पनप सकता।

सोलहवीं सदी से युरोपियन लोग अपनी अमेरिका आदि की बस्तियों में ज़लील मेहनत का काम लेने के लिए आफ़्रिका के लोगों को पकड़ ले जाते थे। उन्नीसवीं सदी के शुरू तक वे बस्तियाँ हब्शी गुलामों से पट चुकी थीं और उनमें काम की तलाश करने वाले गोरे मज़दूर भी काफ़ी पैदा हो चुके थे। इस दशा में क़रीब सन् १८३३ में युरोपियनों का अन्तःकरण गुलामी प्रथा को देख कर भड़कने लगा और गुलामी रोकने के क़ानून बने। लेकिन मारिशस, त्रिनिदाद, गियाना, जैमेका आदि के खांड पैदा करने वाले और अनेक दूसरे गोरे उपनिवेशकों का काम अभी गुलामों के बिना न चल सकता था, अतः उनके लिए अब भारत से "प्रतिज्ञाबद्ध मज़दूर" जाने लगे। भूखे मरते बेकारों को सब्ज़ बाग़ दिखा कर भरती कराने वाले "आरकाटी" पाँच साल के इक़रारनामे पर अँगूठा लगवा कर ले जाते। उन इक़रारनामों को तोड़ना क़ानून से फ़ौजदारी अपराध बना दिया गया। ये मज़दूर "कुली" कहलाते जो गुलाम का ही नया नाम था। विदेशों में कुली शब्द भारतीय का समानार्थक हो गया। आसाम के चाय-बग़ीचों में भी प्रतिज्ञाबद्ध कुली ले जाये जाने लगे।

§५. नमक का एकाधिकार—कम्पनी ने अपने शासन-काल में नमक पर बराबर एकाधिकार रक्खा, और "उत्पादन के ख़र्चे पर ३०० या २५० फ़ी सदी का ज़ालिम कर" लगाती रही। फलतः इंग्लैंड में जहाँ सन् १८५२ में नमक का भाव ३० शिलिंग फ़ी टन था, वहाँ भारत में

२१ पौंड फ़ी टन था। इसी से इंग्लैंड से भारत को नमक का आयात भी काफ़ी होता रहा।

§६. **नहरें और रेलपथ**—गंगा-जमना का दोआब अँग्रेजों के हाथ में आने पर लार्ड मिण्टो के समय उनका ध्यान उसकी पुरानी नहरों की तरफ़ गया। हेस्टिंग्स के समय से जमना की नहरों का पुनरुद्धार किया जाने लगा। आकलैंड के समय गंगा नहर की खुदाई शुरू की गयी और गदर के समय तक उसपर काम जारी था।

जमना की नहरों का सफल पुनरुद्धार होने से कावेरी-कोलरून की पुरानी नहरों की तरफ़ भी ध्यान गया। उन नहरों के पुनरुद्धारक सर आर्थर कौटन ने पीछे गोदावरी और कृष्णा के मुहानों में भी आणीकट बना कर नहरें निकालीं। सिन्ध और पंजाब जीतने के बाद मुलतान-सिन्ध की पुरानी नहरों की भी रक्षा की गयी।

सन् १८४५ से भारत में रेलपथ बनाने का अयोजन चला। ईस्ट इंडियन और ग्रेट इंडियन पेनिन्शुला रेल-कम्पनियों ने सरकार की मदद से काम जारी किया। सरकार ने उनसे यह ठहराव किया कि उनकी पूँजी पर ५% से जितना कम मुनाफ़ा होगा, उतना भारत सरकार देगी, और यदि अधिक होगा तो अधिक अंश का आधा सरकार लेगी। सन् १८५८ तक पाँच और कम्पनियाँ इन्हीं शर्तों पर खड़ी हो गयीं।

§७. **भारत-विषयक अध्ययन का उदय**—बंगाल एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना के बाद से युरोपियनों का भारत विषयक अध्ययन तेज़ी से बढ़ा। सर विलियम जोन्स ने यह पहचाना कि संस्कृत, यूनानी और लातीनी भाषाएँ सगोत्र हैं। कोलब्रुक ने संस्कृत व्याकरण, गणित, ज्योतिष आदि की ओर तथा चार्ल्स विल्किन्स ने भारत के पुराने लेखों की ओर ध्यान दिया। भारतीय पंडित अपने पुराने लेखां को पढ़ते न थे; पर कोशिश करते तो सातवीं शती से इधर के लेखों को पढ़ सकते थे। सन् १७८५ में विल्किन्स ने बंगाल का एक पाल अभिलेख तथा राधाकान्त शर्मा ने अशोक की दिल्ली वाली लाट पर का बीसलदेव चौहान का लेख पढ़ डाला। उसके

बाद विल्किन्स ने गया के पास का एक मौखरि अभिलेख पढ़ डाला, जिससे गुप्त युग की लिपि आधी पहचानी गयी।

सन् १८०२ में नैपोलियन के एक अँग्रेज़ क़ैदी से श्लीगल नामक जर्मन ने पैरिस में संस्कृत सीखी। श्लीगल का समकालीन फ्रांसीसी फ्राज़ बॉप था। इन दोनों ने संस्कृत की ईरानी तथा युरोपियन भाषाओं से तुलना कर तुलनात्मक भाषा-विज्ञान की नींव डाली। इन भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से जाना गया कि इन्हें बोलने वाली जातियों के धर्म-कर्म, देव-गाथाओं, प्रथाओं और संस्थाओं में भी बड़ी समानता थी, और यों आर्य जाति का पता चला। यह उन्नीसवीं शती की एक सब से बड़ी खोज थी। उक्त तुलनात्मक अध्ययनों से समाज के क्रम-विकास का विचार जगा, जो हमारी आधुनिक विचारपद्धति की प्रमुख आधार-शिला है।

अठारहवीं सदी में युरोपियनों ने भारत के जो नक्शे बनाये थे, वे सब अन्दाज़ से थे। अब सन् १८०२ ई० में लैम्बटन को मद्रास का "आधार-रेखा" मापने पर लगाया गया, जिससे भारत की पैमाइश वैज्ञानिक ढंग पर शुरू हुई।

सिंहल में काम करने वाले अँगरेज़ों का ध्यान इसी समय पाली बौद्ध वाङ्मय की ओर गया। सन् १८३४ ई० तक इलाहाबाद क़िले की अशोक-लाट पर का समुद्रगुप्त का लेख पूरा पढ़ा गया जिससे गुप्त युग की लिपि पूरी जानी गयी।

सांची, भारहुत, वेरूल आदि के अभिलेखों की छापों का इस बीच संग्रह किया गया था; पंजाब में सेनापति वेंतुरा ने एक-दो पुरानी "ढेरियां" खुदवा कर स्तूपों के अवशेष निकाले थे, तथा बर्न्स आदि यात्रियों ने पंजाब और अफ़ग़ानिस्तान से पुराने सिक्कों का संग्रह किया था। भारत के विभिन्न स्थानों में अशोक के जो अभिलेख हैं, उनकी छापों के मिलान से जेम्स प्रिन्सेप ने पहचान लिया कि उनमें से बहुत से एक ही हैं। उस लिपि के कुछ अक्षर गुप्त लिपि की मदद से चीन्हे गये। अफ़ग़ानिस्तान से पाये गये सिक्कों में अनेक यूनानियों के थे। उनके एक तरफ़ यूनानी लेख हैं, दूसरी

तरफ़ उन्हीं के प्राकृत अनुवाद। यूनानी की मदद से प्राकृत लेख पढ़े गये और यों धीरे-धीरे मौर्य युग की ब्राह्मी लिपि सन् १८३७ ई० तक समूची पहचान ली गयी।

अपने इतिहास के पुनरुद्धार से भारतीय राष्ट्र आज अपने को फिर पहचानने लगा है। उन्नीसवीं शती के युरोप पर प्राचीन भारतीय आदर्शों का सीधा प्रभाव भी बहुत हुआ। जर्मन महाकवि गुइथे (१७४९-१८३२ ई०) ने कालिदास की शकुन्तला को पृथ्वी और अन्तरिक्ष के माधुर्य का सार कहा, और शकुन्तला के नमूने के प्रक्रम पूर्ण रसमय जीवन का आदर्श युरोपियन साहित्य में चला दिया। गीता और मनुस्मृति के विचारों को अनेक जर्मन दार्शनिकों ने अपनाया।

§८ **शिक्षा और सामाजिक दशा**—मैकाले की शिक्षापद्धति का उल्लेख हो चुका है। हार्डिञ्ज के समय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने बंगाल में शिक्षा फैलाने की विशेष चेष्टा की। सन् १८५४ में कम्पनी के ऊँचे अधिकारियों ने कहा कि भारत में विद्यापीठों (युनिवर्सिटियों) की स्थापना का समय आ गया है और लन्दन विद्यापीठ के नमूने पर यहाँ के विद्यापीठ बनाना तय किया। तदनुसार सन् १८५७ में कलकत्ता, मद्रास और बम्बई युनिवर्सिटियों की स्थापना हुई।

कलकत्ते में गोरे अखबार तो बहुत पहले से निकलते थे, पर बंगला अखबार पहलेपहल सन् १८१८ से तथा उसके शीघ्र बाद गुजराती, हिन्दी और मराठी अख़बार भी शुरू हुए।

गुलामी और दरिद्रता का प्रभाव भारतीयों के चरित्र पर पड़ना अवश्यम्भावी था। तो भी गदर के ज़माने तक अभी उनका चरित्र उतना गिरा न था। ठगी प्रथा को उखाड़ने वाले कर्नल स्लीमैन ने लिखा था, "मैंने ऐसे सैकड़ों मौके देखे जब एक हिन्दुस्तानी की सम्पत्ति, स्वाधीनता, जीवन, सब एक झूठ बोलने से बच सकते थे, पर उसने न बोला।"

§९. **ब्रिटिश सरकार का कम्पनी से भारत को खरीदना**—इंग्लैंड के कारखानेदारों को ईस्ट इंडिया कम्पनी का एकाधिकार

अखरता था। वे सोचते थे कि कम्पनी हटायी जाय तो सब अंगरेज़ खुल कर भारत में अपने व्यापार के लिए सुविधाएँ पायँ और बस भी सकें। सन् १८५३ इस आन्दोलन ने ज़ोर पकड़ा। मार्च १८५८ में पार्लियामेण्ट ने "भारत में विशेषतः पहाड़ी जिलों" में युरोपियन बस्तियाँ बसाने और मध्य-एशिया में व्यापार-वृद्धि के उपाय सोचने को" एक कमिटी बैठायी। यह आन्दोलन चल ही रहा था कि गदर के कारण कम्पनी को हटाने का एक बहाना मिल गया।

एलिनबरो के शब्दों में ईस्ट इन्डिया कम्पनी के हाथ में भारतवर्ष गिरवी था। ब्रिटिश सरकार ने उसे दाम दे कर छुड़ा लिया। लेकिन वे दाम उसने अपने पास से नहीं दिये। कम्पनी की पूँजी का मूल्य १२० लाख पौंड लगाया गया, जिसे धीरे धीरे भारत ने चुकाया। सन् १८७४ में इसमें से ४६ लाख पौंड बाकी रहा जो भारत के कर्ज़ में शामिल कर दिया गया। उसके सिवाय कम्पनी का ६५६ लाख पौंड कर्ज़ा तो भारत पर डाला ही गया। यों ईस्ट इन्डिया कम्पनी के बजाय भारतवर्ष लन्दन के उन महाजनों के हाथ गिरवी रक्खा गया जिन्होंने इस भारतीय ऋण के ऋणपत्र ख़रीदे।

अध्याय ७

महारानी का राज

(१८५८-१८७६ ई०)

§१. **ग़दर के कारण शासननीति में परिवर्तन**—महारानी विक्टोरिया के भारत के शासन को अपने हाथ में लेने पर इंग्लैंड के मन्त्रि-मंडल में एक सपरिषद् भारत-सचिव नियुक्त किया जाने लगा। भारत में कैनिंग को ही पहला वाइसराय (राज प्रतिनिधि) नियत किया गया। मार्च १८६२ में उससे एल्गिन ने शासन-भार लिया। नवम्बर १८६३ में पंजाब की एक पहाड़ी बस्ती में एल्गिन की मृत्यु हुई। उस समय उत्तर-पच्छिमी सीमान्त पर वहाबियों से युद्ध चल रहा था। इसलिए सर जौन लारेन्स को, जिसने ग़दर के समय पंजाबी सीमान्त को काबू में रक्खा था, वाइसराय बना कर भेजा गया। जनवरी १८६६ में लारेन्स का उत्तराधिकारी मेयो हुआ। फ़रवरी १८७२ में वह मारा गया। तब नार्थब्रुक वाइसराय हो कर आया और उसने जनवरी १८७६ तक शासन किया। इस बीच भारत में ब्रिटिश शासन-नीति की धारा एक ही दिशा में चलती रही।

ग़दर से अँगरेज़ शासकों ने बहुत कुछ सीखा और अपनी शासन-नीति को कई अंशों में बदल दिया।

(१) उन्होंने गोरी फ़ौज की संख्या बढ़ा दी और देसी की घटा दी, तथा यह निश्चय किया कि आगे से तोपख़ाने में देसियों को न लिया जाय। सन् १८५६ में फ़ौज में २६० हज़ार देसी और ४५ हज़ार गोरे थे; सन् १८६१ में १२० हज़ार देसी और ७६ हज़ार गोरे रक्खे गये। आगे यही अनुपात रहा। इसके साथ ही हथियार क़ानून बना कर भारतीय जनता को निहत्था किया गया।

(२) भारतवर्ष में गोरी बस्तियाँ बसाने की कोशिश फिर जारी की गयी। ऐसी बस्तियाँ ग़दर जैसे समयों में हिन्दुस्तानियों को दबा रखने में सहायक होतीं। आसाम और नीलगिरि में गोरों को माफ़ी ज़मीनें दी गयीं।

(३) देसी रियासतों को तोड़ने से ग़दर का प्रवाह उमड़ा था और उस प्रवाह के बीच नेपाल, ग्वालियर, हैदराबाद आदि बची हुई रियासतों ने बाँध का काम दिया था। इसलिए अब निश्चय किया गया कि आगे से देसी रियासतों का ऊपरी रूप कभी न बिगाड़ा जाय, पर उनमें 'भीतर से अँगरेज़ों की देखरेख जितनी पक्की से पक्की हो सके, रक्खी जाय।" इसी उद्देश से काठियावाड़ और राजस्थान में राजकुमारों के लिए स्कूल खोले गये जिनमें उन्हें बचपन से ही अँगरेज़ी प्रभाव में रक्खा जा सके।

(४) ग़दर के गुप्त संघटन का अँगरेज़ों को कुछ पता न चला था। अब पुलिस और खुफ़िया पुलिस का पक्का आयोजन किया गया

(५) ग़दर में मुसलमानों ने विशेष भाग लिया था। मेयो के समय से मुसलमानों को रियायतें दे कर राष्ट्रीय आन्दोलनों से अलग खींचे रखने की नीति शुरू की गयी।

(६) रेलपथ बना कर भारत को लोहे के डंडों में जकड़ लेने की कोशिश की गयी। मेयो के शब्दों में "भाप-जहाज़ और रेलपथ इंग्लैंड को हर साल भारत पर अपनी गिरिफ़्त दृढ़तर करने में समर्थ बना रहे हैं।" "कार्यक्षम पुलिस, रेलपद्धति के विकास और सेना के हाथ में नयी राइफ़लों द्वारा भारत १८७० ई० में पहले से कम ख़र्चीली सेना द्वारा काबू में रक्खा जा सकता है।" इसके अलावा सन् १८६९ में स्वेज़ नहर के खुल जाने से युरोप से भारत का रास्ता बहुत छोटा हो गया। इस नहर को फ्रान्सीसी इञ्जिनियर दि-लेसेप ने खोदा। उसने १८५४-५६ ई० में एक कम्पनी खड़ी की और उसके लिए तुर्की के सुल्तान से नहर की ज़मीन ९९ साल के ठेके पर ले ली। तुर्की के सुल्तान, मिस्र के खदीव (राज-प्रतिनिधि) तथा फ्रान्सीसी महाजनों ने कम्पनी के हिस्सों का मुख्य भाग ख़रीदा। पीछे १८७५ ई० में अँगरेज़ों ने खदीव के सब हिस्से तथा और भी हिस्से ख़रीद लिये।

(७) सन् १८३३ से गवर्नर जनरल की शासन समिति में एक कानून-सदस्य के शामिल होने से वही व्यवस्था-समिति (लेजिस्लेटिव कौंसिल) बन जाती थी। सन् १८५३ से उसमें एक सदस्य के बजाय हर बड़े प्रान्त का एक अफ़सर और दो-चार और व्यक्ति शामिल किये जाने लगे थे। अब सन् १८६१ से उसमें गवर्नर-जनरल के पसन्द किये ६ से १२ तक सदस्य, जिनमें आधे ज़रूर गैरसरकारी होते, रक्खे जाने लगे। प्रान्तों में गवर्नरों की भी वैसी व्यवस्था-समितियाँ बनायी गयीं।

§२. **वहाबी और कूका विद्रोह**—अठारहवीं शती में अरब के नज़्द प्रान्त में इब्न अब्दुल वहाब नामक एक धर्म-सुधारक हुए। वे शकुन मानने, तीर्थ-यात्रा करने तथा खुदा के स्थान में मुहम्मद की इबादत करने को बुरा कहते थे। उनके अनुयायियों ने सन् १८१० में हज़रत मुहम्मद की कब्र उखाड़ फेंकी। तब तुर्की के खलीफ़ा ने मिस्र के पाशा को उनके खिलाफ़ भेज कर उन्हें बहुत कुछ दबाया। तो भी वहाबियों का धर्म-प्रचार जारी रहा और अन्य मुस्लिम देशों में भी पहुँच गया। भारत के सीमान्त पर, पेशावर ज़िले के उत्तर, सिन्ध नदी और मलाकन्द दर्रे के बीच, उन्होंने एक केन्द्र बनाया, जहाँ से वे धर्म-सुधार के साथ-साथ राजनीतिक स्वाधीनता का सन्देश भी बंगाल के मुसलमानों तक पहुँचाने लगे। सन् १८५२-५३ में और फिर ग़दर के समय अँगरेज़ों ने दो बार उन पर चढ़ाइयाँ कीं। १८६३ ई० के जाड़े में उन्होंने फिर ख़तरा उपस्थित किया; लेकिन लारेन्स के भारत आने से पहले ही उनकी हार हो चुकी थी।

उसी वर्ष यह पता चला कि उत्तर भारत में जगह जगह वहाबियों के गुप्त केन्द्र हैं। सन् १८६४ से ६६ ई० तक कई षड्यन्त्र के मुक़दमे करके अनेक वहाबी नेताओं को जेल या कालापानी भेजा गया। २०-९-१८७१ ई० को बंगाल का चीफ़ जस्टिस कचहरी की सीढ़ियों पर क़त्ल किया गया। ८-२-१८७२ ई० को अंडमान जेल का निरीक्षण कर लौटते हुए लॉर्ड मेयो को एक पठान ने मार डाला। इसके बाद वहाबी आन्दोलन ठंडा पड़ गया।

इसी समय लुधियाना ज़िले में गुरु रामसिंह नामक एक सुधारक सिक्खों में हुए। इन्होंने अँगरेज़ों से पूरा असहयोग करने का प्रचार किया। इनके अनुयायी नामधारी या कूके कहलाये। सन् १८७१-७२ में कूकों ने विद्रोह किया। गुरु रामसिंह क़ैद कर बरमा भेज दिये गये और बहुत से कूके क़ैदी तोपों से उड़ा दिये गये।

§३. **कृषक-अधिकार-क़ानून तथा प्रान्तीय अर्थनीति**—(अ) **कृषक अधिकार-क़ानून**—अँगरेज़ों के ज़मीन-बन्दोबस्त से भारतीय किसान कैसे अपनी सम्पत्ति से महरूम होते गये, सो हमने देखा है। कार्नवालिस का यह उद्देश न था। लेकिन अँगरेज़ी क़ानून की दृष्टि में जो मालगुज़ारी देता वही जमीन का मालिक था, क्योंकि इंग्लैंड में १८वीं शती के आरम्भ से जागीरदार लोग ज़मीन के पूरे मालिक बन चुके थे। भारत में भी उस क़ानून के प्रयोग से ठेकेदार ज़मीन के मालिक और किसान निरे आसामी बनते गये। इससे जनता में घोर कष्ट और असन्तोष फैलने लगा। ग़दर के बाद अँगरेज़ों का ध्यान उस असन्तोष को शान्त करने की ओर गया। भारतीय परम्परा को थोड़ा-बहुत बचाने के लिए यह कल्पना की गयी कि जमींदारों के स्वामित्व के साथ-साथ किसानों के भी "दख़ीलकारी" या "मौरूसी" हक़ हैं, और इसके अनुसार सन् १८५६ से १८७३ ई० तक क़ानून बनाये गये।

सन् १८६१ में मध्य प्रान्त की रचना करके वहाँ नया ज़मीन-बन्दोबस्त शुरू किया गया। उस प्रान्त में मराठा युग से मालगुज़ार लोग चले आते थे, जिन्हें किसानों से बन्दोबस्त करने, कर वसूल करने, तालाब आदि बनवाने तथा किसानों को बेदख़ल करने के भी अधिकार थे, पर ज़मीन को बेचने या रहन रखने के अधिकार न थे। वे वास्तव में मालगुजारी वसूल करने वाले कर्मचारी थे, जिनके पद वंशानुगत हो गये थे। अँगरेज़ हाकिमों ने अब उन्हें ज़मीन का मालिक मान लिया और उनकी मालगुज़ारी इतनी बढ़ा दी कि वे भी किसानों का लगान बढ़ाये बिना न रहें।

रैयतवारी इलाक़ों के लिए सन् १८५५ में ही कम्पनी के डायरेक्टरों ने यह मान लिया था कि "सरकार का हक़ लगान नहीं, भूमिकर है"—अर्थात्

ज़मीन के मालिक किसान ही हैं। इसके अनुसार १८६४ ई० में भारत-मन्त्री ने आदेश दिया कि उपज में से लागत-खर्च काट कर वास्तविक आय पर ही कर लगाया जाय और वह उस आय के आधे से अधिक न हो। लेकिन इस आदेश पर अफ़सरों को चलाने के लिए कोई क़ानून नहीं बना। जहाँ एक-एक कलक्टर डेढ़ डेढ़ लाख किसानों से बन्दोबस्त करता और बिना कारण बताये मालगुजारी बढ़ा सकता था, तथा जहाँ किसान को उसके खिलाफ़ न्यायालय में अपील करने का अधिकार भी न था वहाँ इस आदेश का अमल में आना असम्भव था। ज़मींदारी इलाकों के ज़मींदारों पर सरकार ने जो बन्धन लगाये, रैयतवारी इलाकों के अपने अफ़सरों पर वे नहीं लगाये। परिणाम यह हुआ कि "५० फ़ी सदी मालगुज़ारी सिर्फ़ कागज़ी सलाह रही। व्यवहार में समूचा लगान (अर्थात् मालिक का हक़) लिया जाता रहा और अनेक बार मुनाफ़े का अंश भी।"

सन् १८६० में ठेठ हिन्दुस्तान में घोर अकाल पड़ा। सरकारी जाँच से मालूम हुआ कि अकाल अनाज की कमी से नहीं, प्रत्युत जनता में अनाज खरीदने की शक्ति न होने से हुआ। तब यह प्रस्ताव किया गया कि समूचे भारत में स्थायी बन्दोबस्त कर दिया जाय, "जिससे ज़मीन-मालिकों के स्वार्थ ब्रिटिश राज की स्थिरता में गड़ जाँय" और अकाल न पड़ें। इसपर एक अरसे तक विचार होता रहा। अन्त में सन् १८८३ ई० में भारत-सचिव ने इसका निषेध कर दिया। गदर के बाद जनता को खुशहाली की ख़ातिर सरकार अपनी आय छोड़ने को तैयार थी; पर बाद में जनता ने बराबर शान्तिमय प्रवृत्ति दिखायी तो वैसे त्याग की ज़रूरत न रही।

(इ) **प्रान्तीय अर्थनीति**—पहले प्रान्तीय सरकारों को भारत-सरकार की ओर से हर महकमे के खर्च की बँधी रकम हर साल दी जाती थी। सन् १८७० से प्रान्तीय मालगुज़ारी को अलग करने की बुनियाद डाली गयी।

§४. सीमा पार की घटनाएँ—गदर के कारण भारत से फ़ौज चीन जाते-जाते रुक गयी थी। गदर समाप्त होते ही सन् १८६० में वह भेजी गयी।

यह भारत के खर्च पर दूसरा अफ़ीम-युद्ध था, जिससे अँगरेज़ों ने चीन के बन्दरगाहों पर अधिकार जमाया।

न्यूज़ीलैंड के सरदारों से सन् १८४० में सन्धि कर अँगरेज़ों ने वहाँ बसना शुरू किया था। वहाँ के मूल निवासी मावरी लोगों ने जब देखा कि अँगरेज़ उन्हें गुलाम बना डालेंगे तो अपना एक संघ बना कर अँगरेज़ों के हाथ ज़मीन बेचना बन्द कर दिया। तब सन् १८६०-६१ में भारतीय सेना वहाँ भेजी गयी और दस बरस में मावरियों को कुचल दिया गया।

एल्गिन के समय वहाबियों से युद्ध के अतिरिक्त भूटान से भी छेड़छाड़ चल रही थी। सन् १८६५ में भूटान से युद्ध हुआ, जिससे (१) भूटान की तराई या "दुआर" अँगरेज़ों को मिले। उस इलाके में अब चा-बागान हैं; और (२) भूटान और सिकिम के बीच अँगरेज़ी पच्चर घुस गया, जिसमें हो कर तिब्बत का सीधा रास्ता जाता है।

अफ़गानिस्तान के अमीर दोस्तमुहम्मद के मरने पर उसका बेटा शेरअली गद्दी पर बैठा (१८६३ ई०)। सन् १८६६ तक वहाँ घरेलू लड़ाई चलती रही, पर अन्त में शेरअली सफल हुआ। लारेन्स ने गदर के बाद की अहस्तक्षेप नीति के अनुसार इस झगड़े में दखल न दिया। इसी बीच रूसी साम्राज्य भारत के नज़दीक पहुँच रहा था। सन् १८४६ में अँगरेज़ों ने पंजाब जीता था, तभी रूसियों ने उत्तरी कास्पियन से सीर के मुहाने तक जीत लिया था। १८५४ ई० में उन्होंने बलकाश के दक्खिन ईली का काँठा ले लिया था। अब सन् १८६४ से ६८ ई० तक उन्होंने ईली और सीर के मुहानों के दक्खिन, फ़रगाना का एक अंश तथा समूची बोखारा सल्तनत (ताशकन्द, समरकन्द, बोखारा) जीत ली। लारेन्स ने इसपर यह प्रस्ताव किया कि रूस और इँग्लैंड अपने प्रभाव-क्षेत्र बाँट लें और रूस यदि उस रेखा से आगे बढ़े तो युद्ध हो। इसके अनुसार रूस ने अफ़गानिस्तान की तरफ़ आमू नदी को अपनी सीमा स्वीकार किया।

सन् १८६७ में ब्रिटेन का अबीसीनिया से युद्ध हुआ। तब मुम्बई से एक सेना अबीसीनिया भेजी गयी।

लार्ड मेयो ने सन् १८७१-७२ में पूरबी सीमा के लुशाई पहाड़ियों के खिलाफ़ सेना भेजी। दूसरी तरफ़ उसने ईरान की पूरबी सीमा, सीस्तान के दक्खिनी छोर से समुद्रतट के ग्वादर शहर तक, अंकित करा दी, जिससे लासबेला और कलात रियासतें ब्रिटिश प्रभाव-क्षेत्र में आ गयीं। मेयो ने उनमें दस्तन्दाज़ी करने को एक अफ़सर भेजा।

मलाया प्रायद्वीप में अँगरेज़ १८वीं शती के अन्त से हस्तक्षेप कर रहे थे। सन् १८७४-७५ में भारत से फ़ौज भेज कर उन्होंने सिंगापुर के उत्तर पेरक रियासत को धर दबाया। उससे पड़ोस की रियासतें भी काबू में आ गयीं।

कास्पियन के पूरबी तट से बढ़ते हुए सन् १८७३ में रूसियों ने खीवा को भी जीत लिया। तब अँगरेज़ों ने भी अफ़गानिस्तान में दखल देने की सोची। भारत-मन्त्री ने लार्ड नार्थब्रुक को लिखा कि हरात और कन्दहार में ब्रिटिश एजेण्ट रक्खे जायँ। नार्थब्रुक को यह न जँचा और उसने इस्तीफ़ा दे दिया।

§५. भारत ब्रिटिश पूँजीशाही के शिकंजे में—उपर्युक्त घटनाओं से प्रकट है कि महारानी के राज्य में भारत का ब्रिटिश साम्राज्य-साधना के लिए पहले से भी अधिक उपयोग किया जाता रहा। सन् १८६५ में भारत से इंग्लैंड तक समुद्र के भीतर पनडुब्बा तार जारी किया गया। उसके लगाने का समूचा खर्च भारत पर डाला गया। हमने देखा है कि भारत की मालगुजारी में से ५ फ़ी सदी नफ़े की गारण्टी पा कर अँगरेज़ पूंजीपतियों ने रेल-कम्पनियाँ खड़ी की थीं। नफ़े की गारण्टी के कारण उन्होंने अत्यन्त फिजूल-खर्ची से लाइनें बनवायीं। जब कभी हिसाब में ग़बन के कारण उन्हें घाटा हुआ, तब भी उन्हें ५ फ़ी सदी नफ़ा तो अपने बेहोश मालिक, भारतीय किसान, की तरफ़ से दिलाया ही गया।

लार्ड मेयो के समय कम्पनी-रेलों के बजाय सरकारी रेलें शुरू की गयीं, और यह तय हुआ कि उत्पादक कार्यों के लिए मालगुज़ारी में से ख़र्च करने के बजाय क़र्ज़ ले कर रुपया लगाया जाय। यदि मालगुज़ारी की बचत

हो तो उसे भी उत्पादक कार्य में कर्ज़ के रूप में दे दिया जाय और अनुत्पादक कर्ज़ में से उतनी कमी कर दी जाय। यह बात बुरी न थी, बशर्ते कि जनता की इच्छा से और जनता के हित में कार्य होता। भारतीय जनता को नहरों की ज़रूरत थी और नहरें रेलों से ½ खर्च पर बन सकती थीं। दूसरे सन् १८७१ तक मुख्य रेल-पथ (कलकत्ते से मुम्बई, मुम्बई से मद्रास और कलकत्ते से मुलतान तक) पूरे भी हो चुके थे। लेकिन इसके बाद भी ब्रिटिश पूँजी के विनियोग की ख़ातिर भारत में पटरियों का जाल बिछता गया और भारत का कर्ज़ बढ़ता गया।

भारत की गुलामी से लाभ उठाने का दूसरा तरीका इसके ज़कात के नियन्त्रण द्वारा था। गदर के बाद की आर्थिक कठिनाई में कैनिंग की सरकार ने आयात पर थोड़ी-सी चुंगियाँ बढ़ा दीं। लेकिन अँगरेज़ व्यापारियों के दबाव से उसे वे चुंगियाँ दो बरस में ही घटानी पड़ीं। अगले "दस वर्ष में भारत का व्यापार बढ़ा, पर जकात की आय घटी। उस आय की मात्रा उपहासास्पद थी।" सूती धागा के आयात पर ३½ फ़ी सदी और कपड़े के आयात पर ५ फ़ी सदी चुंगी थी। उस समय २-३ कपड़े की मिलें कलकत्ते में तथा एक दर्जन बम्बई में खुल चुकी थीं। लंकाशायर को इतने से भी चिढ़ थी। सन् १८७५ में लार्ड नर्थब्रुक पर दबाव डाला गया कि इस ५ फ़ी सदी चुंगी को भी हटा दें। तब नार्थब्रुक ने इस्तीफ़ा दे दिया।

भारतीय शिल्पों का नाश होने पर बेकार जनता की सस्ती मज़दूरी से भी अँगरेज़ पूँजीपतियों ने लाभ उठाया। लार्ड मेयो को आशा थी कि "भारत की सस्ती मज़दूरी ब्रिटिश व्यवसायी के कर्तृत्व के लिए नया क्षेत्र उपस्थित करेगी।" चाय, काफ़ी, सिनकोना, जूट और नील की काश्त की सफलता का उल्लेख कर उसने कहा कि हमें जंगलों, खानों और समुद्र की मछलियों पर भी ध्यान देना है. और इसलिए उसने जंगल, भूगर्भ तथा समुद्री पड़ताल आदि के महकमे खोले। जिन कारबारों में अँगरेज़ों की पूँजी लगी थी, उनकी पूँजी का नफ़ा हर साल भारत से बाहर जाता था।

सन् १८५८ में भारत पर ६६५ लाख पौंड कर्ज़ डाला गया था। महारानी के राज के १६ सालों में वह कर्ज़ दूना हो गया। इसके अलावा कम्पनी की १२० लाख पौंड पूंजी पर भी भारत को सूद देना पड़ता था। इस सूद और विलायत में भारत-सरकार के खर्चे के नाम पर भारत को अब (सन् १८७० के बाद) १½ से २ करोड़ पौंड वार्षिक का माल आयात की अपेक्षा अधिक विलायत भेजना पड़ता था। यों महारानी के राज के १२ बरसों में भारत से धन की वार्षिक निकासी चौगुनी हो गयी, और इस धारा की पूर्ति के लिए जनता के कर का बोझ ५० फ़ी सदी बढ़ गया, जिसमें नमक-कर तो विभिन्न प्रान्तों में ५० फ़ी सदी से १०० फ़ी सदी तक बढ़ा।

भारत न केवल कपड़ा और अन्य कारीगरी की चीज़ें अन्न दे कर खरीदता रहा, प्रत्युत अपना यह खिराज भी अन्न और कच्चे माल से चुकाता रहा। अनाज का निर्यात इस अर्से में वार्षिक ३० लाख से ८० लाख पौंड हो गया। तेलहन और कच्चे चमड़े का निर्यात भी इसी तरह बढ़ा। तेलहन की खली सर्वोत्तम खाद होती है, इसलिए तेलहन का निर्यात "ज़मीन की उपजाऊ शक्ति का निर्यात" था। कच्चे चमड़े के निर्यात का बढ़ना चमारों के शिल्प के ह्रास का सूचक था।

यह पद्धति हमारे देश में अब तक जारी है। जाड़े के मौसम में हमारे गाँव और मंडियों में अनाज का जो चुस्त चालान दिखायी देता है वह स्वतन्त्र व्यापार नहीं, प्रत्युत ग़रीब किसानों को अपना पेट काट कर गुलामी का खिराज देना होता है। इसीलिए अकाल के सालों में भी वह "व्यापार" वैसी ही चुस्ती से चलता रहता है। विदेशी व्यापार सब हुण्डियों द्वारा होता है। भारत के जो व्यापारी माल बाहर भेजते हैं, वे उन व्यापारियों से दाम पा कर हुण्डियाँ दे देते हैं जिन्होंने बाहर से माल मँगाया होता है। लेकिन चूँकि मँगाया हुआ माल हर साल भेजे हुए माल से कम होता है, इसलिए माल मँगाने वालों से भेजने वालों को पूरा मूल्य नहीं मिल जाता। इस कमी के लिए लन्दन में भारत-सचिव हुण्डियाँ निकालता है, जिनका भुगतान भारत के खज़ानों से हो जाता है।

अध्याय ८

सम्राज्ञी का राज

(१८७६–१९०१ ई०)

§१. **युरोप की विश्व-प्रभुता**—सन् १८७६ में महारानी विक्टोरिया ने भारत सम्राज्ञी का पद धारण किया। यह घटना एक नयी लहर की सूचक थी। इंग्लैंड ने अपना साम्राज्य बनाने में युरोप के दूसरे देशों से कैसे बाज़ी मार ली, सो हमने देखा है। नैपालियन की अन्तिम हार के धक्के से सँभल कर फ्रान्स सन् १८३० से फिर साम्राज्य की तलाश करने लगा। उसने तुर्की साम्राज्य का अलजीरिया और चीन साम्राज्य का हिन्दचीन प्रदेश जीत लिये और स्वेज़ नहर बना कर मिस्र में प्रभाव जमाया। इटली और जर्मनी १९वीं शती के मध्य तक टुकड़ों में बँटे हुए थे। सन् १८६० के बाद ये दोनों राष्ट्र संघटित हुए, और तब ये भी साम्राज्य और उपनिवेशों की खोज करने लगे।

अमेरिका महाद्वीप के पुराने बाशिन्दों का युरोप वालों ने संहार ही कर डाला था, और उनकी जगह पर अपने नये राष्ट्र खड़े कर लिये थे। आफ्रिका का तट युरोपियनों के अधीन था और यह स्पष्ट था कि यदि वे भीतर घुसें तो वहाँ उनका मुकाबला करने वाला कोई न था। उत्तरी आफ्रिका नाम को तुर्की के सुल्तान के अधीन था। एशिया महादेश में भारत जैसा पुरानी सभ्यता वाला देश न केवल युद्ध और राजनीति में, प्रत्युत शिल्प और व्यापार में भी, युरोप के मुक़ाबले में पस्त हो गया और चीन, ईरान और तुर्की बार-बार पछाड़ खा चुके थे। युरोप के राष्ट्रों को अब यह स्पष्ट दिखायी देने लगा कि शीघ्र ही समूचे संसार पर उनकी प्रभुता हो जाना निश्चित है। इस विश्वास के साथ अब वे एक दूसरे से होड़ करते हुए

पुराने खोखले राज्यों पर गिद्धों की तरह झपटने लगे। प्रशिया के राजा ने प्रायः सब जर्मन रियासतों को अधीन कर सन् १८७१ में जर्मन सम्राट् का पद धारण किया। उसी की नक़ल पर इंग्लैंड की महारानी भारत-सम्राज्ञी बनीं। इस उपलक्ष में १ जनवरी सन् १८७७ को दिल्ली में एक दरबार किया गया। उसी समय मद्रास और मैसूर प्रान्तों में घोर दुर्भिक्ष था, जिसमें साल भर में ५० लाख मनुष्य भूख से तड़प तड़प कर मर गये।

§२. **दूसरा अफ़ग़ान युद्ध**—साम्राज्य-लोलुपता की इस नयी झोंक में इंग्लैंड के अमात्यों ने तय किया कि मध्य एशिया में रूस साम्राज्य से अपनी सीमा भिड़ा दी जाय। इसके लिए उन्होंने लार्ड लिटन को भारत का वाइसराय बना कर भेजा।

लिटन ने कलकत्ते से सीधे अम्बाला आ कर अमीर शेरअली के पास यह सन्देश भेजा कि काबुल में एक अँगरेज़ दूत रखना अभीष्ट है, और हरात में तो एक अगरेज़ कारिन्दा रखना ही होगा। इस बातचीत के दौरान में ही वह अफ़गानिस्तान को घेरने भी लगा। अफ़गान देश की दक्खिन-पूरबी सीमा सिबी है, जिसके उत्तर पच्छिम, बोलान दर्रे के उस पार, शालकोट ('कोइटा') का खुला ऊँचा पठार मानो अफ़गान क़िले का दक्खिनी बुर्ज है। दर्रा बोलान तक कलात की सीमा है। कलात, लासबेला और बलोचिस्तान में अँगरेज़ कारिन्दे दस्तन्दाज़ी कर ही रहे थे। दिसम्बर १८७६ ई० में कलात और लासबेला के खानों तथा बलोच सरदारों ने एक सन्धि पर दस्तखत कर दिये जिससे अँगरेज़ी सेना को बोलान के रास्ते 'कोइटा' में घुसने का मौक़ा मिला और अगरेज "वस्तुतः कलात के मालिक बन गये।" पूरब तरफ़ लिटन ने कावग्नारी को कोहाट से कुर्रम दून में घुसने को भेजा, और उत्तरपूरब तरफ़ कश्मीर के महाराजा को शस्त्र दे कर उभाड़ा कि वह चितराल के रास्ते के दर्रों पर काबू कर ले। उसने गिल्गित में ब्रिटिश एजेन्सी स्थापित कर ली, और कश्मीर के दिवालिये राज के खर्च पर वहाँ तक तार की पाँत पहुँचा दी। उसका "लक्ष्य अफ़गान शक्ति को क्रमशः खंडित और कमज़ोर करना था।"

इस बीच युरोप में बड़ी घटनाएँ घट रही थीं। बालकन प्रायद्वीप की युरोपियन जातियों ने तुर्क साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह किया। उनकी मदद में रूसी सेना कुस्तुन्तुनियाँ के दरवाज़ों पर आ पहुँची। रूस का कुस्तुन्तुनियाँ ले लेना अँगरेज़ों के स्वेज़ मार्ग के लिए ख़तरनाक होता, इसलिए उन्होंने अपना बेड़ा दरे-दानियाल में ला घुसेड़ा और तुर्की के सुल्तान से यह कह कर कि वे रूस से उसका बचाव करेंगे, एक गुप्त सन्धि कर ली। उस सन्धि का सार यह था कि तुर्क साम्राज्य का एशियाई प्रदेश ब्रिटिश प्रभाव-क्षेत्र बन जायगा और साइप्रस द्वीप अँगरेज़ों को मिलेगा। अँगरेज़ों ने माल्टा द्वीप में हिन्दुस्तानी फ़ौज भी मँगा ली। जर्मनी की मध्यस्थता से दोनो साम्राज्यों के बीच युद्ध होता-होता रुका और बर्लिन में युरोपीय राष्ट्रों की सभा हुई (जून-जुलाई १८७८ ई०)। तुर्क साम्राज्य का निपटारा करना उस सभा का मुख्य उद्देश था। शुरू में ही प्रत्येक राष्ट्र के प्रतिनिधि से यह एलान करने को कहा गया कि वे कोई गुप्त सन्धि करके नहीं आये हैं। ब्रिटेन के मन्त्री डिज़रायली और सालिस्बरी ने कोई चारा न देख वैसा कह दिया। पर कुछ दिन बाद ही उनका भेद खुल गया। उनकी इस करतूत से खीझ कर फ्रान्सीसी प्रतिनिधि सभा छोड़ कर जाने लगा। तब एक और गुप्त सन्धि द्वारा फ़्रान्स को मनाया गया। उस सन्धि का सार यह था (१) कि फ्रान्स यदि तुर्क साम्राज्य का त्यूनिस प्रान्त दबा ले तो ब्रिटेन आपत्ति न करेगा, (२) मिस्र के आर्थिक नियन्त्रण में फ़्रान्स का आधा हिस्सा होगा, और (३) सीरिया में षड्यन्त्र करने का एकाधिकार फ्रान्स को रहेगा।

माल्टा में हिन्दी फ़ौज देख कर रूसियों ने सोचा कि उस फ़ौज को अपने घर के नज़दीक काम दिया जाय। इसलिए जिस दिन बर्लिन में सन्धि-सभा शुरू हुई, उसी दिन ताशकन्द से जनरल स्टोलटाफ़ ने काबुल को कूच किया। शेरअली ने रूस से स्थायी मैत्री की सन्धि की, पर बर्लिन की सन्धि हो जाने पर स्टोलटाफ़ काबुल से लौट गया।

उसके लौट जाने पर लिटन अफ़गानिस्तान पर टूट पड़ा। अँगरेज़ी सेना तीन तरफ़ से बढ़ी। एक टुकड़ी ने ख़ैबर से बढ़ कर

जलालाबाद ले लिया; दूसरी ने कुर्रम के रास्ते घुस कर पैवार घाटा छीन लिया; और तीसरी ने 'कोइटा' से कूच कर कन्दहार जीत लिया। शेरअली तुर्किस्तान भाग गया और वहीं उसकी मृत्यु हुई। उसके बेटे याकूबखाँ के साथ २६-५-१८७६ ई० को गन्दमक पर सन्धि हुई। उसके अनुसार (१) अफ़गानिस्तान ने अपनी विदेशी नीति अँगरेज़ों को सौंप दी; (२) काबुल में अंगरेज़ रेज़िडेण्ट तथा हरात आदि नाकों में अँगरेज़ कारिन्दे रखना तय हुआ; (३) पैवार घाटे सहित कुर्रम दून, कोइटा-पिशीन, थल-छोटियाली और सिबी के इलाके अँगरेज़ों को दिये गये; और (४) यह तय हुआ कि कन्दहार में अँगरेज़ी सेना जाड़े तक ठहरेगी, बाकी इलाकों से लौट जायगी। गन्दमक की सन्धि से अफ़गानों की स्वतन्त्रता समाप्त हुई; वे अंगरेज़ों के रक्षित बन गये और उन्होंने अपने देश के दक्खिन-पूरबी ज़िले, जिनकी जनता शुद्ध पठान है, अँगरेज़ों को दे दिये।

लेकिन विदेशी संगीनों को अपने देश में देखना अफ़गान बरदाश्त नहीं कर सकते। ३-६-१८७६ ई० को विद्रोह कर उन्होंने रेज़िडेण्ट कावग्नारी को मार डाला। इसपर सेनापति रौबर्ट्स कुर्रम से शुतुरगर्दन घाटा पार कर, चारासिआब पर अफ़गानों को हराते हुए, काबुल आया, और फ़ौजी कचहरी बैठा कर ८७ अफ़गानों को फाँसी दिला दी। याकूबखाँ को नज़रबन्द कर मेरठ भेजा गया। फाँसियों से अफ़गान फिर भड़के और रौबर्ट्स को घेर लिया। कन्दहार से स्टिवर्ट ने आ कर उसे घेरे से निकाला। परन्तु अब अँगरेज़ों ने अपने को फँसा पाया। वे सारे अफ़गानिस्तान को जीत न सकते थे और वहाँ कोई शासन खड़ा किये बिना लौटते तो सन् १८४२ वाली घटनाएँ दोहरायी जातीं। कन्दहार एक कठपुतले शासक के हाथ सौंप दिया गया था, पर बाकी इलाकों के लिए कोई शासक मिलता न था। लिटन ने रौबर्ट्स के पास एक अफ़सर को इस आदेश से भेजा कि "काबुल पहुँचते ही हमें उस चूहेदानी से निकालने का ढंग सोचना।" इस बीच शेरअली का भतीजा अब्दुर्रहमान, जो तब तक रूसी तुर्किस्तान में शरणागत था, अफ़गानिस्तान में प्रकट हुआ। लिटन ने उस "जंगल के बीच इस मेढ़े" को पा

कर .खैर मनायी। किन्तु तभी लिटन का उत्तराधिकारी बना कर रिपन को भारत भेजा गया।

हरात शेरअली के बेटे आयूबखाँ के काबू में था। रिपन अब गन्दमक की सन्धि में से केवल काबुल और हरात में अँगरेज़ अफ़सर रखने की शर्त हटा कर, बाकी शर्त्तों को रखते हुए, अब्दुर्रहमान को अफ़गानिस्तान देने को तैयार था। अब्दुर्रहमान भी इतने से सन्तुष्ट था। उनकी बातचीत चल ही रही थी कि आयूब ने कन्दहार पर हमला कर जनरल बरोज़ को माईवन्द पर करारी शिकस्त दी (२७-७-१८८० ई०)। रिपन ने तब रौबर्ट्स को काबुल से कन्दहार भेजा और बाकी सेना काबुल से लौटा ली। रौबर्ट्स ने कन्दहार पहुँच आयूब को हरा दिया। सन् १८८१ के शुरू में अँगरेज़ी सेना कन्दहार भी खाली कर आयी। अब्दुर्रहमान ने तब कन्दहार और हरात भी जीत लिये।

दूसरे अफ़गान युद्ध के सिलसिले में सिबी तक रेलपथ पहुँचा दिया गया।

§३. मिस्र पर ब्रिटिश नियन्त्रण—मिस्र के जिस खदीव के समय स्वेज़ नहर खुली थी, उसने अपनी फ़िज़ूलखर्ची से बड़ा कर्ज़ कर लिया था। इसी कर्ज़ के कारण उसे स्वेज़ नहर के अपने हिस्से अँगरेज़ों के हाथ बेचने पड़े थे। लेकिन वैसा करने पर भी उसका कर्ज़ न उतरा और सन् १८७९ में उसने अपने देश की मालगुज़ारी को अपने फ्रान्सीसी और अँगरेज़ उत्तमर्णों के हाथ गिरवी रख दिया। सन् १८८२ में .फ्रान्स और इँग्लैंड के शासन के विरुद्ध मिस्री लोगों ने अरबी पाशा के नेतृत्व में विद्रोह किया। फ्रान्सीसी सरकार ने खर्च के डर से उस विद्रोह के सम्बन्ध में कुछ न किया; अँगरेज़ों ने भारत के खर्च पर और भारत से फ़ौज भेज कर उस विद्रोह को कुचल दिया। तब से मिस्र पर अकेले इँग्लैंड का नियन्त्रण रहने लगा नाम को वहाँ तुर्की के सुल्तान का आधिपत्य और खदीव का शासन बना रहा।

सूडान और सोमाली देश भी मिस्र के अधीन थे। वहाँ तभी महदी के नेतृत्व में विद्रोह हुआ। मिस्री फ़ौजें महदी के मुकाबले में हारीं और उनके

साथ का अँगरेज़ी तोपख़ाना छीना गया। जनरल गौर्डन को तब सूडान की राजधानी खार्तूम पर भेजा गया, लेकिन वह ११ हज़ार फ़ौज के साथ कैद हो गया। सन् १८८४ के अन्त में उसे छुड़ाने को फिर चढ़ाई की गयी, पर इस फ़ौज के खार्तूम पहुँचने के दो दिन पहले सब कैदी मार डाले गये थे। अँगरेज़ों ने सूडान तट के सुआकीम और सोमाली तट के ज़ैला, बर्बरा आदि क़िलों में भारतीय सेना डाल कर सन्तोष किया।

§ ४. **भारतीय जागरण का आरम्भ**—शुरू-शुरू में जिन भारतवासियों ने अँगरेज़ी शिक्षा पायी, वे प्रायः समाज-सुधार और शिक्षा-प्रचार के बड़े पक्षपाती थे। अँगरेज़ी राज के प्रति उन्हें अनुरक्ति थी और इँग्लैंड की शासन-पद्धति के वे प्रशंसक थे। वे समझते थे कि भारत में समाज-सुधार और ज्ञान-प्रसार अँगरेज़ी राज के द्वारा ही हो सकता है। अपने देश की बढ़ती हुई दरिद्रता और गुलामी की ओर भी उनका ध्यान जाता था, पर वे समझते थे कि अँगरेज़ हमें माँगने भर से वे अधिकार दे देंगे, जिनसे हम अपने देश की दशा सुधार सकेंगे। उनकी माँगें भी तुच्छ होती थीं। १८५० ई० के क़रीब तक कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में इस तरह की माँगने वाली संस्थाएँ भी स्थापित हो गयी थीं। बंगाल के राजा राममोहन राय (१७७४–१८३३ ई०) और ईश्वरचन्द्र विद्यासागर (१८२०–१८६१ ई०) का उल्लेख हो चुका है। उत्तर भारत के सैयद अहमदख़ाँ (१८१७–१८६२ ई०), महाराष्ट्र के गोपाल हरि देशमुख (१८२३–१८६२ ई०) और गुजरात के दादाभाई नवरोजी (१८२५–१६१७ ई०) भी पहले अँगरेज़ी-शिक्षित सुधारकों में से थे। सन् ५७ के गदर के समय जब समूचा रुहेलखंड अँगरेज़ों से लड़ रहा था, तब सैयद अहमदख़ाँ वहीं अँगरेज़ों को बचाने में लगे थे। पीछे उन्होंने अपनी एक पुस्तक में यह लिखा कि गवर्नर-जनरल की काउन्सिल में यदि एक हिन्दुस्तानी सदस्य होता, जिसके द्वारा सिपाही अपने कष्ट सरकार तक पहुँचा सकते, तो ग़दर न होने पाता! सन् १८७७ में लार्ड लिटन से सैयद अहमदख़ाँ ने अलीगढ़ मुस्लिम कालेज की नींव रखवायी।

दादाभाई नवरोजी दूसरे अँगरेज़ीदानों की तरह अँगरेज़ी राज के भक्त न थे। उन्होने पहलेपहल अपने देश की दरिद्रता और उसके कारणों को ठीक-ठीक समझा और उनपर प्रकाश डाला।

स्वामी दयानन्द

अंगरेज़ी शिक्षा से अपरिचित लोगों में अँगरेज़ी राज से वैसा अनुराग न था। उनमें अब कुछ ऐसे व्यक्ति पैदा हुए जिनके कारण गदर के बाद का भारतवासियों का घोर अनात्मविश्वास कुछ कम हुआ। गुजरात के दयानन्द (१८२४-१८८३ ई०) तथा बंगाल के रामकृष्ण परमहंस (१८३४-१८८६ ई०) उनमें प्रमुख थे। दयानन्द धर्म-सुधारक और समाज-सुधारक थे, परन्तु उन्हें सुधारो के लिए प्रेरित करने वाला भाव यह था कि इससे राष्ट्र शक्तिशाली हो कर स्वाधीन हो सकेगा। उन्होने लिखा, "कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है, अथवा प्रजा पर पिता-माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।" गुजराती होते हुए भी दयानन्द ने अपने ग्रन्थ हिन्दी में लिखे, क्योंकि उनके विचार में "भिन्न-भिन्न भाषा, पृथक्-पृथक् शिक्षा और अलग-

अलग व्यवहार का विरोध बिना छूटे'''अभिप्राय सिद्ध होना कठिन" था। विज्ञान के प्रसार, शिल्प की उन्नति और स्वदेशी की ओर दयानन्द का विशेष ध्यान था। रामकृष्ण परमहंस की मुख्य देन थी सब धर्मों का समन्वय। अपने जीवन की उच्चता से उन्होंने उन अँगरेज़ी-पढ़ों में से भी अनेक को अपनी तरफ़ खींचा जो प्रत्येक भारतीय वस्तु को तुच्छ मानने लगे थे, और उनकी हार-मनोवृत्ति को बदल दिया।

बंकिमचन्द्र

अँगरेज़ी शिक्षा और अँगरेज़ी राज की चोट के कारण भारतीय वाङ्मय में भी जागरण के चिह्न दिखाई दिये। बंगला कविता में सन् १८५८ से ही स्वाधीनता और राष्ट्रीयता की पुकार गूँजने लगी थी। बंकिमचन्द्र (१८३८-१८९४ ई०) अँगरेज़ी-पढ़ों में से पहले व्यक्ति थे जिन्होंने दयानन्द की तरह पूर्ण स्वाधीनता का आदर्श सामने रक्खा। वारन हेस्टिंग्स् के समय बंगाल में गुरिल्ला युद्ध करने वाले सन्यासियो के चरित से एक कहानी बना कर उन्होंने आनन्दमठ नाम से स्वतन्त्रता के योद्धाओं का आदर्श अंकित किया (१८८२ ई०)। उस मठ के सन्यासियों से उन्होंने काली की वन्दना के बहाने मातृभूमि की वन्दना 'वन्दे मातरम्' गीत से करायी। बंकिम ने जो लहर बँगला में चलायी, वही नर्मद (१८३३-१८८६ ई०) ने गुजराती में, हाली (१८३७-१९१४ ई०) ने उर्दू में, हरिश्चन्द्र (१८५०-८५ ई०) ने हिन्दी में और विष्णुशास्त्री चिपलूणकर (१८५०-८१ ई०) ने मराठी में चलायी। चिपलूणकर के साथी बाल गंगाधर तिलक थे। सन् १८८१ में पहलेपहल उन्हें अपने एक लेख की खातिर चार मास की कैद मिली। सन् १८७० ई० के बाद मद्रास के सिवाय सभी प्रान्तों में देसी अखबार थे और उनमें राष्ट्रीय स्वाधीनता की भावना प्रकट होने लगी थी। इसी ज़माने में कनिंघम, बर्जेस

आदि अँगरेज़ विद्वानों ने भारतीय पुरातत्त्व की खोज जारी रक्खी जिससे हमारे इतिहास के पुनरुद्धार का मार्ग बना।

इसी समय भारतीय व्यवसायी देश में नये कल-करखाने भी स्थापित करने लगे। पहले-पहल सन् १८५४ में बम्बई में कावसजी नानभाई दावर ने कातने-बुनने की एक मिल खड़ी की। सन् १८८५ तक भारत में ४-५ दर्जन कपड़े की मिलें लग चुकी थीं।

§ ५. स्थानीय स्वशासन, कृषक अधिकार क़ानून तथा इल्बर्ट बिल—लार्ड रिपन ने जागृति के इन अस्फुट चिह्नों को पहचाना और ऐसी चेष्टा की कि 'आने वाली महान् कठिनाई का समय रहते प्रतिकार हो जाय।" गाँवों तक के प्रबन्ध का विदेशी द्वारा संचालन जागृत जनता को बहुत अखरता। इसलिए रिपन ने "स्थानीय स्वशासन" जारी किया। यह योजना मेयो की थी, जिसके अनुसार बम्बई शहर की सभा को सन् १८७५ में और कलकत्ते को १८७६ में कुछ अधिकार मिले थे। रिपन ने सन् १८८१ में प्रान्तीय सरकारों को सब शहरों और गाँवों के लिए वैसा "स्वशासन" देने का अधिकार दे दिया। उसने लिखा. "देसी पद्धति को हमने बहुत-कुछ नष्ट किया है। पर उसके···अवशेष देश के अनेक भागों में हैं, और उन अवशेषों पर मैं स्थानीय स्वशासन की इमारत खड़ी करना चाहता हूँ।" लेकिन पुरानी पद्धति में स्थानीय पंचायतें राज्य की बुनियाद थीं, इस 'स्थानीय स्वशासन' के बोर्ड राज्य के बनाये हुए खिलौने थे।

कैनिंग और लारेन्स के कृषक-अधिकार-कानूनों से किसानों को राहत न मिली थी। ज़मींदारों और किसानों के सम्बन्ध जिन रिवाजों के अनुसार थे, वे अब टूट रहे थे। क़ानून की मदद से अपनी आमदनी से निश्चिन्त हो जाने से ज़मींदार शहरों में बस रहे थे। इस दशा में रिपन ने फिर किसानों को उनके अधिकारों का एक अंश वापिस दिलाने की कोशिश की। उसके प्रस्तावित क़ानून उसके उत्तराधिकारी डफ़रिन के समय स्वीकृत हुए।

उस समय के जाब्ता फ़ौजदारी के अनुसार देसी जज अँगरेज़ अभियुक्तों का विचार न कर सकते थे। रिपन ने अपनी काउन्सिल के मेम्बर इल्बर्ट से सन् १८८३ में एक बिल पेश कराया, जिसका उद्देश देसी जजों को वह अधिकार देना था। इसपर हिन्दुस्तान के गोरे भड़क उठे। उन्होंने रिपन का सामाजिक बहिष्कार किया, सरकारी कर्ज़ का बहिष्कार करना तय किया और गोरी फ़ौज को भड़काने की कोशिश की। एक सलाह यह भी थी कि लार्ड रिपन का अपहरण करके उन्हें जहाज़ में रख कर विलायत भेज दिया जाय! रिपन को अन्त में झुकना पड़ा और यह समझौता किया गया कि गोरे अभियुक्तों का विचार जूरी से होगा।

§६. **रूस से सीमा-निर्णय**—सन् १८८४ में रूसियों ने मर्व शहर फ़तह किया जो अफ़गान सीमा से १५० मील पर है। इसपर अंगरेज़ फिर बिदके। अन्त में यह तय हुआ कि रूसी और ब्रिटिश प्रतिनिधियों का एक सम्मिलित मंडल हरीरूद से आमू दरिया तक अफ़गानिस्तान की सीमा अंकित कर दे। यह मंडल जब सीमा पर पहुँचा तो रूसियों और अफ़गानों की छीनझपट जारी थी। रूसियों ने मर्व के सौ मील दक्खिन पंजदेह बस्ती अफ़गानों से छीन ली। इसी बीच भारत में लार्ड रिपन की जगह डफ़रिन आ गया था और अमीर अब्दुर्रहमान उससे रावलपिंडी में भेंट कर रहा था। डर था कि अफ़गान रूसियों को रोकेंगे तो रूसी हरात पर हमला करेंगे। कोइटा में डफ़रिन ने भारी सेना जमा की। उसने अब्दुर्रहमान से पूछा, हरात की रक्षा के लिए सेना भेजी जाय? लेकिन अब्दुर्रहमान नहीं चाहता था कि अँगरेज़ी सेना अफ़गानिस्तान में घुसे। इसलिए रूसी दक्खिन तरफ़ जहाँ तक बढ़ना चाहते थे, वह सीमा उसने स्वयम् मान ली।

§७. **उत्तरी बरमा का जीता जाना**—फ्रान्स के हिन्दचीन ले लेने के बाद से बरमा राज्य की सीमा उससे लगने लगी थी। अँगरेज़ों के शिकंजे से बचने के लिए बरमा के राजा ने फ्रांस, जर्मनी और इटली से व्यापारिक सन्धियाँ कीं। मौंदले में एक फ्रान्सीसी बैंक और फ्रान्सीसी रेल खोलने की

योजना बनी। ब्रिटिश सरकार ने फ्रान्स पर दबाव डाल कर उसे तोड़ दिया। उसके बाद इरावती से अँगरेज़ी बेड़ा ऊपर बढ़ा और दस दिन में उत्तरी बरमा को जीत लिया (नवम्बर १८८५ ई०)। बरमा के राजा को क़ैद कर रत्नागिरि भेजा गया। लेकिन देश को जीतने के बाद अँगरेज़ बरमा से सेना और पुलिस खड़ी न कर सके, और कई बरस तक बरमी लोग गुरिल्ला-युद्ध करते रहे। भारत की शक्ति और ख़र्च से ही अँगरेज़ों ने बरमा को दबाये रक्खा।

§८. **सीमान्तों पर अग्रसर नीति**—सन् १८८५ के रूसी खतरे के समय जो अतिरिक्त सेना खड़ी की गयी, उसे स्थायी कर के आगे बीस बरस तक भारत-सरकार ने सीमान्तों पर अग्रसर नीति जारी रक्खी। डफ़रिन के शासन-काल (१८८५—८८ ई०) में सिन्ध-काँठे का रेल-पथ तैयार हुआ, अफ़गान कबीलों और चितराल के मामलों में दखल दिया जाने लगा, और गिल्गित ले लेने की योजना बनी। बरमा के जीते जाने से लुशेई-चिन प्रदेश चारों तरफ़ से घिर गये।

सन् १८८६ से ९३ ई० तक लार्ड लैंसडौन के शासन में यही नीति और तेज़ी से चली। सन् १८८६ में अफ़गान कबीलों के झगड़ों से लाभ उठा कर झोब इलाका अँगरेज़ी संरक्षण में लिया गया, कश्मीर के महाराजा को पदच्युत किया गया तथा चितराल को रुपये की "सहायता" दी जाने लगी। सन् १८९० में मणिपुर और लुशेई के विद्रोह दबाये गये। सन् १८९१ में चितराल ने अपनी विदेशी नीति और सीमाओं की रक्षा भारत-सरकार को सौंप दी। कश्मीर की गद्दी तो महाराजा को वापिस दी गयी, पर गिल्गित में एक ब्रिटिश अफ़सर स्थायी रूप से रहने लगा। गिल्गित के उत्तर तरफ़ हुन्ज़ा और नगर पर चढ़ाई कर उन्हें भी अधीन किया गया। इसी समय रूसी पामीर जीतने लगे, इसलिए सन् १८९२ में पामीर की सीमा-निर्णय के लिए एक मिश्रित प्रतिनिधि-मंडल बैठाया गया। उसी वर्ष सरहद्दी रेलपथ दर्रा बोलान के पार कोइटा और चमन तक, जो अफ़गानिस्तान की ज़मीन में था, पहुँच गया।

सन् १८९३ में लुशेइयों ने फिर विद्रोह किया। अब की बार उन्हें निःशस्त्र कर दिया गया। इस वर्ष भारत-सरकार ने चीन, तिब्बत और अफ़गानिस्तान से सीमा-निर्णय किया। चीन के सीमा-निर्णय से कचीन इलाका और शान रियासतें अँगरेजों की रक्षित हो गयी और तिब्बत के सीमा-निर्णय से सिक्किम पूरी तरह अँगरेज़ी आधिपत्य में आ गया। अमीर अब्दुर्रहमान ने मोहमन्द, अफ़रीदी, वजोरी और क्षोब पठानों के इलाकों और चमन पर आधिपत्य छोड़ दिया, तथा चितराल दीर बाजौर और स्वात में दखल न देना स्वीकार किया। उसने कहा, "इंग्लैंड अफ़गानिस्तान का कोई टुकड़ा चाहता नहीं, तो भी उड़ाने का कोई मौक़ा चूकता नहीं; रूस को बनिस्बत इस दोस्त ने ज़्यादा ले लिया है।" उसने यह भी कहा कि कबीलों के इलाकों में युद्ध हुए बिना न रहेगा।

यह भविष्यवाणी लैन्सडौन के उत्तराधिकारी एल्गिन के शासन-काल (१८९३-९८ ई०) में ही पूरी हो गयी। सन् १८९५ के शुरू में चितराल में विद्रोह हुआ। गिल्गित से एक अँगरेज़ी टुकड़ी भेजी गयी, पर वह भी घेर ली गयी। तब मलाकन्द और गिल्गित से दो बड़ी फौजें भेज कर चितराल फिर जीता गया। इसी वर्ष अँगरेजों ने टोची (कुर्रम नदी की दक्खिनी शाखा) की दून पर कब्जा कर लिया और पामीर में रूस और अफ़गानिस्तान की सीमाएँ अंकित हो गयीं।

अंगरेज़ों ने अब चितराल में छावनी रखना तथा वहाँ तक सड़क और थाने बनाना तय किया। इससे सन् १८९७ में टोची से स्वात तक समूचा सीमान्त भड़क उठा। मलाकन्द से एक अंगरेज़ सेनापति स्वातियों के खिलाफ़ तथा पेशावर से दूसरा अफ़रीदी-तीराह में घुसा। सन् १८५७ के बाद से भारत में यही सब से कठिन युद्ध हुआ। तीराह की चढ़ाई से अफ़रीदी दबे नहीं, और उन्होंने फिर यह दिखा दिया कि पठान अपने इलाके में विदेशी सेना को देख नहीं सकते। इसीलिए एल्गिन के उत्तराधिकारी कर्ज़न ने खैबर, कुर्रम और वज़ीरिस्तान से धीरे-धीरे सेना लौटा ली और वहाँ स्थानीय लश्कर खड़े किये। १९०१ ई० में कर्ज़न ने उत्तर-पच्छिमी इलाकों को पंजाब से अलग कर

एक प्रान्त बना दिया। सन् १६०१ में ही अमीर अब्दुर्रहमान चल बसा और उसका बेटा हबीबुल्ला गद्दीनशीन हुआ।

§६. **भारत में ब्रिटिश अर्थनीति** (१८७६-१६०१ ई०)—हमने देखा है कि नार्थब्रुक के इस्तीफ़ा देने का एक कारण यह भी था कि वह विलायती कपड़े पर से चुंगी हटाने को अन्याय समझता था। लिटन आते ही उस चुंगी को हटा देता, पर तभी चाँदी का भाव गिरने तथा मद्रास में घोर दुर्भिक्ष होने से भारत-सरकार की आय बहुत गिर गयी, जिससे उसे रुकना पड़ा। तब भारत-सचिव ने उसे लिखा कि भारत में "पाँच और मिलें काम जारी करने वाली हैं"—मानो कोई बड़ा अनर्थ होने वाला है—और सन् १८७६ में, जब अफ़गान युद्ध जारी था, और दक्खिन में सन् १८७७ तथा उत्तर भारत में सन् १८७८ के दुर्भिक्षों के प्रभाव बाकी थे, लिटन ने ३० कौंट तक के कपड़े पर से चुंगी हटा कर भारतीय आय का वह स्रोत सुखा दिया। सन् १८८२ में लार्ड रिपन ने नमक और शराब को छोड़ कर सब चीज़ों का आयात बिना चुंगी के कर दिया। डफ़रिन और लैन्सडौन के समय सामरिक ख़र्च की बढ़ती के कारण १८६४ ई० में फिर सब आयात पर ५% चुंगी लगायी गयी, और साथ ही भारतीय मिलों के २० कौंट से ऊपर के कपड़े पर भी उतनी ही चुंगी बैठा दी गयी। लंकाशायर के व्यवसायी इतने से सन्तुष्ट न हुए; इसलिए १८६६ ई० में विदेशी और भारतीय, बारीक और मोटे, सभी कपड़े पर ३½% चुंगी कर दी गयी। मोटे भारतीय कपड़े पर की चुंगी से लंकाशायर को कोई सीधा लाभ न था, क्योंकि विलायत से वैसा कपड़ा आता न था; उससे केवल भारत के ग़रीबों को कपड़ा मँहगा मिलने लगा।

एक तरफ़ आय के इस स्रोत का बलिदान किया जाता था, तो दूसरी तरफ़ अँगरेज़ी साम्राज्यलोलुपता के युद्धों का बोझ भारत पर पड़ता था। अफ़गान-युद्ध के ख़र्च का ¼ तथा मिस्र-युद्ध के ख़र्च का ¼ से कम इंग्लैंड ने दिया; बाक़ी सब भारत पर पड़ा।

तीसरे, अँगरेज़ी पूँजी के विनियोग की ख़ातिर भारत में रेलपथों का बनाना बराबर जारी रहा। जब अकाल पड़ते तो अकाल-पीड़ित स्थानों में

अनाज पहुँचाने की सुविधा के बहाने नये रेल-पथ खोले जाते। १८७३ ई० में कुल पाँच हजार मील रेल थी, १९०१ में २५ हज़ार हो गयी। दक्खिन पंजाब में नहरें निकाल कर बस्तियाँ बसायी गयीं थीं। उनकी गेहूँ की उपज से शताब्दी के अन्त में सीमान्त के रेलपथ गेहूँ के व्यापारपथ बन गये। तब सन् १९०० में पहलेपहल भारतीय रेलों से सब ख़र्च निकाल कर बचत हुई।

एक नयी पेचीदगी इस बीच उपस्थित हुई थी। दुनिया में चाँदी की उपज अधिक होने से सन् १८७० से रुपये का भाव गिरने लगा। उससे पहले १९वीं शती में रुपये का भाव बराबर २ शिलिंग था। रुपया सस्ता होने से उपज के दाम बढ़े और भारत के व्यापार-व्यवसायों को कुछ स्फूर्ति मिली। बन्दोबस्त-अफ़सरों ने उसी हिसाब से मालगुज़ारी बढ़ा दी, इसलिए सरकारी आय में कुछ फ़रक नहीं पड़ा। भारत को चाँदी की मन्दी से कोई कष्ट न होता, उलटा लाभ ही था। लेकिन भारत इँग्लैंड को हर साल जो खिराज देता था, उसका हिसाब इंग्लैंड चाँदी में गिनने को तैयार न था, वह उसे सोने के हिसाब से ही लेता रहा। इससे कठिनाई होने लगी।

इस दशा में सन् १८७८ में लार्ड लिटन ने प्रस्ताव किया कि रुपये का टकसालना परिमित करके उसका दाम बढ़ाया जाय। यदि जनता को अपनी चाँदी टकसालों में ले जा कर मनचाही मात्रा में रुपये बनवाने का अधिकार रहता तो चाँदी और रुपये का दाम एक ही सतह पर रहते। किन्तु यदि जनता के लिए टकसालें बन्द कर दी जायँ तो कम-ज़्यादा संख्या में रुपया बना कर सरकार रुपये के दाम ज़्यादा या कम कर सकती थी। लिटन इसी ढंग से रुपये का दाम बढ़ाना चाहता था। लेकिन रुपया सस्ता होने पर जो टैक्स बढ़ाये गये थे, वे रुपये को महँगा करके फिर घटाये न जाते। यों लिटन का उद्देश था जनता से धोखे से अधिक कर वसूल करना। ब्रिटिश सरकार ने वैसा करने की स्वीकृति न दी। लार्ड डफ़रिन ने फ़ौजी खर्च की ख़ातिर भारत का कर्ज बढ़ाया, जिससे विनिमय की दर भारत के ख़िलाफ़ और गिरी। तब उसने फिर लिटन वाले प्रस्ताव को दोहराया, पर ब्रिटिश सरकार ने फिर स्वीकृति

न दी। लैन्सडौन और एल्गिन के समय उजाड़ू फ़ौजी खर्च की ख़ातिर कर्ज़ और बढ़ गया; और रुपये का भाव गिरते-गिरते १३.१ पेनी पर पहुँच गया। तब सन् १८६३ से १८६६ ई० तक भारत-सरकार ने ब्रिटिश सरकार की सहमति से टकसालें बन्द कर दीं, और "११ आने के सच्चे रुपये को १६ आने का झूठा रुपया बना कर करदाता से धोखे से ४५ फ़ी सदी अधिक कर वसूल करना" शुरू किया। तब से रुपया सांकेतिक सिक्का रह गया। उसमें अपने मूल्य के बराबर की चाँदी न रही, और उसका मूल्य पौंड के मूल्य पर निर्भर हो गया।

अबोध जनता ने समझा, उसकी किस्मत के फेर से मन्दी आ गयी है और उसे पहले जितनी ही मालगुज़ारी देने के लिए अधिक अनाज बेचना पड़ता है। उसे क्या मालूम था कि यह मन्दी सरकार की ही लायी हुई थी, जो इस ढंग से दस-बारह करोड़ वार्षिक का अनाज किसानों से इस कारण अधिक वसूल करने लगी थी कि उसे अब विलायत को इतना खिराज अधिक देना पड़ता था! सन् १८६७-६८ से १६०१-२ ई० तक भारत की कुल मालगुज़ारी रुपयों में प्रायः उतनी ही रही, पर पौंडों में ६४२½ लाख से ७६३½ लाख हो गयी—और ये वर्ष वे थे जब सारे देश में लोग दुर्भिक्षों से तड़प-तड़प कर मर रहे थे।

रुपये का दाम बढ़ने से लाखों किसानों के कर्ज़ भी बढ़ गये—"भारत के गरीब कर्ज़दार वर्ग के गले में बँधी पत्थर की चक्की का बोझ बढ़ गया" और "उन समृद्ध वर्गों को लाभ हुआ जो जनता की मुसीबत पर जीते हैं।" और लाभ हुआ उन अँगरेज़ नौकरों और व्यवसायियों को जो भारत से अपनी बचत या मुनाफ़ा इँग्लैंड को भेजते हैं। "पर यह लाभ भारतीय करदाता के खर्च पर—भारत में हर क़र्ज़ को बढ़ा कर" हुआ। भारत के गरीबों की बचत चाँदी के तुच्छ गहनों के रूप में थी। "भारत सरकार के प्रस्ताव का अर्थ (था) गरीबों की उस बचत का ⅓ जब्त कर लेना। रुपये का दाम कृत्रिम रूप से बढ़ने से किसानों के चाँदी के कँगने और बाजूबन्द लागत से कम पर बिकने लगे। यों एक कलम की मार से सरकार ने

गरीबों का असल धन छीन लिया, जिससे कि वह अपने कर्ज (खिराज) को सुविधा से चुका सके।"

करों की इस चौमुखी वृद्धि के अलावा सन् १८७५ से १६०५ ई० तक भूमि-कर में साधारणतया ५० फ़ी सदी बढ़ती हुई, और ज़मीन के मामलों में अमलों का हस्तक्षेप कानूनों द्वारा अधिकाधिक बढ़ाया गया। सन् १८७५ में भारत-सचिव लार्ड सालिस्बरी ने लिखा था, "भारत का खून निकालना यदि ज़रूरी है, तो नश्तर उन अंगों पर लगाना चाहिए जहाँ खून ज़्यादा है।" लेकिन यह सलाह अमल में नहीं आयी, और कर का बोझ किसानों पर ही पड़ता रहा।

१६वीं सदी के अन्त में भारत के निर्यातों और आयातों का अन्तर करीब दो करोड़ पौंड वार्षिक रहा। यह खिराज अनाज के रूप में ही जाता था। भारतीय जनता की हालत तब यह थी कि देहात में मज़दूरी की दर दो आना रोज थी और "भूख बहुत कुछ आदत बन गयी थी।"

§१०. **जनता में असन्तोष**—लार्ड लिटन के शासन-काल में युद्ध, दुर्भिक्ष और दमन के कारण जनता में भीतर-भीतर बड़ा असन्तोष था। कुछ विचारशील अँगरेज़ों ने यह सोचा कि यदि उसे प्रकट होने का रास्ता न मिलेगा तो कभी एकाएक कोई विस्फोट हो जायगा। उनमें से एक, ह्यूम, ने डफ़रिन से सलाह कर एक ऐसी संस्था का आयोजन किया जिसमें अंगरेज़ी-पढ़े हिन्दुस्थानी अपने कष्टों और आकांक्षाओं को प्रकट कर सकें। यह संस्था "इण्डियन नैशनल काँग्रेस" के नाम से पहले-पहल दिसम्बर १८८५ ई० में बम्बई में जुटी। बकौल लार्ड डफ़रिन के, इन "भारतीय नेताओं के सामने यही आदर्श था कि भारत की विदेशी हमलों से...रक्षा ब्रिटिश सेना ही करती रहे; पर भीतरी मामलों का प्रबन्ध उन्हें गोरों की दस्तन्दाजी के बिना सौंप दिया जाय।" उनका 'अग्रगामी दल भी अधिक से अधिक प्रान्तीय काउन्सिलों का सुधार ही माँगता था।'

इन माँगों को देखते हुए सन् १८६२ में ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने "इण्डियन काउन्सिल्स ऐक्ट" पास किया। इसके अनुसार बड़े प्रान्तों की व्यवस्था-समितियों

में सदस्यों की संख्या बढ़ा कर २०-२१ कर दी गयी, और उनमें आधे गैरसरकारी सदस्य म्युनिसिपैलिटियों, ज़िला-बोर्डों आदि की सिफ़ारिश पर नामज़द किये जाने लगे। केन्द्रीय काउन्सिल के १० गैर-सरकारी सदस्यों में से ४ प्रान्तीय काउन्सिलों से चुन कर आने लगे। बहुपक्ष सब जगह सरकारी सदस्यों का ही रहा। पहले यह प्रथा थी कि जब कोई नया टैक्स लगाना हो, तभी अर्थ-सचिव काउन्सिल में प्रस्ताव लाता था। अब से वार्षिक बजट पेश होने लगा, पर सदस्य लोग उस पर विचार ही प्रकट कर सकते थे, उनके मत न लिये जाते थे। सदस्यो को प्रश्न पूछने का अधिकार भी दिया गया।

जगदीशचन्द्र वसु

सन् १८९३ ई० में शिकागो (अमेरिका) में एक सर्व-धर्म-सम्मेलन हुआ। उसमें रामकृष्ण परमहंस के शिष्य विवेकानन्द ने वेदान्त की व्याख्या की। विवेकानन्द के प्रवचन से अनेक अमेरिकन प्रभावित हुए। सन् १८९७ में जगदीशचन्द्र वसु ने भौतिक विज्ञान में कुछ नयी खोजें कीं, जिनसे युरोपियन विद्वान भी चकित हुए। भारतवासियों में इन घटनाओं से आत्मविश्वास की एक नयी लहर उठी।

सन् १८९६-९७ में भारत में व्यापक दुर्भिक्ष फैला, जिसमें करीब १० लाख आदमी मरे। उस दुर्भिक्ष के बीच भी सीमान्त का खर्चीला युद्ध चलता रहा, और १४ करोड़ रुपये का अनाज विलायत गया। उसी साल बम्बई में पहले-पहल प्लेग आयी। जनता में घोर असन्तोष था और वह ब्रिटिश शासन को ही अपने इन कष्टों का कारण अनुभव करने लगी थी। सरकारी अफ़सरों ने जब प्लेग के कारण लोगों के रहन-सहन में दस्तन्दाज़ी की, तो लोग और भी

खीझे, और पूना में दो अँगरेज़ मारे गये। तब सरकार ने दमन शुरू किया; तिलक को डेढ़ साल की कैद दी गयी।

लार्ड कर्ज़न जब वाइसराय हो कर आया, तब कलकत्ता-नगरसभा की शक्ति घटाने की एक तजवीज़ पेश थी। कर्ज़न ने उसे और कड़ा किया और बम्बई के लिए भी वैसा ही कानून तैयार किया। सन् १६०१ में उसने युनिवर्सिटियों पर सरकारी नियंत्रण बढ़ाने और फीसें ऊँची करने की तजवीज़ की। सन् १६०० में पहले से भी विस्तृत और घोर दुर्भिक्ष शुरू हुआ, जो ४ वर्ष जारी रहा।

§११. भारत द्वारा अँगरेज़ी साम्राज्य-साधना—हमने देखा है कि सन् १८८२-८४ में अंगरेज़ सूडान को जीत न पाये थे। सन् १८६६ में सेनापति किचनर ने मिस्र से नील के काँठे में ऊपर बढ़ कर समूचे सूडान को ले लिया। सूडान के उपरले हिस्से में फशोदा पर फ्रान्सीसी सेना थी; वह अँगरेज़ी सेना को बढ़ती देख हट गयी, जिससे इंग्लैंड फ्रान्स का युद्ध होता होता टल गया। सूडान के साथ सोमालीलैंड भी अँगरेज़ों ने लेना चाहा, पर वहाँ एक मुल्ला ने उनका मुकाबला किया। सन् १८६६ से १६२० ई० तक वह मुल्ला लड़ता रहा। उसके मुकाबले को सन् १६०३ से सिक्ख सेना वहाँ रक्खी गयी।

सन् १८६४-६५ में जापान ने चीन साम्राज्य को हरा कर फ़ारमोसा द्वीप ले लिया। चीन की यह कमज़ोरी देख युरोपीय राष्ट्र उसपर टूट पड़े और "चीनी तरबूज की फाँकें काटने" लगे। सन् १८६६ में चीन साम्राज्य का ८० फ़ी सदी प्रदेश उन्होंने अपने "प्रभावक्षेत्रों" में बाँट लिया। अंगरेज़ों ने सबसे बड़ी फाँक ली—याङ्चे नदी का समूचा काँठा ब्रिटिश प्रभावक्षेत्र माना गया। अपने देश की यह लाञ्छना देख कर चीन में एक दल खड़ा हुआ जिसने युरोपियनों को मार कर चीन से निकालना चाहा। ये अपने को 'घूँसेबाज' कहते थे। इन 'घूँसेबाजों' (बौक्सरों) से बदला चुकाने को सन् १६०० में ब्रिटेन, रूस और जर्मनी की सेनाएँ एक साथ चीन पर आ चढ़ीं। ब्रिटिश सेना भारत की ही थी। चीन को हराने और अनेक बर्बर कृत्य करने के बाद इन्होंने उसे एक अरब रुपया हरजाना देने और चीन के अनेक शहरों में

इन राष्ट्रों को सेना रखने को बाधित किया। हरजाने के बदले में कई बन्दरगाहों की आय गिरवी रक्खी गयी।

ईरान की खाड़ी पर सत्रहवीं शती से अँगरेज़ों ने एकाधिकार कर रक्खा था। सन् १८५३ में उन्हें उसे सब राष्ट्रों के जहाजों के लिए खोलना पड़ा था, तो भी वे वहाँ के तुर्क, अरब और ईरानी सरदारों के झगड़ों में एकमात्र मध्यस्थ होने का—अर्थात् उस खाड़ी के आधिपत्य का—दावा करते थे। सन् १८६८ में फ्रान्स ने ओमन के सुल्तान से मस्कत के ५ मील दक्खिन-पूरब बन्दर जिस्सा ले लिया। यह खबर पाते ही कर्ज़न ने कलकत्ते से बेड़ा भेजा और सुल्तान के महल पर गोलाबारी की धमकी दे कर फ्रान्सीसियों का ठेका रद्द करा दिया। सन् १६०० में रूस का वैसा ही प्रयत्न विफल हुआ। उसी वर्ष जर्मनी ने अपनी बर्लिन-बगदाद रेलवे योजना के लिए ईरान खाड़ी पर कोवैत के शेख से ज़मीन लेनी चाही, पर अँगरेज़ों ने लेने न दी।

हम देख चुके हैं कि दक्खिनी आफ्रिका की आशा अन्तरीप पर ओलन्देज़ लोगों का उपनिवेश "केप कालोनी" नैपोलियन के समय अँगरेजों ने छीन लिया था। वहाँ के ओलन्देज़ उपनिवेशकों ने, जो बोअर कहलाते हैं, तब उत्तर हट कर ओरांज और नाटाल उपनिवेश बसाये। अँगरेजों ने नाटाल भी ले लिया, तब वे वाल नदी के पार जा बसे। ओरांज और ट्रांसवाल पर भी अँगरेज़ों ने आधिपत्य कर लिया, पर भीतरी शासन में बोअरों को पूरी स्वतन्त्रता रही। सन् १८८५ में दक्खिनी ट्रान्सवाल में सोने की खानें निकल आयीं, तब अँगरेज़ बड़ी संख्या में वहाँ जा बसे। १८६५ ई० में उन अंगरेज़ों ने षड्यन्त्र कर ट्रान्सवाल पर कब्जा करना चाहा। बोअरों ने तब युद्ध ठाना और १८६६ ई० में नाटाल और केप कालोनी पर हमला कर अंगरेज़ों को खदेड़ने लगे। उस दशा में हिन्दुस्तानी फ़ौज वहाँ भेजी गयी, जिसने लेडीस्मिथ का क़िला बोअरों के हाथ न जाने दिया और नाटाल को बचाया। यह युद्ध सन् १६०१ तक चलता रहा। उसी बीच महारानी विक्टोरिया की मृत्यु हुई। अन्त में समूचे दक्खिनी आफ्रिका पर अंगरेज़ों का आधिपत्य हो गया।

———

अध्याय ९

हमारा ज़माना

(सन् १९०१—)

§१. **फ़ारिस-खाड़ी और तिब्बत में हस्तक्षेप**—साम्राज्य-साधना की जो नयी लहर सन् १८७५ में इँग्लैंड में उठी थी, सन् १९०५ तक उसका वेग बना रहा। सन् १९०३ में लार्ड कर्ज़न खुद फ़ारिस-खाड़ी में गया और वहाँ के मुख्य शहरों में अंगरेज़ 'व्यापार-दूत' स्थापित किये।

चीन के थोदे साम्राज्य का तिब्बत प्रान्त पर अधिकार ढीला-ढाला था। पच्छिमी तिब्बत में सोने की खानें हैं। सन् १९०३ में तिब्बत की चढ़ाई के लिए कर्ज़न ने कर्नल यंगहस्बैंड को भेजा। ब्रिटिश सेना तिब्बत के धनी मन्दिरों को लूटती हुई ३ अगस्त सन् १९०४ को ल्हासा जा पहुँची। दलाई लामा वहाँ से भाग गया था। उसके प्रतिनिधि से सन्धि की गयी। ग्याँचे में अंगरेज़ "व्यापार-दूत" और यातुङ और गारतोक में व्यापार-निरीक्षक रखना तय हुआ। तिब्बत ने अपनी विदेशी नीति अंगरेज़ों को सौंप दी।

§२. **कर्ज़न के अन्य कार्य; बंग-भंग**—पुरातत्त्व-विभाग की स्थापना और सहकार-समितियों का आयोजन लार्ड कर्ज़न के प्रशंसित कार्यों में से थे, अन्यथा "इस छोकरे से राजनीतिज्ञ" की याद उसके दमन के कार्यों और मूर्खतापूर्ण भाषणों से ही की जाती है। सन् १९०४ में उसने युनिवर्सिटी-क़ानून जारी किया और फिर बंगालियों की जागती हुई राष्ट्रीयता को दबाने के लिए अक्टूबर सन् १९०५ में बंगाल के दो टुकड़े कर दिये।

§३. स्वदेशी आन्दोलन—इसके जवाब में बंगाल में स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार और ब्रिटिश माल के बहिष्कार का आन्दोलन शुरू हुआ। इस बहिष्कार आन्दोलन के संचालक 'गरम दल' के कहलाते थे, और उनके मुक़ाबले में राष्ट्रीय कांग्रेस के सुधारवादी नेता 'नरम दल' के। तिलक, अरविन्द घोष, विपिनचन्द्र पाल, लाजपतराय आदि गरम दल के अगुआ थे।

गरम दल की सहानुभूति पूर्ण स्वाधीनता-आन्दोलन के साथ थी। हम देख चुके हैं कि सन् १८५७ की विफलता के बाद दयानन्द और बंकिमचन्द्र ने स्वतन्त्रता के आदर्श की फिर से घोषणा की थी। विवेकानन्द और तिलक ने उसे पुष्ट किया था। इन्हीं के शिष्यों और साथियों में अब उस आदर्श को क्रिया में परिणत करने की पहली चेष्टाएँ हुईं। युवकों में जो चिनगारियाँ ये फैला रहे थे, उन्हें कर्ज़न के कार्यों और विश्व की परिस्थिति ने सुलगा दिया।

सन् १९०४ में रूस और जापान का युद्ध हुआ, जिसमें जापान ने रूस को पछाड़ दिया। युरोप की विश्व-प्रभुता के विचार को इससे ज़ोर का धक्का लगा। सन् १८६६ तक जापान भी एशिया के दूसरे राष्ट्रों की तरह था। तब से उसने युरोप के विज्ञान, शिल्प तथा आर्थिक और राजनीतिक संगठन को अपनाना शुरू किया था। जापान की इस जीत से चीन, भारत, ईरान और तुर्की में भी बिजली की लहर सी दौड़ गयी।

दयानन्द के एक शिष्य श्यामजी कृष्ण वर्मा सन् १९०० में लन्दन जा बसे और प्रवासी भारतीय विद्यार्थियों में क्रान्ति के विचार फैलाने लगे थे। तभी बंगाल के युवकों में सखाराम गणेश देउस्कर और वारीन्द्रकुमार घोष उसी तरह के विचार डाल रहे थे। सन् १९०६ में वारीन्द्र ने विवेकानन्द के भाई उपेन्द्रनाथ दत्त से मिल कर 'युगान्तर' पत्र जारी किया। महाराष्ट्र में इसी समय 'अभिनव भारत समिति' और पूर्वी बंगाल में 'ढाका अनुशीलन समिति' की स्थापना हुई (सन् १९०६)। अगले दो बरस में ढाका समिति की ५०० शाखाएँ बंगाल और उत्तर भारत में खड़ी हो गयीं। पंजाब में सन् १९०७ के शुरू में लोग 'नयी हवा' का अनुभव करने लगे।

यह समूचा आन्दोलन आत्म-निर्भरता के विचार पर उठा था। "हमें पूर्ण स्वाधीनता चाहिए ... फिरंगी की कृपा से मिले अधिकारों पर हम थूकेंगे; हम अपनी मुक्ति स्वयम् पायेंगे।"

सन् १६०१-२ में दयानन्द के एक पंजाबी शिष्य महात्मा मुंशीराम ने हरद्वार में एक "गुरुकुल" की स्थापना की थी। अब उसमें उन्होंने आधुनिक विज्ञान की उच्चतम शिक्षा भी हिन्दी में दिलानी शुरू की। बंगाल में भी इस समय एक जातीय शिक्षा-परिषद् स्थापित हुई, जिसका कलकत्ते में स्थापित किया शिल्प-विद्यालय हमारे देश के सर्वोत्तम शिक्षणालयों में से है।

साहित्य, कला और विज्ञान के क्षेत्र में भी इस जागृति ने मौलिक कृतियों को उत्पन्न किया। सन् १६०३ में प्रफुल्लचन्द्र राय अपने एक वैज्ञानिक ग्रन्थ के कारण प्रसिद्ध हुए। उन्नीसवीं शती में भारतीय कलाकारों की प्रतिभा पाश्चात्य शैली के सामने पराभूत-सी थी। रविवर्मा नामक केरल चित्रकार ने पच्छिमी शैली में भारतीय कल्पनाओं को प्रकट करना चाहा, पर उनकी रचनाएं भद्दी हुई थीं। सन् १६०३-४ में अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक नयी चित्रण-शैली का विकास किया जो विदेशी शैलियों की अनेक बातें अपना लेने के बावजूद भी पूरी तरह भारतीय है। रविवर्मा के 'शिव' और अवनीन्द्र के शिष्य नन्दलाल वसु के 'शिव' की तुलना से उन्नीसवीं शती के पिछले अंश और सन् १६०५-८ की भारतीय मनोवृत्तियों का अन्तर मानो आँखों के सामने आ जाता है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर के बंगला गीतों में उसी नयी मनोवृत्ति की गूंज थी।

§४. आँग्ल-रूसी समझौता—उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में जर्मनी एक प्रबल राष्ट्र हो उठा था। उससे हार कर फ्रान्स ने सन् १८६३ में रूस से स्थायी मैत्री कर ली। बीसवीं शती के शुरू में जर्मन व्यवसायी दुनिया के बाज़ारों में अँगरेज़ों को पछाड़ने लगे और जर्मन राजनेता विश्व-साम्राज्य के सपने देखने लगे। तुर्कों के सम्राट् से मैत्री करके उन्होंने बर्लिन से बगदाद तक रेल-पथ बनाने की योजना की। इससे अँगरेज़ अत्यन्त आशंकित हो उठे और फ्रान्स और रूस से अपने पुराने बैर को भूल कर मैत्री की सन्धियाँ कर

लीं। इँग्लैंड फ्रान्स की मैत्री सन् १९०५ में और इँग्लैंड-रूस की १९०७ ई० में हुई। इन सन्धियों के अनुसार इँग्लैंड ने फ्रान्स के साथ स्याम का और रूस के साथ ईरान का बँटवारा कर लिया। उत्तरी ईरान रूस का और दक्खिनी अँगरेज़ों का प्रभाव-क्षेत्र निश्चित हुए। इस बँटवारे से "ईरान का गला घोंटना" शुरू हुआ।

§५. **मौर्ली-मिण्टो सुधार**—बंग-भंग के एक महीना बाद लार्ड कर्ज़न ने भारत से विदा ली; उसके उत्तराधिकारी मिण्टो को भारत में पहले राष्ट्रीय आन्दोलन से पाला पड़ा। जॉन मौर्ली उस समय भारत-सचिव था। मौर्ली और मिण्टो ने 'दाहने हाथ से दमन और बाएँ हाथ से शमन' का रास्ता पकड़ा।

मिण्टो ने अपने एक भाषण में सूचना दी कि भारतवासियों को कुछ स्वशासनाधिकार दिये जायँगे, और साथ ही सरकारपरस्त मुस्लिम रईसों को इशारा किया कि वे विशेष अधिकार माँगें। इशारा पाते ही सर आगाख़ाँ कुछ बड़े-बड़े मुसलमानों के साथ लार्ड मिण्टो के पास यह प्रार्थना ले कर पहुँचे (१-१०-१९०६ ई०) कि यदि देश के निर्वाचित प्रतिनिधियों को कुछ अधिकार देने हों तो मुसलमानों को अलग प्रतिनिधि चुनने दिया जाय। मिण्टो ने इससे सहमति प्रकट की और उसके इशारे पर "भारतीय मुसलमानों में ब्रिटिश सरकार के प्रति राजभक्ति के भाव बढ़ाने के लिए" मुस्लिम लीग की स्थापना की गयी। मई १९०७ ई० में पंजाब के लाजपतराय और अजीतसिंह को कैद कर ६ मास के लिए बरमा में निर्वासित किया गया। राष्ट्रीय आन्दोलन के उग्र होने पर नरम दल उसका साथ न दे सका। दिसम्बर सन् १९०७ में राष्ट्रीय कांग्रेस सूरत में हुई; वहाँ दोनों दलों में खुल्लमखुल्ला लड़ाई हो गयी। गोपाल कृष्ण गोखले के नेतृत्व में नरम दल का कांग्रेस पर कब्ज़ा रहा; गरम दल अलग हो गया।

इस बीच स्वदेशी और बहिष्कार आन्दोलन बंगाल, महाराष्ट्र और पंजाब से हिन्दी, आन्ध्र और तामिल प्रान्तों में भी फैल गया था। उस आन्दोलन के सिलसिले में कलकत्ते के एक मजिस्ट्रेट ने कई युवकों को बेतों की सज़ा दी। पीछे उसकी बदली मुज़फ़्फ़रपुर हो गयी। २० एप्रिल

१६०८ ई० को खुदीराम वसु नामी युवक ने मुज़फ्फ़रपुर में बम द्वारा उसकी हत्या की चेष्टा की। इस मामले में वारीन्द्रकुमार घोष और उनके कई साथी गिरफ़्तार हुए। तिलक ने इस पर लिखा, "सरकार की फ़ौजी शक्ति बमों से नहीं टूट सकती—पर बम से सरकार का ध्यान उस अन्धेरखाते की तरफ़ खींचा जा सकता है जो उसकी सैनिक शक्ति के मद के कारण उपस्थित है।" इस लेख पर तिलक को ६ साल की कैद मिली। तभी प्रेस ज़ब्त करने का कानून बना, जिससे 'युगान्तर' बन्द हुआ। बंगाल के नौ नेता निर्वासित किये गये, और ढाका समिति तथा अन्य कई समितियाँ ग़ैरक़ानूनी करार दी गयीं (नवम्बर-दिसम्बर १६०८ ई०)। तब से वे गुप्त काम करने लगीं।

बाल गंगाधर तिलक

सन् १६०६ ई० में अंगरेज़ी पार्लियामेण्ट में भारतीय शासन का नया क़ानून स्वीकृत हुआ। उसके अनुसार केन्द्रीय तथा प्रान्तीय व्यवस्था-समितियों की कुल सदस्य-संख्या १२४ से ३३१ को गयी, जिनमें निर्वाचित सदस्यों की संख्या ३६ से १३५ हो गयी। केन्द्रीय समिति के सदस्य २१ से ६० हुए। ज़मींदारों, व्यापारियों आदि को विशेष अतिरिक्त प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया, जो स्वाधीन शासन के इस बुनियादी सिद्धान्त के विरुद्ध था कि राष्ट्र की प्रत्येक प्रजा परस्पर समान है। मुसलमानों के प्रतिनिधि अलग चुनने की तजवीज़ की गयी। व्यवस्था-सभाएँ मुख्यतः राष्ट्र के आर्थिक और राजनीतिक जीवन को नियमित करती हैं। इस कार्य को विभिन्न साम्प्रदायिक विश्वासों के अनुसार चुने हुए लोगों के हाथ में सौंपने का यह अर्थ था कि मज़हबी विश्वासों के अन्तर को जनता के समूचे जीवन में फैलाया जाय, जिससे भारतीय जनता में एक ऐसी पक्की दराड़ पड़ जाय जो उसे एक राष्ट्र बनने से हमेशा रोकती रहे। सदस्यों को प्रस्ताव

रखने, प्रश्न पूछने और बजट पर विचार प्रकट करने मात्र का अधिकार (वोट देने का नहीं) दिया गया। केन्द्रीय और प्रान्तीय शासन-समितियों में एक-एक दो-दो भारतीय सदस्य रखना भी तय हुआ। उस समय लार्ड रिपन जैसे अँगरेज़ राजनेताओं को भी सन्देह था कि शासन-समितियों में भारतीयों को लेने से काम कैसे चलेगा। धीरे-धीरे उन्होंने देख लिया कि हिन्दुस्तानी सिपाहियों की तरह हिन्दुस्तानी शासन-सदस्यों से भी अँगरेज़ अपना काम मज़े में निकाल सकते हैं।

इस शासन-नीति का असर क्रान्ति आन्दोलन पर नहीं पड़ा। सन् १६०६ के अन्त में पंजाब में धर-पकड़ हुई। अजीतसिंह तब अपने साथी सूफ़ी अम्बाप्रसाद और शुजाउलहक़ के साथ ईरान भाग गये। वहाँ उन्होंने ईरान पर आती हुई ब्रिटिश और रूसी प्रभुता के खिलाफ़ ईरानियों को जगाने की कोशिश की। दिल्ली के एक युवक हरदयाल भी, जो इंग्लैंड में श्यामजी-कृष्ण वर्मा से दीक्षा पा कर पंजाब लौटे थे, विदेश भागे, और मिस्र पहुँच कर वहाँ के युवकों में स्वाधीनता के विचार फैलाने लगे।

सन् १६१०-११ में बंगाल के अतिरिक्त नासिक, सतारा, ग्वालियर और तिरुनेवली (तिनेवली) में क्रान्तिकारी षड्यन्त्र के मुक़दमे चले। इससे महाराष्ट्र और तामिलनाड के क्रान्ति-आन्दोलन ठंडे पड़ गये और कलकत्ते के चौगिर्द भी शान्ति हो गयी, पर पूरबी बंगाल की स्थिति में कोई फ़रक नहीं पड़ा। हरदयाल मिस्र से युरोप पहुँचे, और वहाँ से अमेरिका-प्रवासी पंजाबियों में क्रान्ति के बीज बोने को रवाना हुए।

इस बीच मई १६१० ई० में सम्राट् एडवर्ड (७म) की मृत्यु हो गयी और नवम्बर १६१० ई० में लार्ड मिण्टो की जगह लार्ड हार्डिञ्ज आ गये थे। साहित्यिक जागृति का सिलसिला जारी रहा; सन् १६१० में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई।

§६. बंग-भंग का रद्द होना, दक्खिनी आफ्रिका का सत्याग्रह, कोमागातामारू—सन् १६११ के अन्त में सम्राट् ज्यार्ज (५म) भारत आये और दिल्ली में अभिषेक दरबार में बंग-भंग को रद्द करने की घोषणा

की। आसाम और बिहार-उड़ीसा के प्रान्त बंगाल से अलग किये गये, तथा भारत की राजधानी कलकत्ते से दिल्ली बदली गयी।

सन् १६११-१२ ई० में पूरबी बंगाल को छोड़ कर भारत के सब प्रान्तों में ऊपरी शान्ति बनी रही; लेकिन भारत के मुसलमानों में कुछ क्षोभ दिखायी दिया। उत्तरी आफ्रिका में तुर्क साम्राज्य का त्रिपोली (लीबिया) प्रान्त १६११ ई० में इटली ने धर दबाया। १६१२ ई० में तीन बाल्कन राष्ट्रों ने मिल कर तुर्क साम्राज्य के युरोप वाले अंश को छीन लिया। भारत के मुसलमान इससे क्षुब्ध हुए और कुछ लोग घायल तुर्कों की उपचार-शुश्रूषा के लिए तुर्की गये।

२३ दिसम्बर १६१२ ई० को लार्ड हार्डिञ्ज ने शाही जुलूस के साथ दिल्ली में प्रवेश किया। चाँदनी चौक में उनकी गाड़ी पर एक बम फेंका गया जिससे वे बाल-बाल बचे। क्रान्तिकारी दल ने मानो यह सूचना दी कि बंग-भंग के रद्द होने से वह शान्त नहीं हो गया। इस घटना से दिल्ली षड्यन्त्र का मामला चला, जिसमें पूरबी बंगाल और उत्तर भारत के दलों का परस्पर सम्बन्ध प्रकट हुआ। रासबिहारी बसु नामक एक अभियुक्त पकड़ा नहीं गया।

दक्खिनी आफ्रिका में जो शर्तबन्द भारतीय कुली जाते थे, उनमें से बहुत से शर्त छूटने के बाद वहीं रह जाते थे। दुकानदारी और अन्य धन्धों से भी वहाँ बहुत से हिन्दुस्तानी गये हुए थे। दक्खिनी आफ्रिका के युरोपियनों को उनका स्वतन्त्र हो कर वहाँ रहना या बसना अखरता था। उन्होंने कई कानून बना कर ख़ास इलाक़ों में हिन्दुस्तानियों को व्यापार करने, ज़मीन लेने या घुसने तक से रोक दिया। इस पर सन् १६१३ में मोहनदास करमचन्द गान्धी के नेतृत्व में वहाँ के हिन्दुस्तानियों ने सत्याग्रह किया; २,५०० आदमी ट्रान्सवाल से नाटाल में घुसे; उनके नेता गिरफ़्तार किये गये; जगह-जगह हड़तालें हुईं। अन्त में वहाँ की सरकार की ओर से जनरल स्मट्स ने गान्धीजी से समझौता किया और क़ानून में कुछ रद्दोबदल किया।

अँगरेज़ों की फ़ौज या पुलिस की नौकरी में बहुत से पंजाबी, ख़ास कर सिक्ख, बरमा, मलाया और चीन जाते थे। इनके बहुत से साथी-संगी दूसरे

धन्धों के लिए भी इन प्रदेशों में जाने और बसने लगे थे। पच्छिमी अमेरिका में तब नयी ज़मीनें आबाद हो रही थीं। मेहनती पंजाबी मलाया और चीन से वहाँ पहुँचने लगे। वहाँ वे खेती की मजूरी से फ़ी आदमी पाँच-सात रुपया रोज़ाना कमा लेते थे। सन् १६११ में हरदयाल कैलिफ़ोर्निया पहुँच कर इन्हीं लोगों में क्रान्ति के विचार फैलाने लगे। सान फ्रान्सिस्को में इन लोगों ने एक 'ग़दर दल' स्थापित किया।

कनाडा की सरकार ने ऐसा कानून बनाया जिससे भारतीय मजदूरों का वहाँ जाना प्रायः असम्भव हो जाय। ब्रिटिश साम्राज्य में भारतवासियों की कैसी दुर्गति है, यह दिखलाने के लिए गुरुदत्तसिंह नामक एक पंजाबी ने एक जापानी जहाज़ कोमागातामारू किराये पर लिया, और हाङ्काङ से पंजाबी श्रमजीवियों को उसमें ले कर वंकोवर पहुँचे (२३ मई १६१४ ई०)। २ मास तक वह जहाज़ वंकोवर के बन्दर पर खड़ा रहा, पर कनाडा सरकार ने भारतीय श्रमिकों को अपनी ज़मीन पर पैर नहीं रखने दिया, और अन्त में एक जंगी जहाज़ गोलाबारी के लिए भेज कर लौटने को बाधित किया।

§७. तिब्बत पर आधिपत्य—सन् १६१२ में चीन में क्रान्ति हुई और साम्राज्य के स्थान में प्रजातन्त्र स्थापित हुआ। इससे पहले कि यह नया प्रजातन्त्र समूचे चीन-साम्राज्य पर अधिकार जमा सके, रूसियों और अँगरेज़ों ने उसके टुकड़े काट लिये। मंगोलिया का रूस की तरफ़ का बड़ा भाग चीन से अलग हो गया और "बाहरी मंगोलिया" कहलाया। भारत से अँगरेज़ी सरकार ने तिब्बत और आसाम की सीमा की अबोर जाति के इलाके पर चढ़ायी कर उसे ले लिया, तथा सन् १६१३-१४ में तिब्बत के मुख्य भाग को अपना रक्षित बना लिया। तब से तिब्बत में भारत की डाक-तार भारत की ही दरों पर चलती है।

चीन की जागृति का एक और परिणाम यह हुआ कि सन् १६१३ से भारत से चीन को अफ़ीम जाना बिलकुल बन्द हो गया।

§८. विश्वव्यापी युद्ध—सन् १६१४ में रूस, फ्रान्स और ब्रिटेन का, जो अपने को "मित्र राष्ट्र" कहते थे, जर्मनी से युद्ध ठन गया। जर्मन

सेना फ्रान्सीसी सेना को ढकेलती हुई अगस्त के अन्त तक पैरिस के ६० मील तक जा पहुँची, लेकिन वहाँ फ्रान्सीसी डट गये और जर्मन भी वहीं खन्दकें खोद कर पड़ गये। आफ्रिका के जर्मन उपनिवेशों पर अँगरेज़ों ने चढ़ाइयाँ की, जिनमें भारतीय सेना से काम लिया गया।

युद्ध शुरू होते ही ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने निश्चय किया कि भारतीय सेना से इस युद्ध में पूरा काम लिया जाय और उसका पूरा खर्च भी भारत ही उठाय। इसके अनुसार युद्ध के शुरू के महीनों में दो लाख से ऊपर भारतीय सेना बाहर भेजी गयी।

पेरिस की ओर विफल हो कर जर्मन अक्टूबर-नवम्बर में इंग्लिश चैनल की ओर बढ़े। तट से २० मील तक वे पहुँच गये, पर तट को न पा सके। वहाँ उनकी बाढ़ जिस फ़ौज ने रोकी, उसकी हरावल सिक्खों की थी। जैसा कि बाद में एक जर्मन विद्वान् ने लिखा, "फ्रान्स की खन्दकों में जो बालू के बोरे थे, वे भारतीय जूट (पाट) के थे, उनके पीछे से जो सिपाही गोलियाँ दागते थे, वे भारतीय थे।"

२६ अक्टूबर को तुर्की जर्मनी के पक्ष में मिल गया। भारतीय मुसलमान भी इससे भड़क न उठें, ऐसा खटका हुआ, पर अँगरेज़ों ने निज़ाम और आगाखाँ से घोषणाएँ निकलवा कर तथा अबुलकलाम आज़ाद, शौकतअली, मुहम्मदअली जैसे उग्रपन्थियों को नज़रबन्द कर उन्हें शीघ्र शान्त कर दिया, और पीछे तो भारतीय मुस्लिम सेना को ख़ास तुर्कों के साथ भी भिड़ाते रहे। अरब इराक, फ़िलिस्तीन और सीरिया तब तक तुर्क साम्राज्य में थे, और मिस्र पर भी तुर्कों का नाम का आधिपत्य था। भारत से तुरन्त एक फ़ौज इराक (मेसोपोतामिया) को और एक मिस्र को भेजी गयी। पहली फौज ने २१ नवम्बर को बसरा ले लिया। दक्खिनी ईरान में भारतीय फ़ौज बढ़ायी गयी, और कोइटा-नुश्की रेल-पथ को ठीक ईरान की सीमा पर दुज़्दाप तक पहुँचाने की योजना की गयी। भारत में फ़ौज की भरती ज़ोरों से बढ़ायी गयी।

फ़रवरी सन् १९१५ में तुर्कों ने स्वेज पर चढ़ायी की। वह विफल हुई, उलटा एप्रिल में मित्र-सेना दरे-दानियाल में घुसी। गालीपोली पर तुर्कों ने इस फ़ौज को रोके रक्खा।

बसरा वाली भारतीय सेना बगदाद के २५ मील तक जा पहुँची। वहाँ से तुर्कों ने उसे पीछे ढकेला और कुत पर आ कर चारों तरफ़ से घेर लिया। जनवरी सन् १९१६ में गालीपोली से ब्रिटिश सेना को हटना पड़ा और एप्रिल में कुत में घिरी फ़ौज ने भी समर्पण कर दिया।

सन् १९१७ में कई बड़ी घटनाएँ हुई। ब्रिटिश भारतीय सेना ने कुत को वापिस ले कर बग़दाद भी जीत लिया। यो सारा इराक तुर्क साम्राज्य से छिन गया। तभी रूस की प्रजा और सेना के भीतर क्रान्ति का उबाल आ रहा था। १५ मार्च को ज़ार (रूस-सम्राट्) ने गद्दी छोड़ दी और रूसी नरम दल के नेता करेन्स्की ने प्रजातन्त्र स्थापित किया। लेकिन रूसी किसानों-मज़दूरों और सैनिकों का गरम दल (बोल्शेविकी) इससे सन्तुष्ट न हुआ, और लेनिन के नेतृत्व में ७ नवम्बर की क्रान्ति में उन्होंने सदियों की गुलामी से मुक्ति पायी। १५ दिसम्बर को उन्होंने जर्मनों से सन्धि कर ली। अमेरिका ने मित्र राष्ट्रों को युद्ध-खर्च के लिए बड़ा कर्ज़ दिया था। उनके हारने से वह रक़म डूब जाती; इसलिए एप्रिल १९१७ ई० में अमेरिका भी उनकी तरफ़ से युद्ध में शामिल हुआ। लारेन्स नामक एक अँगरेज़ कर्नल अरब जातियों के अन्दर तुर्कों के खिलाफ़ षड्यन्त्र कर रहा था। उसने अरबों को तुर्कों से भिड़ा दिया, और अरबों के संरक्षक बन कर अँगरेज़ों ने नवम्बर-दिसम्बर १९१७ ई० में फ़िलिस्तीन ले लिया।

रूसी साम्राज्य के टूटने पर मार्च १९१८ में जर्मन काले सागर और कोह काफ़ पर आ पहुँचे, और तुर्क ईरान में घुस कर भारत की ओर बढ़ने लगे। इस दशा में भारत में सेना की भरती और तेज़ी से बढ़ायी गयी। इसमें काफ़ी ज़ोर-ज़बरदस्ती से काम लिया गया। दुज़्दाप तक रेल-पथ तैयार हो चुका था। भारतीय सेना ईरान को रौंदती हुई जर्मनों-तुर्कों के मुकाबले को बढ़ी। कुछ समय के लिए उसने बाकू भी ले लिया।

सन् १९१८ में लाखों की संख्या में ताज़ी अमेरिकन सेना के फ्रान्स में आने से जर्मन पक्ष दबने लगा। तभी फ्रान्स ने तुर्कों का सीरिया प्रान्त जीत

लिया। ३० अक्टूबर को तुर्की ने शस्त्रन्यास किया, तब ११ नवम्बर को जर्मनों ने भी शस्त्रन्यास कर दिया।

भारत से कुल १३ लाख आदमी, जिनमें ८ लाख योद्धा थे, इस युद्ध के विभिन्न मोर्चों पर गये। किन्तु इनका काम सिर्फ़ सैनिक मज़दूरों का था। अफसरों की माँग आने पर भारत में कई फौजी विद्यालय खोले गये और उनमें कलकत्ता-बम्बई के गोरे व्यापारियों के लड़कों को सिखा कर २३ हजार अफ़सर तैयार किये गये। भारत से युद्ध में भेजे गये ढोर डंगर और सामान की कोई हद न थी। आर्थिक कुर्बानी जो भारत को करनी पड़ी उसकी चर्चा आगे की जायगी।

१९. विप्लव की चेष्टाएँ—युरोप में युद्ध छिड़ते ही अमेरिका के भारतीय गदर दल ने अपने सदस्यों को भारत भेजना प्रारम्भ किया। सब से पहले आने वालों में एक युवक कर्त्तारसिंह था, जिसने अमेरिका में वायुयान-इंजिनियरिंग सीखा था। सरकार ने इन आगन्तुकों की नजरबन्दी के लिए भारत-प्रवेश-फरमान निकाला।

हरदयाल (१८८४-१९३९ ई०)

सितम्बर में ही हरदयाल इस्ताम्बूल पहुँचे और ग़दर-दल का तरुण तुर्क दल से सम्बन्ध जोड़ा। यह तरुण तुर्क दल सन् १९०५ के करीब पैदा हुआ था, और तुर्कों को मजहब की पुरानी शृंखलाओं से छुड़ा कर राष्ट्रीयता के आधार पर विज्ञान की मदद से एक शक्तिशाली राष्ट्र बनाना चाहता था। भारत से जो मुस्लिम युवक सन् १९११-१२ में तुर्की गये

थे, वे भी इन तरुण तुर्कों के आदर्शों से प्रभावित हुए थे। तुर्की से हरदयाल जर्मनी गये, जहाँ अब जर्मन युद्ध-विभाग की देख-रेख में एक "भारतीय राष्ट्रीय दल" काम करने लगा। हरदयाल, तारकनाथ दास, चम्पकरामन पिल्लै, बरकतुल्ला आदि इसके प्रमुख कार्यकर्त्ता थे।

अमेरिका से डेढ़-दो हज़ार ग़दर-दल वाले सितम्बर-अक्टूबर में भारत आये। रास्ते में चीन और मलाया की पंजाबी फ़ौजों में ग़दर के विचार फैलाते हुए इनमें से जो बच कर पंजाब पहुँच जाते, वे भारत की छावनियों में वही काम करते। इनका एक केन्द्र स्याम में था। स्याम की उत्तरी सीमा पर तब जर्मन इंजिनियर एक रेल-पथ बनवा रहे थे, जिसमें पंजाबी मज़दूर काम करते थे। उस रेल-पथ से बरमा पर चढ़ायी करने की योजना थी।

ग़दर दल की ओर से कर्त्तारसिंह और विष्णु गणेश पिंगले, रासविहारी वसु का पता निकाल कर बनारस पहुँचे। वहीं बंगाल के क्रान्तिकारी नेता भी आये और कार्यक्रम निश्चित हुआ। तभी अली अहमद सिद्दीकी और हकीम फ़ायम अली, जिन्हें तरुण तुर्कों से प्रेरणा मिली थी, रंगून पहुँचे, और ग़दर-दल से मिल कर काम करने लगे।

इसके बाद बन्नू-पेशावर से सिंगापुर तक तमाम फ़ौजों में क्रान्तिकारी कारिन्दे पहुँच गये, और सब फ़ौजों की भीतरी हालत उन्होंने जान ली। भारत में उस समय गोरी फ़ौज कुल १५ हज़ार थी। रंगून और सिंगापुर की पल्टनों में सरकार को कुछ गड़बड़ दीख पड़ी। रंगून की बलोची पल्टन में से २०० आदमी क़ैद किये गये और सिंगापुर की पंजाबी पल्टन की बदली कर दी गयी।

फ़ीरोजपुर और रावलपिंडी में भारत के सबसे बड़े शस्त्रागार हैं। २१ फरवरी को उनपर और लाहौर के शस्त्रागार पर देसी पल्टनें हमला करतीं, और उसके बाद जहाँ-तहाँ देसी फ़ौज बलवा कर उठती। फरवरी में ही पंजाब पुलिस को इस मामले की भनक मिली। १६ फरवरी को शस्त्रागारों पर गोरी फ़ौज का पहरा लगा दिया गया, और लाहौर-अमृतसर में क्रान्तिकारी अड्डों पर पुलिस ने छापे मारे। उन छापों में हथियारों के अलावा तिरंगे राष्ट्रीय झण्डे और ऐलाने-जंग भी पकड़े गये। इससे देसी फौज की

हिम्मत टूट गयी। लेकिन २१ फ़रवरी को सिंगापुर की फ़ौज ने बलवा करके टापू पर अधिकार कर ही लिया। अँगरेज़ी जंगी जहाज़ों ने आ कर सात दिन बाद टापू को वापिस लिया। पंजाब में ज़ोरों की धर-पकड़ हुई, और "भारत रक्षा क़ानून" जारी किया गया। क्रान्तिकारियों ने यह सोचा कि उनके अपने दल के पास शस्त्र काफ़ी होते तो वे स्वयम् शस्त्रागारों पर पहला हमला कर देते। इसलिए उन्होंने कोशिशें जारी रक्खीं। कर्त्तारसिंह और पिंगले छावनियों के बीच पकड़े गये। सरकार ने इसके बाद इंग्लैंड से बहुत सी नयी गोरी फ़ौज भारत मँगा ली। आगे से भारतीय फ़ौज बाहर भेजी जाती और गोरी फ़ौज भारत में ही रक्खी जाती।

अमेरिका से गदर-दल के नेता रामचन्द्र ने ३० हज़ार राइफ़लों और जर्मन अफ़सरों के साथ एक जर्मन जहाज़ को जावा भेजने का प्रबन्ध किया था। वह जहाज़ १ जुलाई को सुन्दरबन में पहुँचता। बंगाली क्रान्तिकारी बालेश्वर और चक्रधरपुर पर बंगाल-नागपुर रेलवे के तथा देवघर के पास अजय नदी पर ईस्ट इंडियन रेलवे के पुलों को उड़ा कर बरसात में बंगाल पर कब्ज़ा कर लेते और जर्मन अफ़सर उन्हें सामरिक शिक्षा देने लगते। पर वे शस्त्र अमेरिकन सरकार ने पकड़ लिये। पीछे अँगरेज़ों को इस भेद का पता मिलने पर कलकत्ता दल का नेता यतीन मुखर्जी और उसके साथी बालेश्वर के पास एक जंगल में खन्दकों में लड़ते हुए मारे गये (९ सितम्बर)। यतीन का साथी नरेन्द्र भट्टाचार्य तथा रासबिहारी वसु भारत से निकल गये। इन्होंने शांघाई और जावा के जर्मन कौंसलों और चीनी क्रान्तिकारियों के सहयोग से फिर शस्त्र भेजने की चेष्टाएँ कीं, पर वे भी विफल हुईं। दिसम्बर १९१५ के बाद फिर कोई कोशिश नहीं हुई। सन् १९१५ से १७ ई० तक इन कोशिशों के फलस्वरूप अनेक मुकदमे हुए। पंजाब और बंगाल में सैकड़ों आदमियों को फाँसी और कालापानी मिला और कई हज़ार नज़रबन्द किये गये। इसके बाद पूरबी बंगाल के सिवाय भारत के सब प्रान्तों में शान्ति बनी रही।

सन् १९१५ में एक जर्मन-तुर्की-हिन्दी प्रतिनिधि-मंडल काबुल भी पहुँचा। महेन्द्रप्रताप और बरकतुल्ला इसमें शामिल थे। इन्होंने अफ़गानों को उकसाने की कोशिश की।

§१०. **भारत में युद्धकालीन परिवर्तन**—महायुद्ध के समय भारत का सामरिक ख़र्च २ से ३ करोड़ पौंड वार्षिक होता रहा। उस समय भारत-सरकार की कुल मालगुज़ारी वार्षिक १० करोड़ पौंड से कम थी। दिसम्बर १९१५ ई० में भारत में पहला युद्ध-ऋण उठाया गया। उसके बाद तो कई युद्ध-ऋण लिये गये।

प्रत्येक सरकार जो कागज़ी मुद्रा या दूसरी सांकेतिक मुद्रा चलाती है, उसकी खातिर सोने का एक रक्षित भंडार रखती है। भारत में टकसालें बन्द होने पर भारत का एक 'स्वर्ण मान भंडार' तथा एक 'कागज़ मुद्रा भंडार' लन्दन में रक्खा गया था। युद्ध के समय इन भंडारों में से १३ करोड़ पौंड ब्रिटिश सरकार को उधार दे दिये गये।

मार्च १९१७ ई० में भारत-सरकार ने ब्रिटेन को युद्ध की खातिर १० करोड़ पौंड "दान" दे दिया। सितम्बर १९१८ ई० में ४½ करोड़ पौंड का और "दान" देना तय हुआ, पर युद्ध समाप्त हो जाने से यह समूची रक़म दी न गयी। ये रक़में भारत में ही कर्ज़ों द्वारा उठायी गयीं। कर्ज़ उठाने में काफ़ी जोर-ज़बरदस्ती की जाती रही। उन कर्ज़ों से अमीरों ने तो सूद पैदा किया, और ग़रीब जनता पर ३० बरस के लिए १० करोड़ वार्षिक सूद का बोझ बढ़ गया।

ख़र्च की दिक्कत के कारण सन् १९१७ ई० में सरकार को विलायती कपड़े पर भी ७½ फ़ी सदी चुंगी लगानी पड़ी। वैसे भी युद्ध के कारण भारत के व्यवसायों को कुछ बढ़ावा मिला। यों तो भारत ने सब तरह की रसद-सामग्री इंग्लैंड की मदद को भेजी, पर यहाँ लोहे की कीलें, पेंच, कमानियाँ, तार के रस्से जैसी साधारण चीज़ें भी तैयार न हो सकती थीं। अंगरेज़ शासकों ने अनुभव किया कि भारत में व्यवसायों को न पनपने देने की उनकी पुरानी नीति युद्ध जैसे समय में घातक हो सकती है, और तब से उन्होंने भारतीय पूँजीपतियों को अपने साथ लेने की नीति पकड़ी।

क्रान्तिकारियों की सब कोशिशें बेकार हुईं, पर उनके बलिदानों से देश में एक पीड़ा की कराह उठी जिससे दूसरे लोग भी कुछ करने को बेचैन होने

लगे। एप्रिल १६१६ ई० में तिलक ने पूना में 'होमरूल लीग' की स्थापना की। दिसम्बर १६१६ ई० में कॉंग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में नरम और गरम दल में मेल हो गया, और मुस्लिम लीग ने भी उनके साथ मिल कर शासन-सुधारों की एक नयी माँग तैयार की। इस योजना में साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व को मान लिया गया।

महात्मा गान्धी सन् १६१५ के शुरू में भारत चले आये थे। लखनऊ कांग्रेस से उन्हें बिहार के लोग चम्पारन के निलहे गोरों के जुल्मों की जाँच करने ले गये। चम्पारन पहुँचने पर उन्हें ज़िले में न घुसने का हुक्म मिला, जिसपर उन्होंने सत्याग्रह किया। वह हुक्म लौटा लिया गया, जाँच हुई, और निलहों ने विलायत का रास्ता लिया।

प्रतिज्ञाबद्ध कुली प्रथा को उठाने के लिए गान्धीजी सन् १८६४ से ही आन्दोलन कर रहे थे। दक्खिन आफ्रिका सत्याग्रह की सफलता के बाद उस आन्दोलन ने ज़ोर पकड़ा। गान्धीजी ने अपने मित्रों को फ़िजी भेज कर हालात की जाँच करायी। उसके बाद उन्होंने घोषणा की कि यदि वह प्रथा न उठायी जायगी तो वे सत्याग्रह शुरू करेंगे। तब लार्ड हार्डिञ्ज के उत्तराधिकारी लार्ड चेम्सफ़ोर्ड ने इस प्रथा को बन्द किया।

सन् १६१८ में खेड़ा और अहमदाबाद के किसानों और मजदूरों के कष्टों को दूर करने के लिए भी गान्धीजी ने सत्याग्रह का प्रयोग किया। भारतवासियों ने तब यह देखा कि निहत्थे होने पर भी उनके पास आत्म-सम्मान की रक्षा का एक साधन है। उसी वर्ष गान्धीजी इन्दौर में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति हुए। हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा होगी, यह विचार दयानन्द का था, और इसे तिलक ने पुष्ट किया था; किन्तु द्राविडभाषी प्रान्तों में भी हिन्दी का प्रचार कभी हो सकेगा, यह बात सन्दिग्ध थी। गान्धीजी ने इन्दौर में "दक्खिन भारत हिन्दी प्रचार" की नींव डाल दी।

§११. मौण्टेगू-चेम्सफ़ोर्ड सुधार और राउलट क़ानून—सन् १६१५ की विद्रोह-चेष्टा दबाने के साथ ही भारत के शासकों ने समझ

लिया कि और शासन-सुधार देने होंगे, और उन सुधारों की रूपरेखा मार्च १६१६ ई० में बना ली। २० अगस्त १६१७ ई० को भारत-मन्त्री मौण्टेगू ने घोषणा की कि भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत उत्तरदायी शासन धीरे-धीरे स्थापित करना ब्रिटिश सरकार का लक्ष्य है। उस जाड़े में मॉंटेगू भारत आये और लार्ड चेम्सफ़ोर्ड के साथ देश में घूमे। तभी श्री राउलट की अध्यक्षता में एक कमिटी क्रान्तिकारियों को दबाने के उपाय सुझाने को बैठायी गयी। सन् १६१८ में राउलट कमिटी की रिपोर्ट, तथा मॉंटेगू-चेम्सफ़ोर्ड सुधार-योजना प्रकाशित हुई। राउलट कमिटी की सलाहों का सार यह था कि भारत-रक्षा क़ानून द्वारा युद्ध-काल में सरकार ने जो विशेष अधिकार ले लिये थे, वे स्थायी कर दिये जायँ।

सन् १६१६ के शुरू में भारत सरकार ने केन्द्रीय व्यवस्था समिति में इसके अनुसार दो क़ानूनों के मसविदे पेश किये। इसपर महात्मा गान्धी ने उन क़ानूनों के शान्तिमय उल्लंघन की घोषणा की। ६ एप्रिल को समूचे देश में लोगों से उपवास, हड़ताल और प्रतिवाद करने को कहा गया। उस दिन देश भर में प्रदर्शन हुआ। गान्धीजी बम्बई से दिल्ली-पंजाब के लिए रवाना हुए, पर ८ एप्रिल को उन्हें पलवल में गिरफ़्तार कर बम्बई वापिस भेज दिया गया। उनकी गिरफ़्तारी की खबर से अहमदाबाद, वीरमगाम और नडियाद में दंगे हो गये। गान्धीजी ने अहमदाबाद जा कर स्थिति शान्त की और सत्याग्रह स्थगित कर दिया। १० एप्रिल को अमृतसर में आन्दोलन के नेता गिरफ़्तार हुए। जनता ने इसपर प्रदर्शन किया, कुछ सरकारी इमारतें जला दीं और ५ अँगरेज़ों को मार डाला। १२ और १४ एप्रिल को कसूर और गुजरांवाला में भी वैसी ही घटनाएँ हुईं। असल बात यह थी कि महायुद्ध के समय पंजाब में भरती कराने और युद्ध-ऋण उठाने में जो ज़्यादतियाँ की गयी थीं, उनसे जनता बेहद चिढ़ी हुई थी, और मौक़ा पाते ही उसका गुस्सा उबल पड़ा।

पंजाब में सौर तिथि का चलन है, और नया वर्ष वैशाख-संक्रान्ति (१३ एप्रिल) को शुरू होता है। उस उत्सव के दिन अमृतसर की घनी बस्ती के

बीच जलियाँवाला बाग़ नामक तंग मैदान में सन्ध्या को एक सभा हो रही थी। जनरल डायर ने सौ देसी सिपाहियों और ५० गोरों के साथ उस बाग़ के एकमात्र दरवाज़े को रोक लिया और निहत्थी भीड़ पर गोलियों की बौछार शुरू कर दी, जिससे ४०० आदमी मरे और डेढ़ हज़ार घायल हुए। फिर घायलों को वहीं कराहता छोड़ कर वह चला गया।

१५ एप्रिल से पंजाब में फ़ौजी राज घोषित किया गया, जो ११ जून तक जारी रहा। इस बीच जनता से सब वाहन छीन लिये गये और दो से अधिक आदमियों के इकट्ठा चलने की मनाही कर दी गयी। अमृतसर की एक गली में लोगों को पेट के बल रेंगाया गया। हज़ार के करीब आदमियों पर फ़ौजी अदालतों में मुक़दमे चले, फाँसी और कालापानी की सज़ाएँ खुले हाथों दी गयीं। खुली टिकटिकियाँ लगा कर लोगों को उनपर नंगा बाँध कर बेंत लगाये गये। गाँवों और खेतों पर हवाई जहाज़ों से बम बरसाये गये। रेलगाड़ियाँ जनता के लिए शुरू में ही रोक दी गयी थीं। बाहर से कोई आदमी पंजाब न जा सकता था, और न पंजाब की खबर बाहर जा पाती थी।

पंजाब की गाड़ियाँ खुलते ही कांग्रेस की ओर से एक कमिटी जाँच के लिए वहाँ गयी। यह जाँच अभी जारी थी कि मौंटेगू-चेम्सफ़ोर्ड योजना क़ानून बन गयी। उसका सार यह था कि केन्द्रीय और प्रान्तीय व्यवस्था-सभाओं में निर्वाचित बहुमत होगा; केन्द्रीय सभा सब क़ानूनों के मसविदों पर तथा लगभग १३१ करोड़ रुपये के वार्षिक बजट में से १६ करोड़ पर सम्मति दे सकेगी, पर उस सम्मति को मानना या न मानना गवर्नर-जनरल की इच्छा पर निर्भर होगा। प्रान्तीय सभाओं का शिक्षा, आबकारी आदि विषयों पर नियन्त्रण होगा; वे विषय 'हस्तान्तरित' कहलायेंगे; उन्हें चलाने वाले मन्त्री उन सभाओं के बहुपक्ष के प्रति ज़िम्मेदार होंगे। बाकी विषय, जैसे अमनचैन की रक्षा आदि, 'रक्षित' होंगे; उनके लिए गवर्नरों की शासन-समितियों में दो सदस्य होंगे, जिनमें से एक हिन्दुस्तानी होगा। साम्प्रदायिक निर्वाचन की प्रथा जारी रहेगी।

दिसम्बर १९१९ ई० में अमृतसर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। उससे ठीक पहले यह क़ानून तैयार हुआ। तभी युद्ध के समय के सब नज़र-बन्द तथा अधिकांश क्रान्तिकारी कैदी भी छोड़ दिये गये।

§१२. **अफ़गानिस्तान का स्वतन्त्र होना**—महेन्द्रप्रताप और बरकतुल्ला ने तरुण अफ़गानों में स्वतन्त्र होने की उत्कट भावना जगा दी थी। २० फ़रवरी सन् १९१९ को अमीर हबीबुल्ला, जो अँगरेज़ों का मित्र था, मारा गया। कुछ दिन उसके भाई नसरुल्ला के अमीर रहने के बाद हबीबुल्ला का बेटा अमानुल्ला गद्दी पर बैठा।

भारत में अशान्ति देख कर अमानुल्ला ने सोचा कि यह स्वाधीन होने का अच्छा मौका है, और ३ मई को खैबर पर हमला कर दिया। वज़ीरिस्तान के पठानों ने भी विद्रोह किया। अँगरेज़ों ने जलालाबाद और काबुल पर हवाई जहाज़ों से बम गिराये तथा खैबर और चमन की तरफ़ से अफ़गान इलाके में घुसना शुरू किया। २८ मई को अमीर ने सन्धि की प्रार्थना की। सन्धि की बातचीत अढ़ाई बरस चलती रही।

सन् १९१८ में जर्मनों से छुट्टी पाते ही फ्रान्सीसियों और अँगरेज़ों ने रूस में दस्तन्दाज़ी करना शुरू किया था। रूसी गद्दारों, पोलैंड और इस्तोनिया द्वारा उन्होंने रूस पर चढ़ाइयाँ करवायीं। इंग्लैंड ने इन चढ़ाइयों पर १० करोड़ पौंड खर्च किया। सन् १९२० ई० के अन्त तक रूसी क्रान्तिकारियों ने इन सब शत्रुओं को मार भगाया। उन्होंने तुर्की, ईरान, चीन और अफ़गानिस्तान के बारे में ज़ारशाही रूस के इंग्लैंड से जो गुप्त और प्रकट समझौते थे, उन्हें प्रकाशित और रद्द कर दिया। अँगरेज़ों ने देखा, अब वे अफ़गानिस्तान को दबाये रखना चाहें तो वहाँ रूस का प्रभाव और बढ़ेगा, इसलिए उसे विदेशी सम्बन्धों में पूरी स्वतन्त्रता दे दी (२२-११-१९२१ ई०)।

§१३. **असहयोग और खिलाफ़त आन्दोलन**—युरोप में युद्ध रुक जाने पर पेरिस के वारसाइ महल में साल भर सन्धि के सम्मेलन होते रहे।

विजेताओं ने जी खोल कर पराजितों को लाञ्छित किया। तुर्की साम्राज्य से अरब अलग हो चुका था; इराक, फ़िलिस्तीन और सीरिया प्रान्त अँगरेज़ों और फ़्रान्सीसियों ने दबा लिये थे। विजेताओं ने अब अपना एक गुट्ट बना कर उसका नाम "राष्ट्र-संघ" रक्खा और उस संघ ने इन तथा अन्य जीते हुए देशों के "शासनादेश" विजेताओं को दे दिये। तुर्की का साम्राज्य तो नष्ट हो ही गया, ठेठ तुर्की को भी दबाया जा रहा था। भारतीय मुसलमान १९वीं शती से तुर्की के सुल्तान को इस्लाम का खलीफ़ा मानते थे। खिलाफ़त को टूटता देख वे क्षुब्ध होने लगे। गान्धीजी ने उन्हें सरकार से असहयोग करने की सलाह दी।

अमृतसर कांग्रेस ने कांग्रेस को जनता को संस्था बनाने के लिए उसका नया विधान तैयार करने का काम गान्धीजी को सौंपा। पंजाब के अत्याचारों की याद में सन् १९२० में ६ से १३ एप्रिल तक राष्ट्रीय सप्ताह मनाया गया। मई में तुर्की की सन्धि प्रकाशित हुई। २८ मई को भारतीय खिलाफ़त कमेटी ने असहयोग की नीति निर्धारित की।

कांग्रेस के नेताओं में अभी परामर्श जारी था कि १ अगस्त को लोकमान्य तिलक चल बसे। ४ से ९ सितम्बर तक कलकत्ते में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन लाला लाजपतराय के सभापतित्व में हुआ; उसमें व्यवस्था-सभाओं, स्कूल-कालेज और अदालतों का बहिष्कार करना तय हुआ। विदेशी कपड़े का बहिष्कार होने पर स्वदेशी मिलों का कपड़ा काफ़ी न होगा, इसलिए हाथ की कताई-बुनाई को बढ़ावा देने का निश्चय हुआ। दिसम्बर में नागपुर कांग्रेस ने इन प्रस्तावों का समर्थन तथा गान्धीजी का बनाया हुआ नया विधान स्वीकृत किया। कांग्रेस का ध्येय अब से "शान्तिमय और उचित उपायों द्वारा स्वराज पाना" हो गया। नये विधान से कांग्रेस जनता की देशव्यापी तथा कार्यक्षम संस्था बन गयी। गान्धीजी का कहना था कि "यदि हम कांग्रेस विधान को चरितार्थ करें तो उस चरितार्थ करने से ही स्वराज्य मिल जायगा।"

सन् १९१४ में विदेशों से जो सिक्ख भारत में विप्लव करने आये थे, पंजाब सरकार ने उनके विषय में सिक्ख गुरद्वारों के महन्तों से घोषणा करा

दी थी कि वे धर्म-द्रोही हैं। अब उन लोगों ने जेलों से छूटने पर इन दुश्चरित्र के अड्डे—गुरद्वारों के सुधार की ओर ध्यान दिया और सन् १६२० के अन्त तक एक कमिटी खड़ी कर ली जो पीछे शिरोमणि गुरद्वारा प्रबन्धक कमिटी कहलायी।

कांग्रेस के नये विधान के अनुसार १५ व्यक्तियों की एक कार्य-समिति बनी और उसकी हर महीने बैठक होने लगी। कांग्रेस की पुकार पर सरकारी स्कूलों-कालेजों के विद्यार्थी उन्हें छोड़ने लगे और राष्ट्रीय विद्यापीठों की स्थापना हुई। अदालतें खाली तो न हुईं, पर उनका रोब जाता रहा। व्यवस्था-सभाओं में कांग्रेसी लोग नहीं गये। असहयोग का अन्तिम रूप करबन्दी होगा, यह बात सब के मन में थी। उसकी तैयारी के लिए ३० जून तक कांग्रेस के एक करोड़ सदस्य बनाना, स्वराज्य कोष में एक करोड़ रुपया जमा करना तथा २० लाख चर्खे चालू करना तय हुआ।

२ एप्रिल को लार्ड रीडिंग ने लार्ड चेम्सफोर्ड से शासन-भार लिया। कांग्रेस का कार्य ज़ोर से चलते ही सरकार ने धर-पकड़ शुरू कर दी। जो लोग पकड़े जाते, वे मुकद्दमों में अपनी सफ़ाई न देते थे। ८ जुलाई को कराची में खिलाफ़त सम्मेलन में घोषणा की गयी कि मुसलमानों के लिए ब्रिटिश फ़ौज में रहना हराम है। जुलाई के अन्त तक कांग्रेस के ५० लाख सदस्य बन गये, तथा स्वराज कोष में ११५ लाख रुपये जमा हो गये थे। ३० सितम्बर तक विदेशी कपड़े का पूरा बहिष्कार करना तय हुआ। इस प्रसंग में स्वयम्-सेवक लोग घर-घर से विदेशी कपड़ा इकट्ठा कर उसकी होली करने लगे, और सरकार ने ज़ोर का दमन जारी किया। कराची प्रस्ताव की खातिर मुस्लिम नेता गिरफ़्तार किये गये, तब कार्य-समिति के आदेश से १६ अक्टूबर को देश भर में सभाएँ कर यह बात दोहरायी गयी कि किसी भी भारतीय का ब्रिटिश सरकार की नौकरी करना राष्ट्रीय गौरव और राष्ट्रहित के विरुद्ध है।

५ नवम्बर को प्रान्तीय कांग्रेस समितियों को सामूहिक सत्याग्रह करने का अधिकार दिया गया। चुनी हुई तहसीलों या ज़िलों में करबन्दी करना उस

सत्याग्रह का मुख्य अंश होता। इसके बाद दमन और बढ़ा; दिसम्बर तक प्रायः ३० हज़ार सत्याग्रही जेलों में बन्द हो चुके थे।

सन् १६२१ के अन्त में अहमदाबाद कांग्रेस ने अगली लड़ाई के लिए गान्धीजी को अधिनायक नियत किया। गान्धीजी सूरत ज़िले के बारडोली तालुके में करबन्दी की तैयारी कर रहे थे। १ फ़रवरी को उन्होंने वाइसराय को अन्तिम सूचना देते हुए लिखा, "मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप देश की अहिंसात्मक हलचल में...सरकार की तटस्थता की घोषणा कर दें।...यदि आप सात दिन के भीतर ऐसी घोषणा कर देंगे तो मैं तब तक के लिए सत्याग्रह मुलतवी कर दूँगा, जब तक सारे कैदी छूट कर नये सिरे से विचार न कर लें।"

सरकार भला अपने खिलाफ़ की जाती हुई तैयारी में तटस्थ कैसे हो जाती! और वह भी उस दशा में जब उसके लिए ज़्यादतियाँ करके—खास कर स्त्रियों पर ज़ोर-जबरदस्ती करके—जनता को भड़का देना बहुत ही सुगम था! वही हुआ। वह हफ़्ता बीतते-बीतते ५ फ़रवरी को गोरखपुर ज़िले के चौरीचौरा स्थान में उसी प्रकार भड़कायी हुई जनता ने २१ सिपाहियों और एक दरोग़ा को थाने में खदेड़ कर उस थाने में आग लगा दी। गान्धीजी ने इसपर सामूहिक सत्याग्रह बन्द कर दिया और देश को रचनात्मक कार्य में लगने का आदेश दिया। २४-२५ फ़रवरी को भारतीय कांग्रेस-समिति ने उनका समर्थन किया। ज्यों ही एक बार कांग्रेस के नेता पीछे हटे कि सरकार ने उनकी रही-सही शक्ति तोड़ने को धड़ाधड़ गिरफ़्तारियाँ शुरू कीं। १३ मार्च को गान्धीजी गिरफ्तार किये गये, और उन्हें ६ साल की कैद की सज़ा दी गयी।

हमने देखा है कि महायुद्ध के समय अँगरेज़ों ने भारत में व्यवसाय स्थापित करने की आवश्यकता अनुभव की थी। युद्ध के बाद जापान ने अपना व्यापार बहुत बढ़ा लिया। भारत के कृषिप्रधान होने का लाभ इंग्लैंड के बजाय जापान को मिलने लगा। इस दशा में सरकार ने अपनी ज़कात-नीति सन् १६२२ से बदली, और व्यवसायों के संरक्षण के लिए एक टैरिफ़ (ज़कात)-बोर्ड नियुक्त किया। भारत में पूँजी लगाने वाले ब्रिटिश व्यवसायियों

ने भारतीय पूँजीपतियों को साथ लेना शुरू किया। उन्होंने देखा कि वैसा करने पर भी "अँगरेज़ों का पुराना नियन्त्रण ज्यों का त्यों बना रहता है, क्योंकि हिन्दुस्तानी अपने मुनाफे भर से सन्तुष्ट हो जाते हैं उन्हें प्रबन्ध में हिस्सा लेने की इच्छा नहीं होती।"

§१८. **असहयोग और क्रान्ति आन्दोलनों की प्रतिक्रिया** (१६२२–२६ ई०)—सन् १६२१ के बाद के बरसों में छोटे-मोटे प्रश्नों पर अथवा धर्म की आड़ ले कर कई सामूहिक सत्याग्रह होते रहे। इनमें से पहला स्थान अकालियों के सत्याग्रहों का है। गुरद्वारों का सुधार चाहने वाले सिक्ख अपने को अकाली कहते थे। सन् १६२१ से २४ तक एक न एक प्रश्न को ले कर वे सरकार से अहिंसात्मक लड़ाई चलाते रहे। उनके जत्थे लाठियों की मार और गोलियों की बौछार के सामने भी डटे रहते। उनकी शिरोमणि-समिति गैरकानूनी करार दी गयी, तो भी वह गुप्त रूप से आन्दोलन को चलाता रहा। सन् १६२५ ई० में सरकार ने गुरद्वारा कानून बना कर गुरद्वारों को सिक्खों के निर्वाचित प्रतिनिधियों के हाथ सौंप दिया, तब यह आन्दोलन शान्त हुआ।

राजनीतिक और आर्थिक प्रश्नों को ले कर भी कई सत्याग्रह हुए। सन् १६२८ में बारडोली के किसानों ने लगान की बढ़ती के विरुद्ध सत्याग्रह किया। उनकी यह माँग थी कि खुली जाँच में स्पष्टतः कारण दिखाये बिना बढ़ती न की जाय। उनका सत्याग्रह सफल हुआ।

राष्ट्रीय कांग्रेस ब्रिटिश सरकार से असहयोग और उसकी संस्थाओं के बहिष्कार को बराबर अपनी नीति कहती और सत्याग्रह में विश्वास प्रकट करती रही। सन् १६२३ में एक 'स्वराज-दल' खड़ा हो गया जिसका कहना था कि व्यवस्था-सभाओं में जा कर उनके "भीतर से असहयोग" किया जाय। कांग्रेस ने उन्हें इसके लिए इजाज़त दे दी। ५ फ़रवरी १६२४ ई० को महात्मा गान्धी बीमारी के कारण छोड़ दिये गये। गान्धीजी के अनुयायी अपने 'रचनात्मक कार्यक्रम' में लगे रहे, और उन्होंने राष्ट्रीय कांग्रेस के संगठन और आत्मनिर्भरता के भाव को बनाये रक्खा। गान्धीजी के आन्दोलन का परोक्ष प्रभाव भी बहुत

हुआ। एक तो हजारों आदमियों के जेल का पानी पी आने से हिन्दुओं की छूत-छात घटने लगी। दूसरे, स्त्रियों ने भी आन्दोलन में भाग लिया, जिससे उन्हें समाज में कुछ स्वतन्त्रता मिलने लगी। १६२२ ई० में तो केवल तीन स्त्रियाँ जेल गयीं, पर उन्होंने आगे के लिए रास्ता खोल दिया। तीसरे, खद्दर से देश का एक राष्ट्रीय पहनावा बन गया, जिससे सादगी फैली और गरीब-अमीर एक समान दिखायी देने लगे। इसके सिवाय अछूतोद्धार तो गान्धी-जी के प्रत्यक्ष कार्यक्रम का एक अंश ही था।

हिन्दू-मुस्लिम एकता भी कांग्रेस के कार्यक्रम में रही, पर सन् १६२२ के बाद से एकता के बजाय विरोध बढ़ता दिखायी दिया। सितम्बर १६२२ ई० में मुलतान में हिन्दू-मुस्लिम दंगा हुआ। खिलाफ़त और कांग्रेस के नेता उसे शान्त न कर सके। तब कुछ लोगों ने कहा कि हिन्दू कमजोर और असंगठित हैं, जब तक वे संगठित न होंगे, पक्की हिन्दू-मुस्लिम एकता न होगी। उन्होंने "हिन्दू संगठन" का आन्दोलन शुरू किया। इसके जवाब में मुसलमानों ने 'तंज़ीम' का आन्दोलन चलाया। पृथक्-पृथक् संगठित सम्प्रदायों का मेल हो भी जाता तो वह राष्ट्रीय एकता न होती, लट्ठबन्द समझौता होता। यों फिसाद बढ़ता ही गया, और अगले वर्षों में सभी प्रान्तों में दंगे होते रहे।

इस बीच खिलाफ़त का विचित्र ढंग से अन्त हो गया था। सन् १६१६ ई० में तुर्की के सुल्तान ने ठेठ तुर्की का स्मिर्ना प्रान्त यूनान को देना मान लिया था। मित्र राष्ट्रों का जंगी बेड़ा और सेना तब तुर्की को घेरे पड़े थे, यूनान तो उनका कठपुतला था। यूनानियों ने स्मिर्ना को लेना चाहा तो तरुण तुर्कों ने मुस्तफ़ा कमाल के नेतृत्व में उनका सामना किया, अंकरा में राष्ट्रीय परिषद बुला कर राष्ट्रीय प्रजातन्त्र की नींव डाल दी, और रूस से मदद माँगी। रूस से कोहकाफ के रास्ते गोला-बारूद आने पर उन्होंने यूनानियों को मार भगाया (अक्तूबर १६२२ ई०)। तुर्की का सुल्तान तब एक अँगरेज़ी जहाज़ में माल्टा भाग गया। राष्ट्र-परिषद् ने उसके भतीजे को खलीफ़ा बनाया। पर उसके हाथ में कोई राजनीतिक अधिकार नहीं दिया। मित्र राष्ट्रों ने तुर्की से सन्धि कर अक्तूबर १६२३ ई० में अपनी सेनाएँ हटा लीं।

इसके बाद भारत-सचिव की काउन्सिल के मेम्बर अमीरअली तथा आग़ाख़ाँ ने तुर्की के प्रधान मन्त्री के पास अँगरेज़ी में एक पत्र भेजा। उन्होंने लिखा, "निर्वाचित प्रतिनिधियों की शक्ति कम करने को हम नहीं कहते, पर खलीफ़ा की शक्ति मुसलमानों के मज़हबी मुखिया के रूप में शरियत के अनुसार अक्षुण्ण रक्खी जाय।" मुस्तफ़ा कमाल ने कहा, "आगाखाँ अँग्रेज़ों का ख़ास कारिन्दा है," और उसके द्वारा अँग्रेज़ों ने तुर्की को कमज़ोर बनाने की यह नयी चाल चली है। तुर्क प्रजातन्त्र ने खिलाफ़त को उठा देने का निश्चय किया। ४ मार्च १९२४ ई० को प्रातः दो बजे पहरेदारों ने खलीफ़ा को जगा कर गद्दी पर बैठाया। तब उसको राष्ट्र-परिषद् का हुक्म सुनाया, और उस हुक्म के अनुसार उसे गद्दी से उतार कर निर्वासित कर दिया। उसी दिन तुर्क मन्त्रि-मंडल में से धर्माधिकारी पद, तमाम मज़हबी मकतब और काज़ियों की कचहरियाँ उठा दी गयीं।

अगले वर्ष ईरान ने भी तुर्की का अनुसरण किया। अफ़गानिस्तान में अमीर अमानुल्ला ने वही राह पकड़ी। किन्तु अफ़गान प्रजा अभी उसके लिए पूरी तैयार न थी। जिस कर्नल लारेन्स ने तुर्की के खिलाफ़ अरबों को उभाड़ा था, वही अब अफ़गान कबीलों में जा पहुँचा। १९२८ ई० में अफ़गानिस्तान में विद्रोह हुआ, और अमानुल्ला को देश छोड़ कर भागना पड़ा।

अहिंसात्मक असहयोग विफल होने पर १९२२ ई० में क्रान्तिकारी नेता फिर अपने संगठन को नया करने लगे। अमेरिका से ग़दर दल के कुछ लोग रूस पहुँचे। उनके साथियों ने पंजाब में "किर्ती"* (श्रमिक) आन्दोलन शुरू किया। जो नरेन्द्रनाथ भट्टाचार्य १९१५ ई० में भारत से भाग गये थे, वे भी रूस पहुँच कर मानवेन्द्रनाथ राय नाम रख कर रूसी क्रान्ति का सन्देश भारत में भेजने लगे। पुराने क्रान्तिकारी अभी इन प्रवृत्तियों को देख-समझ ही रहे थे कि कुछ अधीर युवकों ने सन् १९२३ ई० के मध्य से बंगाल में त्रास के कार्य शुरू कर दिये। सरकार को दमन का

* पंजाबी 'किर्त' संस्कृत 'कृति' का रूपान्तर है। 'किर्ती' यानी किर्तवाला, कर्मकर, श्रमिक, मज़दूर।

मौका मिल गया। २५ अक्तूबर सन् १९२४ को बंगाल सरकार ने एक नया फ़रमान (आर्डिनान्स) निकाल कर एकाएक नज़रबन्दियाँ शुरू कीं।

उत्तर भारत में सन् १९२३-२४ ई० में "हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र मंडल" नामक एक गुप्त संस्था स्थापित हुई, जिसका उद्देश्य था, "भारत के संयुक्त राष्ट्रों का संघ-प्रजातन्त्र स्थापित करना।" इन्होंने भी धन-संग्रह का पुराना रास्ता पकड़ा, और सन् १९२५ के अन्त में इनके मुख्य केन्द्र पकड़े गये।

इस दमन के बावजूद भी क्रान्तिकारी आदर्शों का देश में प्रचार होता रहा। सन् १९०७-८ वाले अजीतसिंह का भतीजा भगतसिंह "हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र मंडल" में था। सन् १९२६ में उसने लाहौर में एक "नौजवान भारत सभा" स्थापित की। उसकी देखा-देखी समूचे देश में युवक-सभाएँ स्थापित हो गयीं। काँग्रेस ने सन् १९२० से अपना ध्येय "स्वराज" बना लिया था। लेकिन जब "स्वराज" का अर्थ पूछा जाता तो गान्धीजी कहते, "सम्भव हो तो ब्रिटिश साम्राज्य के भीतर, आवश्यक हो तो बाहर।" क्रान्तिकारियों का स्पष्ट ध्येय पूर्ण स्वराज्य ही था। दूसरे, वे अहिंसात्मक साधनों तक परिमित न रहना चाहते थे। धीरे-धीरे देश का बहुमत उनके ध्येय की तरफ़ झुकता गया, पर साधनों के विषय में उसने गान्धीजी की बात को न छोड़ा।

एप्रिल १९२६ ई० में लार्ड रीडिंग ने लार्ड अर्विन को शासन-भार दे दिया था। सरकार ने देखा कि भारत को फिर कुछ शासन-अधिकार देने होंगे, तो उनका मसविदा बनाने को सर जॉन साइमन की प्रमुखता में एक कमीशन नियत किया। फरवरी सन् १९२८ में यह कमीशन भारत आया। जहाँ-जहाँ वह गया, जनता ने उसके बहिष्कार के प्रदर्शन किये। प्रदर्शनकारियों पर अनेक जगह लाठियों की मार पड़ी।

सन् १९२८ में अधिकतर नज़रबन्द भी छोड़ दिये गये। उस वर्ष के अन्त में कलकत्ते में राष्ट्रीय कांग्रेस में युवक दल ने पूर्ण स्वाधीनता को ध्येय

मनवाना चाहा। गान्धीजी के कहने से यह तय हुआ कि ब्रिटिश सरकार यदि एक साल में भारत को अभीष्ट शासनपद्धति न दे, तो कांग्रेस पूर्ण स्वाधीनता को लक्ष्य बना कर करबन्दी का आन्दोलन शुरू करेगी।

सन् १९२९ में देश आगामी लड़ाई की तैयारी में लगा और सरकार ने दमन शुरू किया। भारत भर के ३१ मज़दूर नेताओं पर मेरठ में तथा भगतसिंह आदि "हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र मंडल" के कुछ लोगों पर लाहौर में मुकदमा चलाया गया। लाहौर के कैदियों ने राजनीतिक कैदियों से मनुष्योचित व्यवहार की माँग पर भूख-हड़ताल शुरू कर दी। यतीन्द्रनाथ दास नामक एक अभियुक्त ६४ दिन के अनशन के बाद १३ सितम्बर को चल बसा। १९ सितम्बर को बरमा में एक राजतीतिक कैदी फुंगी विजय का १६४ दिन के अनशन के बाद देहान्त हुआ। इन बलिदानों से देश में नयी लहर उमड़ आयी।

३१ दिसम्बर १९२९ ई० को लाहौर में राष्ट्रीय कांग्रेस ने भारत की पूर्ण स्वतन्त्रता को अपना लक्ष्य घोषित किया। उसने यह भी कहा कि स्वाधीन भारत अँगरेज़ी सरकार द्वारा भारत के नाम पर लिये गये कर्ज़ को निष्पक्ष जाँच कराये बिना स्वीकार न करेगा।

§१५. **पहला सत्याग्रह-युद्ध** (१९३०-३४ ई०)—**अ. पहली मुहिम**—२६ जनवरी सन् १९३० को समूचे भारत में स्वाधीनता-दिवस मनाया गया। उस दिन तिरंगा झंडा फहरा कर लोगों ने यह घोषणा की—

"स्वाधीन होना, अपने श्रमों का फल भोग करना और जीवन की आवश्यक वस्तुएँ पाना भारतीय जनता का अपरिहार्य अधिकार है। यदि कोई शासन जनता को इन अधिकारों से वंचित कर पीड़ित करता है, तो जनता का अधिकार है कि उसे बदल दे या उखाड़ दे।...ब्रिटिश शासन ने भारतीय जाति को न केवल उसकी स्वाधीनता से वंचित किया, प्रत्युत जनता के दोहन-शोषण पर अपनी नींव डाली है, और भारत को आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पहलुओं से उजाड़ डाला है।

आर्थिक रूप से भारत को उजाड़ दिया गया है। हमारी जनता से हमारी आय के अनुपात से बेहिसाब मालगुज़ारी ली जाती है। हमारी औसत आय दैनिक सात पैसा है; और हम जो भारी कर अदा करते हैं, उनमें से २० फ़ी सदी किसानों से ली जाने वाली ज़मीन-मालगुज़ारी से और ३ फ़ी सदी नमक कर से आता है जिसका कड़ा बोझ प्रायः गरीबों पर पड़ता है।

ग्राम व्यवसाय नष्ट कर दिये गये हैं, जिससे किसान साल में चार मास बेकार रहते हैं, और दस्तकारी के अभाव में उनकी बुद्धि कुंठित होती है ।

जकात और मुद्रा-पद्धति को इस तरह चलाया गया है कि किसानों पर और बोझ लदे। ज़कात की दरों से ब्रिटिश कारखाने वालों का स्पष्ट पक्षपात प्रकट है। ··शासन अत्यन्त फ़िज़ूलखर्ची से (चलता है)। विनिमय-दर को और भी मनमाने ढंग से चलाया जाता है, जिससे देश से करोड़ों रुपये बाहर बहा करते हैं।

राजनीति में भारत का पद कभी इतना गिरा नहीं रहा जितना ब्रिटिश राज में। सुधारों से जनता को कोई असल राजनीतिक शक्ति नहीं मिली। हममें से बड़े से बड़ों को विदेशी के आगे झुकना पड़ता है। हमें अपने विचार प्रकट करने और परस्पर मिलने की स्वतन्त्रता नहीं है ··। (हमारी) शासन की प्रतिभा मार दी गयी है ।

हमारी संस्कृति को दबाते हुए अँगरेज़ी शिक्षापद्धति हमें अपनी परिस्थिति से उखाड़ने की कोशिश करती और अपनी ज़ञ्जीरों से चिपटे रहना सिखाती है।

हमें निहत्था करके आध्यात्मिक रूप से नामर्द बना दिया गया है, और हमारे देश पर क़ब्जा किये बैठी विदेशी सेना द्वारा··· हमें यह सुझाया जाता है कि हम स्वयम् अपने देश और अपने घर-द्वार की रक्षा नहीं कर सकते। हमें विश्वास है कि यदि हम इस अमानुषी शासन को सहायता देना और कर देना बन्द कर दें, और उत्तेजित किये जाने पर भी हिंसा के लिए न उभड़ें तो इसका अन्त निश्चित है···।"

महात्मा गान्धी सत्याग्रह-युद्ध के अधिनायक नियत हुए। गान्धीजी ने सबसे पहले नमक कानून तोड़ना तय किया, क्योंकि एक तो नमक-कर ग़रीबों के लिए स्वयम् अभिशाप है, और दूसरे भारत का वार्षिक खिराज इंग्लैंड तक पहुँचाने की कल का वह एक ज़रूरी पुर्ज़ा है। हमने देखा है कि भारत इंग्लैंड से हर साल जितना माल मँगाता है, उससे कहा अधिक भेजता है। १९२५ ई० में यह अधिकता ६७ करोड़ रुपये, अर्थात् नादिरशाह की लूट* से दो करोड़ अधिक, थी। यह खिराज ले जाने वाले जहाज़ अपनी वापसी यात्रा में खाली नहीं आ सकते—उन्हें कोई बहुत सस्ती चीज़ लानी चाहिए, इसलिए अँगरेज़ी नमक लाते हैं। और अँगरेज़ी नमक भारत में बिक न सके, यदि भारतीय नमक पर ब्रिटिश सरकार का यह कर न लगा हो।

महात्मा गान्धी ११-३-१९३० ई० की सन्ध्या को

[श्री नवीनचन्द्र गान्धी के सौजन्य से]

*ऊपर पृष्ठ ४१९।

गान्धीजी ने सूरत ज़िले के समुद्र-तट के दाडी गाँव मे नमक कानून तोड़ना तय किया, और १२ मार्च को सवेरे साबरमती आश्रम, अहमदाबाद, से ७६ साथियो के साथ दाडी के लिए पैदल रवाना हुए। ६ एप्रिल को उन्हाने दाडी के समुद्रतट से मुट्ठी भर नमक चुना और यह संकेत पाते ही भारत भर मे नमक-कानून तोड़ा गया। जगह जगह गिरफ़्तारियाँ हुईं और जनता पर गोलियाँ चलीं।

उधर बंगाल के एक त्रासवादी दल ने १८ एप्रिल की रात को चटगाँव में फ़ौजी शस्त्रागार को लूट लिया। उसी रात बंगाल मे नया आर्डिनान्स चलाया गया, और सुबह से पहले बंगाल के क्रान्तिकारी नेताओं ने, जो सन् १६२८ में जेलों से छूटे थे, अपने को फिर नज़रबन्द पाया।

ख़ान अब्दुलग़फ़्फ़ार ख़ाँ
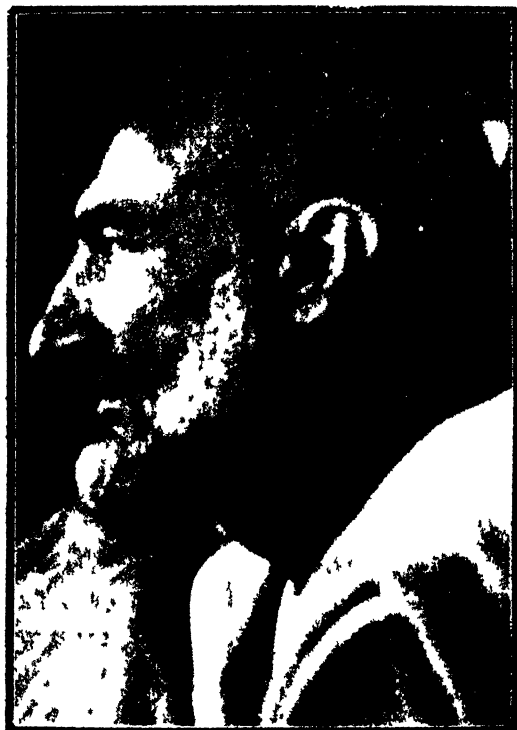
[श्री नवीनचन्द्र गान्धी के सौजन्य से]

२२ एप्रिल को पेशावर में जनता के जुलूस को गोलियों की मार से हटाने की कोशिश की गयी। वीर पठान गोली खा कर गिरते गये, पर पीछे न हटे। चारसद्दा के ख़ान अब्दुलग़फ़्फ़ार खा ने

उन्हें गान्धीजी के मार्ग की दीक्षा दी थी। उस प्रसंग में गढ़वाली सैनिकों की दो पलटनों को निहत्थी जनता पर गोली दागने को कहा गया। चन्दनसिंह के नेतृत्व में उन सैनिकों ने वैसा करने से इनकार किया। उन्हें फ़ौजी क़ानून से सज़ाएँ दी गयीं। पीछे पेशावर शहर को फ़ौज के हाथ में दे दिया गया।

इस बीच गान्धीजी दांडी में बराबर कानून तोड़ रहे थे। २७ एप्रिल को वाइसराय ने एक प्रेस-आर्डिनान्स जारी किया जिससे राष्ट्रीय अख़बारों को प्रकाशन बन्द करना पड़ा और साइक्लोस्टाइल पर छपे गैरकानूनी परचे निकलने लगे। गान्धीजी ने सूरत ज़िले में धरासना के सरकारी नमकघर पर "धावा" मारना तय किया। इस पर ४ मई की रात को उन्हें गिरफ्तार कर पूना के पास यरवदा जेल में भेज दिया गया।

गान्धीजी के गिरफ़्तार होने पर कार्यसमिति ने निश्चय किया कि रैयतवारी प्रान्तों में करबन्दी की जाय, बिहार-बंगाल में चौकीदारी टैक्स न दिया जाय, मध्य प्रान्त आदि में जंगल कानून तोड़े जाँय, नमक-कानून तोड़ना जारी रहे, विदेशी कपड़े और शराब-अफ़ीम को रोका जाय तथा ब्रिटिश माल का पूरा बहिष्कार किया जाय। बारडोली, बोरसद (जि० खेड़ा) और उत्तर कनाडा के किसानों ने इसपर मालगुजारी देना बन्द कर दिया। मिदनापुर में तथा भागलपुर के थाना-बिहपुर में चौकीदारी टैक्स देना बन्द हुआ।

गान्धीजी ने अपने पीछे अब्बास तैयबजी को और उन्होंने सरोजिनी नायडू को अधिनायक नियत किया था। वे दोनों १५ दिन के भीतर धरासना के धावों में गिरफ्तार हो गये। विदेशी कपड़े और शराब पर धरना देने में स्त्रियों ने मुख्य भाग लेना शुरू किया। पुलिस नेताओं को गिरफ्तार करती और साधारण लोगों को लाठियों से खदेड़ती थी।

सरोजिनी देवी के बाद मोतीलाल नेहरू अधिनायक हुए। उन्होंने कांग्रेस की ओर से भारतीय मिलों से ठहराव किये। जिन मिलों में तीन-चौथाई पूँजी तथा प्रबन्ध भारतीय हो, जो ब्रिटिश सामग्री न खरीदने, ब्रिटिश बीमा कम्पनियों आदि को काम न देने, मज़दूरों के साथ उचित बरताव करने आदि

की प्रतिज्ञा करें, उन्हीं को स्वदेशी माना जाता। मोतीलालजी ने भारत की अधिकांश मिलों से स्वदेशी प्रतिज्ञा ले ली। २७ जून को कार्यसमिति ने निश्चय किया कि अत्याचारी अमलों का सामाजिक बहिष्कार किया जाय, सरकारी ऋणपत्र न लिये जायँ, और चूँकि रुपये में उसके मूल्य की तिहाई चाँदी भी नहीं है, इसलिए रुपये या नोट न ले कर भरसक सोना ही लिया जाय। इन कार्रवाइयों के फलस्वरूप ३० जून को मोतीलाल गिरफ्तार हुए और कार्यसमिति गैरकानूनी करार दी गयी।

आन्दोलन इसके बाद कड़ा होता गया। बंगाल में विदेशी कपड़े का आयात साल के अन्त में ६५ फ़ी सदी तक गिर गया। लंकाशायर में मिलें बन्द हो कर बेकारी फैलने लगी। जिन इलाकों में करबन्दी हुई थी, वहाँ समूचे गाँवों को घेर कर पीटना, लूटना, जलाना, अश्लील अत्याचार, किसानों से वसूली न होने पर जिस किसी राही से उसका माल छीन लेना और उससे कहना कि अमुक किसान से वसूल कर लो—इन तरीकों से शासन चलाया गया। बारडोली और बोरसद के ८४ हज़ार किसान पड़ोस के बड़ोदा राज्य के इलाकों में प्रवास कर गये। बोरसद में ३० वर्गफीट का एक पिंजरा १८ कैदियों के लिए हवालात का काम देता—दिनरात में केवल एक बार वह खोला जाता था। बारडोली में गिरफ्तार किसानों को नपुंसक बनाने का डर दिखाया जाता था। प्रश्न होता है कि भारतीय पुलिस और फ़ौज विदेशी के इशारे पर ऐसे घृणित कार्य क्यों करती रहीं? सच कहें तो साधारण पुलिस और फौज के दिल में काफी सहानुभूति थी, पर उन्हें कोई रास्ता न सूझता था। राष्ट्र के नेता इतनी दूर तक जाने को तैयार न थे कि पुलिस और फ़ौज को नौकरी छोड़ देने को कहते, और यदि उनका अधिकांश नौकरी छोड़ देता तो उससे उत्पन्न परिस्थिति की ज़िम्मेदारियाँ उठा लेते।

अधिनायकों का सिलसिला जारी रहा। बंगाल और पंजाब में हिंसा प्रति-हिंसा भी जारी रही। ७ अक्तूबर को लाहौर वाले मामले में भगतसिंह और उसके दो साथियों को फाँसी की सज़ा सुनायी गयी। उसी मास सब काँग्रेस सभाएँ गैरकानूनी करार दी गयीं, और उनकी सम्पत्ति ज़ब्त करने का आर्डि-

नान्स निकला। "काला दमन" जारी रहा। साल के अन्त में ७० हज़ार स्त्री-पुरुष जेलों में थे।

३. गान्धी-अर्विन समझौता—इस बीच भारत-सरकार ने भारत से ७३ आदमियों को भारत के विभिन्न प्रान्तों और रियासतों का प्रतिनिधि कह कर लन्दन भेजा, और वहाँ पार्लियामेण्ट के १३ सदस्य इन लोगों से शासन-सुधारों के विषय में खुली बातचीत का दिखावा करने को १३ नवम्बर से शाही महल में बैठने लगे। युरोप में बराबरी की हैसियत से खुली बातचीत मेज़ के चौगिर्द गोल दायरे में बैठ कर की जाती है, इसलिए यह गोलमेज़-सम्मिलनी कहलायी।

१६-१-३१ को पहली गोलमेज़ सम्मिलनी को विसर्जित करते हुए ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री ने नये शासन-विधान की रूपरेखा यों प्रकाशित की—'भारत का केन्द्रीय शासन संघीय व्यवस्था-सभा के प्रति, जिसमें प्रान्तों और रियासतों के प्रतिनिधि होंगे, अंशतः ज़िम्मेदार होगा; अंशतः इसलिए कि सामरिक, वैदेशिक और अर्थनीतिक साख के मामलों में संघ-सभा का नियन्त्रण न चलेगा; और प्रान्तों को भीतरी मामलों में पूरी स्वतन्त्रता दी जायगी।'

इसके ६ दिन बाद काँग्रेस कार्य-समिति के सब सदस्य बिना शर्त छोड़ दिये गये। ये लोग पहले प्रयाग में, फिर दिल्ली में, इकट्ठे हुए। महात्मा गान्धी और लार्ड अर्विन की बातचीत चली और ५ मार्च को दोनों ने एक समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये। इस समझौते के अनुसार काँग्रेस ने संघ के ध्येय को माना और गोलमेज़-सम्मिलनी में अपना प्रतिनिधि भेजना स्वीकार किया, पर इस शर्त के साथ कि संघ-व्यवस्था-सभा पर यदि कोई प्रतिबन्ध होंगे तो "भारत के हित के लिए" ही होंगे। सत्याग्रह और ब्रिटिश माल बहिष्कार बन्द किया गया, पर विदेशी कपड़े और शराब पर धरना जारी रक्खा गया। सत्याग्रह-विरोधी फ़रमान, मुकदमे और सज़ाएँ रद्द की गयीं, सिवाय उन पुलिस और फ़ौजियों की सज़ाओं के जिन्होंने हुक्म न माना था। ज़ब्त सम्पत्ति लौटाने का वचन दिया गया।

मार्च के अन्त में कराची में राष्ट्रीय कांग्रेस जुटी। उससे ठीक पहले २३ मार्च को भगतसिंह और उसके साथियों को फाँसी लगी। 'यह कहना अत्युक्ति नहीं है कि उस समय भगतसिंह का नाम भारत में उतना ही प्रसिद्ध और प्रिय था जितना गान्धी का।" २३ मार्च को देश भर में हड़तालें हुईं। उस प्रसंग में कानपुर में हिन्दू-मुस्लिम दंगा हो गया। दंगे को शान्त करने की कोशिश करते हुए गणेशशंकर विद्यार्थी मारे गये। कराची कांग्रेस ने गान्धी-अर्विन समझौता स्वीकृत किया, गान्धीजी को गोलमेज़-सम्मिलनी के लिए अपना प्रतिनिधि चुना, और भारत के कर्ज़ की निष्पक्ष जाँच की माँग की। उसने जनता के मूल अधिकारों के विषय में भी अपना मन्तव्य प्रकाशित किया।

गणेशशंकर विद्यार्थी

क्रान्तिकारियों से समझौता न होने के कारण बंगाल में त्रास के कार्य जारी रहे।

१७ एप्रिल को लार्ड अर्विन ने लार्ड विलिंग्डन को शासनभार सौंप कर विदा ली। इसके बाद समझौते की शर्तें टूटने लगीं। गान्धीजी ने मामला सालिस-सिपुर्द करना चाहा, विलिंग्डन ने यह नहीं माना। इसपर गान्धीजी ने गोलमेज़-सम्मिलनी में जाने से इनकार कर दिया (११, १३ अगस्त)। २७ अगस्त को वाइसराय ने बारडोली की बकाया मालगुज़ारी की जाँच कराना स्वीकार किया, तब गान्धीजी लन्दन को रवाना हुए।

पीछे, देश की स्थिति बिगड़ती गयी। बंगाल में संघर्ष जारी ही था। १३ दिसम्बर को दो बंगाली लड़कियों ने त्रिपुरा के ज़िला हाकिम को मार डाला। अवध में मन्दी के कारण किसानों को लगान दूभर हो रहा था। कॉंग्रेस

ने उन्हें कुछ राहत दिलानी चाही। इसपर १४ दिसम्बर को एक आर्डिनान्स निकाला गया और पुरुषोत्तमदास टंडन, जवाहरलाल नेहरू और तसद्दुक अहमद शेरवानी गिरफ्तार किये गये। २४ दिसम्बर को सीमाप्रान्त में तीन आर्डिनान्सों की घोषणा करके अब्दुलग़फ़्फ़ारखाँ और उनके भाई को क़ैद किया गया, और २६ को कोहाट में जनता पर गोलियाँ चलायी गयीं।

दिसम्बर १९३० ई० से दक्खिनी बरमा में भी सशस्त्र विद्रोह शुरू हुआ था। एप्रिल से जून तक वह ज़ोरों पर रहा। जुलाई में भारत से फ़ौज भेजी गयी। साल के अन्त तक धीरे-धीरे विद्रोह दब गया।

इस बीच लन्दन को सम्मिलनी में हिन्दू, मुस्लिम, अछूत आदि दलों के "प्रतिनिधि" बनने वाले 'स्वराज्य' के लाभों के बँटवारे के विषय में दुनिया के सामने अनथक किचकिच करते रहे। अन्त में ब्रिटिश प्रधान मन्त्री राम्से मैकडानल्ड ने बन्दर-बाँट की प्रसिद्ध नीति के अनुसार अपने को सालिस रूप में पेश किया। गान्धीजी ने उस कार्रवाई को 'लाश चीरना' कहा। हिन्दुओं और अछूतों के बीच एक स्थायी पत्थर ठोक देने की मैकडानल्ड की कोशिश को देखते हुए उन्होंने कहा "सिक्ख सदा सिक्ख रह सकते हैं वैसे ही मुस्लिम और ईसाई भी। पर क्या अछूत सदा अछूत बने रहेंगे ? अछूतपन जिन्दा रहे, इससे तो मैं हिन्दुत्व का मर जाना पसन्द करूँगा। यदि मुझ अकेले को भी इसका मुकाबला करना पड़ा तो जान तक दे कर करूँगा।"

२८ दिसम्बर को गान्धीजी वापिस बम्बई पहुँचे।

उ. **दूसरी मुहिम**—समझौता टूट चुका था। काँग्रेस कार्य-समिति ने फिर से नमक-सत्याग्रह तथा विदेशी कपड़े, शराब और ब्रिटिश माल का बहिष्कार चलाना तय किया। लार्ड विलिंग्डन ने नये साल की भेंट रूप में चार नये फ़रमान निकाल कर सब काँग्रेस संस्थाएँ गैरक़ानूनी करार दीं, और गान्धीजी और वल्लभभाई पटेल को यरवदा रवाना कराया। नये फ़रमानों ने ज़िला हाकिमों को जनता के जान-माल पर सोलहों आना अधिकार दे

दिया। आन्दोलन और दमन पुराने मार्ग पर चलने लगे। आन्दोलन का संचालन गुप्त रूप से होने लगा।

इस बीच १७ अगस्त को राम्से मैकडानल्ड का "साम्प्रदायिक निर्णय" प्रकाशित हुआ। उसमें अछूतों के लिए भी पृथक् निर्वाचन की योजना थी। गान्धीजी ने लन्दन में की हुई प्रतिज्ञा के अनुसार सूचना दी कि इसे बदला न जायगा तो वे २० सितम्बर से आमरण उपवास करेंगे। तब पूना में हिन्दू नेताओं का सम्मेलन सरकार ने होने दिया। उसमें एक एकमत योजना तैयार हो गयी। आगामी दस बरस के लिए व्यवस्था-सभाओं में "हरिजनों" (अछूतों) को रक्षित स्थान दिये गये, और यह तय हुआ कि प्रत्येक स्थान के लिए हरिजनों के चुने हुए चार उम्मीदवारों में से एक साधारण निर्वाचन-मंडल द्वारा चुना जाय। सरकार ने इस योजना को मान लिया। गान्धीजी की प्रेरणा से एक हरिजन-सेवक संघ स्थापित हुआ, और गान्धीजी को जेल के भीतर से उसका कार्य चलाने की सुविधा दी गयी।

इस समय तक सत्याग्रह आन्दोलन बहुत कुछ कुचला जा चुका था, पर बंगाल में त्रास-कार्य बाढ़ पर थे। सितम्बर में वाइसराय और जंगी लाट ने बरेली, मेरठ, रुड़की और देहरादून की छावनियों को उठा कर बंगाल भेज दिया, और फ़ौज द्वारा बंगाली त्रास-दलों को दबाने की कोशिश शुरू की। साल के अन्त में सब फ़रमानों को स्थायी क़ानून का रूप दिया गया।

८ मई १९३३ ई० को गान्धीजी ने आत्मशुद्धि के लिए फिर २१ दिन का उपवास शुरू किया। इसपर उन्हें छोड़ दिया गया। उनके कहने से सत्याग्रह तीन मास के लिए स्थगित किया गया। उस बीच गान्धीजी ने वाइसराय से समझौते की बात करनी चाही। लार्ड विलिंग्डन के इनकार करने पर कॉंग्रेस-नेताओं ने तय किया कि सामूहिक सत्याग्रह बन्द कर व्यक्तिगत सत्याग्रह जारी रक्खा जाय। अगस्त के शुरू में गान्धीजी फिर गिरफ़्तार हुए और उन्हें एक साल की क़ैद दी गयी। उन्होंने फिर अनशन किया और २३ अगस्त को उन्हें फिर छोड़ दिया गया।

उन्होंने कहा, वे साल भर अपने को क़ैदी मानेंगे और तब तक केवल हरिजन-सेवा करेंगे।

व्यक्तिगत सत्याग्रह भी कुछ देर बाद ठंडा पड़ गया। ७ एप्रिल १९३४ ई० को गान्धीजी ने देश को सलाह दी कि स्वराज्य के लिए युद्ध रूप में सत्याग्रह बन्द किया जाय, विशेष शिकायतों को दूर करने के लिए भले ही जारी रहे। १८-१९ मई को पटना में कॉंग्रेस की महासमिति ने सत्याग्रह बन्द कर दिया और व्यवस्था-सभाओं के चुनाव में लड़ना तय किया। सरकार ने इसके बाद सीमाप्रान्त और बंगाल के सिवाय दूसरे प्रान्तों की कांग्रेस-संस्थाओं पर से रोक हटा ली, और क़ैदियों को धीरे-धीरे छोड़ना शुरू किया।

२६-२७-२८ अक्तूबर १९३४ ई० को बम्बई में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। कांग्रेस के सभापतियों को अब देश राष्ट्रपति कहता है। राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद ने अपने भाषण में कहा, "हम एक बार विफल हों, दो बार विफल हों, पर एक दिन ज़रूर सफल होंगे।"

§१९. **भारतीय संघ के विभिन्न आदर्शों का संघर्ष** (१९३५ ई०)—५ जून सन् १९३५ को भारत-शासन का नया विधान ब्रिटिश पार्लियामेण्ट से स्वीकृत हुआ। इस विधान के अनुसार कहने को भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्त और रियासतें अपने भीतरी मामलों में स्वतन्त्र हैं, और उन्हीं का संघ भारत-सरकार होगी। भारतवर्ष की एक संघ-प्रजातन्त्र रूप में कल्पना पहले-पहल सन् १९२३-२४ ई० में हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र मंडल वालों ने की थी।* किन्तु उस संघ की इकाइयाँ भारत के परम्परागत जनपद (भाषा-प्रदेश) होते। महात्मा गान्धी ने जब सन् १९२० ई० में कांग्रेस का विधान बनाया, तब से वे बराबर कह रहे हैं कि देश का भाषा-प्रदेशों में विभाजन स्वराज पाने का एक प्रमुख उपाय है। वास्तव में भारतवर्ष उन जनपदों का संघ है ही†। उन जनपदों को व्यक्त करने के लिए आधुनिक प्रान्तों और रियासतों का

*ऊपर, पृष्ठ ६४७।

† ऊपर प्रकरण १, अध्याय १ में हमने भारत को उन जनपदों के समूह रूप में ही

'समथर' किया जाना तथा सारे भारत की प्रजा के समान मौलिक अधिकार निश्चित होना ज़रूरी है। नये भारत शासन-विधान में संघ की व्यवस्था-सभा में विद्यमान प्रान्तों की प्रजा के तथा रियासतों के राजाओं के प्रतिनिधि होंगे। उस व्यवस्था-सभा का भी शासन पर पूरा नियन्त्रण न होगा—समर-नीति और विदेशी नीति का चलाना तथा भारत की 'अर्थनीतिक साख' बनाये रखना गवर्नर-जनरल के संरक्षित कार्य होंगे भारत की अर्थनीतिक साख कायम रक्खी जायगी लन्दन के उन महाजनों के हित में जिनके हाथों में भारत गिरवी है। उनकी दृष्टि में वह साख तभी तक कायम रहेगी, जब तक भारत अपना सालाना खिराज देता चलेगा।

संघ के प्रान्त कहने को स्व-शासित हैं, पर उनमें भी गवर्नरों के विशेष अधिकार हैं. तथा मुख्य भृत्य-वर्गों की नियुक्ति तथा उस नियुक्ति की शर्तें निश्चित करना ब्रिटिश भारतमन्त्री के हाथ में है, और उनकी तनख़ाहें संरक्षित कर दी गयी हैं। १६१६ ई० के सुधारों में ७० लाख आदमियों को मत देने का अधिकार था; अब वह ३६० लाख को दिया गया है। सम्प्रदायों के अनुसार पृथक् निर्वाचन जारी है, और आसाम और बंगाल में गोरे व्यापारियों को उनकी संख्या से बहुत अधिक स्थान दिये गये हैं। छोटे सम्प्रदायों का संरक्षक अँगरेज़ गवर्नरों को बनाया गया है। संघ अथवा प्रान्तों की व्यवस्था-सभाएँ ब्रिटिश व्यापारियों को नुकसान पहुँचाने वाला कोई काम करें तो उसे रद्द करने के विशेष अधिकार गवर्नरों और गवर्नर-जनरल को दिये गये हैं।

एप्रिल सन् १६३६ में प्रस्तावित सुधारों के अनुसार सिन्ध और उड़ीसा पृथक् प्रान्त बनाये गये, तथा लार्ड विलिंग्डन से लार्ड लिनलिथगो ने शासन-भार लिया। सन् १६३७ के शुरू में नये विधान की प्रान्तीय व्यवस्था-सभाओं के चुनाव हुए। युक्तप्रान्त, बिहार, मध्यप्रान्त, उड़ीसा, मद्रास और

देखा है। पृष्ठ ४ के नक्शे पर वे अंकित हैं। समूचे इतिहास में हमने उनपर ध्यान रक्खा है, क्योंकि ऐसा किये बिना भारतीय इतिहास स्पष्ट न होता।

बम्बई में कांग्रेस का ज़ोरदार बहुमत आया। सीमाप्रान्त और आसाम में ३८ और ३५ प्रतिशत स्थान कांग्रेस को मिले। बंगाल, पंजाब और सिन्ध में जनता प्रायः मुस्लिम है और जमींदार या महाजन प्रायः हिन्दू हैं। किसानों का जमींदारों-महाजनों से संघर्ष मुस्लिम-हिन्दू संघर्ष बन जाता है, जिससे राष्ट्रीय दृष्टि दब जाती है। इन प्रान्तों में कांग्रेस का बहुमत नहीं हुआ।

प्रान्तीय स्वशासन की योजना के अनुसार यह प्रश्न आया कि कांग्रेस मन्त्रिपद ग्रहण करे या न करे। १ एप्रिल से बरमा भारत से अलग किया गया, और प्रान्तों में नये मन्त्रिमंडल बने। कांग्रेस ने पद लेने से पहले यह वचन लेने पर आग्रह किया कि जब तक कांग्रेस की कार्रवाई विधान के प्रति-कूल न होगी, तब तक गवर्नर अपने विशेष अधिकार न बरतेंगे। अन्त में ब्रिटिश अधिकारियों ने ऐसे वचन दिये और जुलाई में ६ प्रान्तों में कांग्रेसी मन्त्रिमंडल स्थापित हुए। कांग्रेस ने अपने सब मन्त्रि-मंडलों के नियन्त्रण और पथ-प्रदर्शन के लिए सर्वश्री वल्लभभाई पटेल, राजेन्द्रप्रसाद, और अबुल-कलाम आज़ाद की एक 'नियामक समिति बना दी। पीछे सीमाप्रान्त में भी कांग्रेसी बहुमत हो गया और ३ सितम्बर को वहाँ भी कांग्रेसी मन्त्रि-मंडल बना।

क्रान्तिकारी कैदियों को छोड़ने के प्रश्न पर बिहार और युक्तप्रान्त के मन्त्रियों और गवर्नरों में मतभेद हो गया। इसपर फ़रवरी १९३८ ई० में इन प्रान्तों के मन्त्रिमंडलों ने इस्तीफ़े दे दिये। झगड़ा बढ़ने से पहले गवर्नरों ने ज़िद छोड़ दी और दस दिन में इस्तीफ़े लौटाये गये। जुलाई में मध्यप्रान्त के मन्त्रिमंडल में कुछ आपसी झगड़ा हुआ। उस प्रसंग में प्रधान-मन्त्री खरे ने गवर्नर से कह कर अपने दो साथियों को बरखास्त करा दिया। खरे का आपसी झगड़े में कांग्रेस के पास न जा कर गवर्नर की शरण लेना वैसा ही था, जैसे बाजीराव दूसरे का पूना छोड़ कर बसई भागना। नियामक समिति ने खरे को त्यागपत्र देने और गवर्नर को बरखास्त किये मन्त्री को प्रधान-मन्त्री बनाने को बाधित किया। सितम्बर में आसाम में कांग्रेस का सम्मिलित मन्त्रिमंडल बन

गया। सिन्ध में भी इस बीच काँग्रेसी नीति का बहुत-कुछ अनुसरण करने वाला मन्त्रिमंडल बन चुका था।

नियामक समिति, स्वराजभवन प्रयाग में परामर्श करते हुए

इस बीच रियासती प्रजा में भी जागृति हुई। सन् १९३८ में अनेक रियासतों में प्रजामंडल स्थापित हुए; मैसूर और त्रावंकोर में उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए ज़ोरदार संघर्ष चला; उड़ीसा, राजपूताना, पंजाब और

काठियावाड़ की रियासती प्रजा ने मौलिक अधिकारों के लिए लड़ाई छेड़ी। सन् १९३९ में राजकोट, जयपुर और उड़ीसा की रियासतों की लड़ाइयों ने उग्र रूप धारण किया और हैदराबाद में जनता के मूल धार्मिक अधिकारों के लिए आर्यसमाज ने सत्याग्रह छेड़ा। कश्मीर राज्य की ९१ फ़ी सदी जनता मुसलमान है। सन् १९३१ में वहाँ जनता का आन्दोलन मुस्लिम आन्दोलन के रूप में शुरू हुआ था। १९३९ ई० में वह शुद्ध राष्ट्रीय आन्दोलन बन गया। कुछ राजाओं ने स्वयम् अपने शासनों में प्रजा का सहयोग लिया। इनमें से मालवा के सीतामऊ और महाराष्ट्र के औंध राज्य में पूरा उत्तरदायी शासन स्थापित हो गया है, और औंध में तो प्राचीन भारतीय राज्यसंस्था के नमूने पर ग्रामों के प्रजातन्त्रों की बुनियाद पर समूची राज्यसंस्था खड़ी को जा रही है। हैदराबाद में आर्यसमाज का सत्याग्रह सफलतापूर्वक समाप्त हो चुका है। उड़ीसा की रियासतों से प्रजा को हज़ारों की संख्या में प्रवास करना पड़ा। रियासतों के भीतर की यह कशमकश अभी जारी है।

कांग्रेस ने अपने शासन में किसानों को राहत देने की, नशाबन्दी की तथा प्राथमिक शिक्षा में दस्तकारी को स्थान देने की कोशिशें की हैं। इन कार्यों पर ऐतिहासिक निर्णय देने का समय अभी नहीं आया। पर यह तो प्रकट है कि प्रान्तिक 'स्वशासन' के भीतर ब्रिटिश सरकार से संगठित, नियुक्त और संचालित पुराने भृत्य-वर्ग का ढाँचा बना है। उनकी भारी तनख्वाहों-पेन्शनों के लिए प्रान्तों की परिमित आमदनी का बड़ा अंश गिरवी है। पुलिस की बन्दूकें-संगीनें ब्रिटिश सरकार के कारखानों में बनती हैं। यह भृत्य-वर्ग पिछली शती के भारतीय राज्यों के भीतर ब्रिटिश आश्रित सेना की तरह से प्रान्तिक शासनों का भीतर से नास मार सकता है। ब्रिटिश सरकार की उसके द्वारा प्रान्तिक स्वशासनों का नास मारने की चेष्टा का कम या ज़्यादा होना इसपर निर्भर होगा कि उसके मुकाबले में मन्त्रि-मण्डलों के पीछे जनता की शक्ति कितनी संगठित है और उस शक्ति का उपयोग कितनी बुद्धिमत्ता से किया जाता है।

इससे यह भी प्रकट है कि कांग्रेसी मन्त्री अपने शासन में इस भृत्य-वर्ग की शक्तियों का, ख़ास कर पुलिस और फ़ौज का, जितना कम प्रयोग करते, उतने ही शक्तिशाली बनते जाते। लेकिन मज़हबी फ़िसादों के कारण कांग्रेसी मन्त्रियों को गोरी फ़ौज तक बुलानी पड़ी और उस फ़ौज से जनता पर गोलियाँ तक चलवानी पड़ी हैं। राष्ट्रीय नेताओं ने सोचा कि जनता का ध्यान उसके आर्थिक हिताहित पर केन्द्रित किया जाय, तब वह मजहबी जोश उभाड़ने वालों की असलियत पहचान लेगी। इस कार्यक्रम में आंशिक सफलता ही हुई है, एक तो इस कारण कि अभी तक इस दिशा में पूरी चेष्टा नहीं हुई, और दूसरे इस कारण कि मुस्लिम जनता को अपने आर्थिक हिताहित को देखने में तो समय लगेगा, पर वह अपने प्रति हिन्दुओं द्वारा होने वाले सामाजिक अन्याय को हरदम देखती और अनुभव करती है। हिन्दुओं की सामाजिक संकीर्णता, छूतछात और मनुष्य से मनुष्योचित बरताव न करना, प्रजातन्त्र के बुनियादी सिद्धान्तों के ख़िलाफ़ हैं। जब तक हिन्दुओं की वह संकीर्णता रहेगी, तब तक मुस्लिम जनता को उभाड़ने वालों का कार्य सुगम होगा।

मज़हबी झगड़ों के अलावा किसान और मज़दूर क्रान्तिकारी आन्दोलनों को क़ाबू में रखने के लिए भी कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों ने ब्रिटिश सरकार के दमन-यन्त्र से काम लिया है, या उन्हें लेना पड़ा है। यह किस अंश तक गान्धीजी के अनुयायियों के अधिकार-मद के कारण हुआ और किस अंश तक उग्रपन्थियों की ग़ैरज़िम्मेदारी के कारण, इस दोष का बँटवारा करने का समय अभी नहीं आया है।

सन् १९१९ में बिल्कुल कुचला गया जर्मन राष्ट्र इधर फिर शक्तिशाली हो उठा है, और गत ४ सितम्बर से ब्रिटेन और फ्रान्स का उससे फिर युद्ध ठन गया है। ब्रिटिश सरकार ने युद्ध शुरू होने से पहले ही एक तरफ़ मिस्र और इराक में और दूसरी तरफ़ सिंगापुर में अपने साम्राज्य के बचाव के लिए भारतीय सेना को भेज दिया, और फिर भारत और जर्मनी के बीच भी युद्ध घोषित कर दिया। इन घटनाओं के प्रतिवाद में कांग्रेसी मन्त्रि-

मण्डलों ने पदत्याग कर दिया और गवर्नरों ने प्रान्तों का शासन अपने हाथों में ले लिया है। भविष्य संकटपूर्ण जान पड़ता है।

§ १७. **सिंहावलोकन**—हमने देखा है कि मध्य काल में भारतीय राष्ट्र को एक मोहनिद्रा-सी आ घेरती है और जिन भारतीय राजनेताओं को सोलहवीं-सत्रहवीं शतियों में युरोपियन नाविकों और जलडकैतों का तथा अठारहवां-उन्नीसवीं शतियां में युरोपियन योद्धाओं और राजनेताओं का सामना करना पड़ा, वे बहुत कुछ अपनी परिस्थिति को न समझ सकने के कारण—उस मोहनिद्रा में पड़े रहने के कारण—ही हारते रहे। उसी मोह-निद्रा के कारण भारतीय जनता अपनी सामूहिक शक्ति को न पहचानती रही, और मुट्ठी भर विदेशियों से पद-दलित होती रही। क्या आज हम उस नींद से जाग उठे हैं?

इसमें सन्देह नहीं कि पिछले ४० बरस की घटनाओं पर जब हम विचार करते हैं, तो हमें अपना राष्ट्र बराबर उन्नति-दिशा में चलता—एक नव जागरण की घाटी में से गुजरता, या एक नये जन्म की वेदनाएँ अनुभव करता—जान पड़ता है। भारतीय जनता अब अपने सामूहिक हित को सोचने-समझने और अपनी सामूहिक इच्छा को व्यक्त करने लगी है। वह स्वतन्त्रता चाहती है, यह पिछले बीस बरस की घटनाओं से प्रकट है। किन्तु क्या वह स्वतन्त्रता पा भी सकती है?

सामूहिक इच्छा का सामूहिक शक्ति के रूप में परिणत होना जनता के जागृत और संगठित होने की मात्रा पर निर्भर है। इसमें सन्देह नहीं कि पिछले ४० बरसों में हमारे राष्ट्र को साहित्य, विज्ञान, कला और शिल्प-सम्बन्धी जागृति बराबर बढ़ रही है। भौतिक और सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में तथा साहित्य, कला और शिल्प के क्षेत्र में अनेक ऊँची कृतियाँ इस अरसे में पैदा हुई हैं। पर हमारी जनता के भीतर उनकी ज्योति किस हद तक पहुँची है?

जनता तक ज्ञान की जागृति उसी अंश तक पहुँचेगी जिस अंश तक वह ज्ञान जनता की भाषा में होगा। यदि हमारे राष्ट्र के कुछ लोगों ने ऊँचा ज्ञान

पा लिया है, पर उसे वे अँगरेज़ी में ही कहते-लिखते हैं, तो उसका स्थायी लाभ अँगरेज़ी-भाषी राष्ट्रों की सन्तान को ही होगा। हमारी राष्ट्रीय जागृति का यह एक अच्छा पैमाना है कि पिछले सवा दो बरस के कांग्रेसी शासन में भी न केवल सरकारी काम-काज का प्रत्युत हमारे युवक-युवतियों की शिक्षा का भी वाहन अँगरेज़ी ही बनी रही ?

यह अवस्था कुछ निराशाजनक है, तो भी इसमें सन्देह नहीं कि आज हम पहले से अधिक जागृत हैं और हमारे बीच ऐसे लोगों की संख्या बराबर बढ़ रही है जो जागृत आँखों से अपने चौगिर्द के भौतिक और सामाजिक जगत् को देखने-समझने और उनके विषय में स्वतन्त्र चिन्तन करने लगे हैं। अपने राष्ट्र की अतीत और विद्यमान परिस्थिति को समझने का वैसा ही एक विनम्र प्रयत्न यह "इतिहास-प्रवेश" भी है।

अनुक्रमणी

[संकेत—नीचे लिखे अक्षर उनके सामने दिये हुए शब्दों के लिए प्रयुक्त हुए हैं; बिना निर्देश की संख्याएँ पृष्ठों की द्योतक हैं।]

उ उत्तर, उत्तरी ;
गि पर्वत, पर्वत-शृंखला ;
दे देश, जनपद, प्रान्त, ज़िला, राष्ट्र, राज्य ;
प पच्छिम, पच्छिमी;
ब बस्ती, गाँव, शहर, किला, बन्दरगाह;
ज जाति, वंश, जन आदि ;
द दक्खिन, दक्खिनी ;
न नदी, उसकी घाटी या काँठा;
पू पूरब, पूरबी;
बो बोली, भाषा, लिपि, वर्णमाला ;
रा राजा, रानी;

अकबर रा ३४२-५, ३४७-५७, ३६०-१, ३६४, ४१६, ४८२, ४८८
" शाहज़ादा ३७८, ३८७-६, ३६५
" खाँ ५३६, ५४६
" नामा ३५६
अकमल ३७७-८, ४८३
अकाली ६४४
अकोला ३८१, ३८३
अक्कल ३८२, ३८४, ३८६
अक्काद ब २८
अक्षपाद गौतम १३४
अंकोर थोम ब १२, १२७, २३८
अंकोर वाट २३८
अग्निमित्र रा १०७
अंग दे ४०-२, ५१-२, ६१, २०५
अंगद, गुरु ३५७
अँगरेज़ी बो ४६१-२, ५३४, ६६५
" शिक्षा ६०६
अच्युतदेव रा ३३७, ३४४
अज रा ११५
" उदयी रा ६१
अजन्ता गि १७२, १७४, १८५, २३०
" घाट ५०२
अजमेर ब १३, २२०-१, २३५-६, २४३-४, २५३, २७०, २८३,

२६०, २६२, ३२५, ३२६, ३३५-६, ३४४, ३५१, ३६२, ३६५, ३७३, ३८६-७, ३६५, ४००-१, ४०३, ४०५, ४०७, ४१५, ४१८, ४२८, ४४६, ४७७, ४८४, ५०६-७, ५०७

अजय न ६३५

" राज रा २२०

अजातशत्रु रा ५६-८, ६१, ७१

अजितसिंह रा ३८६-७, ३६५, ४००, ४०३-७

अजीजुद्दीन ५४४, ५६१

अजीतसिंह ६२६, ६२८, ६४७

,, सिन्धनवाला ५४४

अजीमुल्ला ५६५-६, ५७३

अज्जा, झाला ३२४

अटक व २०४, २११, ३३६, ३७७-८ ४०६, ५११ ; न २१०, ४४०, ४५३, ५२४, ५४८ ; दे १०, ५०६, ५५३

अडयार न ४२६

अढ़ाई दिन का झोंपड़ा २३५-६

अणहिलपाटन (अणहिलवाड़ा) व २०६-७, २१८, २२०, २६५, २७०, २८६, २६२

अंडमान दे ५६७

अतरसिंह ५४३

अतलान्तिक सागर २६८

अतलादेवी मस्जिद् २८४, ३१३

अतिला रा १५५

अतिशा (दीपंकर श्रीज्ञान) २१८, २२३, २३५-६

अथर्ववेद ४४

अदाली सूर रा ३४२-३,

अदीनाबेग ४२८, ४३५, ४४०, ४४३

,, मस्जिद ३१३

अद्वैताचार्य ३०६, ३११

अनगुंडी ब ३६

अनंगपाल रा १५२-३, २२०

अनन्तपुर दे ४५६, ५२६

अनन्तवर्मा चोडगंग रा २५१

अनवरुद्दीन ४२२, ४२६

अनु रा ३०

अनुराधपुर ब ६३, ६७

अनुरुद्ध शाक्य ६६

अनूप २६६

,, शहर ब ४४५, ४६७

अन्तलिखित रा १०६

अन्तर्वेद (दी) दे १०, १५, ३२, १४७, १५१, १६१, १७८, १६७, २०४, २१२, २१६, २४८, ३२४, ३२८, ४१५, ५०६, ५६७, ५६६-७०

अन्ताजी माणकेश्वर ४३७-८

अन्दिजान ब ३१६
अपरान्त दे १४६
अप्पा साहब भोंसले रा ५१७-२०
अफ़गानिस्तान दे १, ७-८, ११, १४, ५८, १०५, १०८, ११५, १२०, १२८, १३६, १५६-७, १७२, १८३, १९३, २१३, २१७-८, २३४, २४८, २५०, २५३, २५९, २६१, २८१, ४२५, ४५३, ४९९, ५०८-११ ५२५, ५३८, ५४१-२ ५४५-६ ५४८, ५८८, ५९२., ६००-१, ६०५-८ ६१३-५ ६४०, ६४६
अफ़ज़लख़ान ३६४
अफ़रीदी ज ३७७, ६१५
,, तीराह दे ६१५
अफ़ीम युद्ध ६००
अबीसीनिया दे २९७, ६००
अबुल कलाम आज़ाद ६३१, ६६०-१
,, फ़ज़्ल ३५२, ३५६
अबूबक्र १९२
अबोर ज ६३०
अब्दाली तैमूरशाह, देखिये तैमूर
,, अहमदशाह रा ४२५-८, ४३५, ४३७-४०, ४४२, ४४४-९, ४५१-३, ४७६, ४८४
अब्दुल ग़फ़ूर ५१९
अब्दुल गफ़्फ़ारख़ाँ ६५१, ६५६
,, रहमान रा ६०७-८, ६१३, ६१५-६
अब्दुल्ला उज्बग ३५४-५
,, कुतुबशाह रा ३६२, ३६९
,, सैयद—४०१, ४०४, ४०६
अब्बास (१म) रा ३६२
" (२य) रा ३६४
,, तैयबजी ६५२
अब्दुस्समद ३५६, ४०३-४
अभयसिंह रा ४०३, ४११, ४१३, ४२३-४
अभिधम्मपिटक ७३
अभिनव भारत समिति ६२४
अभिसार दे ८३
अमभरा ब ४११
अमरकंटक गि ३६
,, कोश १३४
,, दास, गुरु ३४५, ३५७
,, सिंह १३४
,, ,, ४५३
,, " राणा रा ३५८,
,, " थापा ५१३-५
अमरावती-स्तूप १७१
अमानुल्ला अमीर रा ६४०, ६४६
अमीर अली ६४६
,, ख़ाँ ३७८, ५०७-८, ५१५

अमीर सिन्ध के ५०६, ५४२
अमृतसर ब ३५७, ४१४, ४२८, ४५४, ४८४, ५२३, ५०७, ५४४, ५५८, ६३४, ६३८-६
" कांग्रेस ६४०
अमेरिका दे ६, २६८-६, ३५४, ३६२, ३६८, ४०६, ४३६, ४६४, ४७०, ४७३, ५६०, ५६०, ६०४, ६२०, ६३०, ६३२-३, ६३५
,, , दक्खिनी ३३०, ३६६
अमोघवर्ष, शर्व रा २०२
अम्बपाली गणिका य ७१-२
अम्बाप्रसाद, सूफ़ी ६२८
अम्बाला दे १००, ५१०; ब २२०, ३२५, ५५१, ५५४, ५६६, ५६८, ५७२, ६०५
अय, देखिये अज
अयोध्या ब ५१, १०६-७, १२१, ५८३
,, (स्याम) ३०५
अरगन्दाब न ८७
अरगून ज ३२१
अरनाला द्वीप ४७२
अरबी बो १६८, २८१
अरब दे. ५६, १६१-२, १६६-७ ५६७, ६३१, ६४१
अरसक रा १०५
अरबी पाशा ६०८
अरविन्द घोष ६२४
अरखुती न ८७
अराकान दे २५८, ३६०, ३७३, ३७५, ५२१-२, ५६३
अराकानी ज ३७५, ५२१
अराल सागर ३२०
अरिक्किण ब १४८, १५१
अर्जुन ३६
,, देव, गुरु ३५६-७, ४६१
अर्थशास्त्र, कौटिलीय ६०,
अर्धमागधी बो ७४
अर्विन, लार्ड ६४७. ६५४-५
अलक्सान्दर रा ८०-१ १०५, १६४, २८१
अलक्सान्द्रिया ब १६७, १७५
अलपृतगीन रा २०८
अल्बेरूनी २१३
अलमोड़ा ब ३६५, ५१५
अलवर दे २५० ब ५०४, ५८४
अलाउद्दीन २४२
" खिलजी रा २६३-८, २७७, २८२-३, ३०२, ३२६, ४५६
" बहमनी रा २६१
" लोदी ३२१
" हुसेनशाह देखिये हुसेनशाह बंगाली

अलार ५२३
अली १६२
" अहमद सिहोकी ६३४
" गढ व ५०२-४, ६०६
" गौहर, देखिये शाहआलम
" नक़ी खाँ ५६५-६, ५७०
" मुहम्मद ४२५-७
" मेच २४६
" बहादुर ५८१, ५८३
" वर्दी ख़ाँ ४२२-३, ४३७, ४३९
" वाल व ५५७
" शाँग न २०१
अलोर व १९५, २०६
अल्जीरिया दे ६०४
अवध दे १०, ३२-३, ७४, २२४, २४३-४, २४८, २५१, २७४, ३२३, ३२६, ३३३, ३५१, ४१४, ४२२, ४२५, ४२८, ४३३-४, ४४४, ४४८, ४५०, ४५७-८, ४६८-९, ४७३, ४७७, ४८०, ४९७, ४९९, ५००, ५२७, ५३१, ५६७, ५६९, ५७७, ५७९-१, ५८३-४, ६५५
अवनीन्द्रनाथ, देखिये ठाकुर अवनीन्द्रनाथ
अवन्ति दे ३८, ४१, ५१-३, ५५-७, ६१, १४३, १५८
" वर्मा मौखरि रा १७८, १८१
अवन्तिवर्मा उत्पल रा २०३, २२५
अंशुवर्मा रा १८८, १९०
अशोक रा ७३, ८८-९०, ९५-१००, १०२, १०४-५, १११, ११९, १२२, १२६, १४७, २२०, २७६, ५९१-२
अश्वघोष १२१-२, १३४, १४४, १६४, १६८
अश्मक दे ५०-१, ५५, ६१
अश्वमेध १३०, १४३, १४९, १८१
अष्टप्रधान ३७८, ३८८-९
अष्टाध्यायी ७९, १३३
असई व ५०४
असहयोग ५९२, ६४१-२, ६४४, ६४६
असामिया बो १४-५, ३१४
असीरगढ व १८०, ३५५, ४०५, ४४३, ५०४
असेना न १८८
अस्करी ३३०
अहमद २९४
,, बंगश, देखिये बंगश, अहमद
" शाह अब्दाली, देखिये अब्दाली
,, ,, रा ४२५-७, ४३४
,, ,, गुजराती रा २८५-६, २८९, ३११
,, ,, बहमनी रा २८८-९, २९१
,, ,, मौलवी ५६५, ५६९, ५८०-१, ५८३

अहमद शेरवानी, तसद्दुक ६५६
" नगर व ३७०, ३७५, ३६४, ४११, ४३१, ४४३, ५०३, ५१८; दे २८६, २६४, ३१८, ३३०, ३४४, ३४६, ३४६, ३५१, ३५५, ३६०, ३६४
अहमदाबाद व २६४, २८६, ३५७, ३६२, ४२५, ४७१, ४७३, ६३७-८, ६५१
" कांग्रेस ६४३
अहल्याबाई रा ४६१, ४७६
अहसानशाह, जलालउद्दीन रा २७५
अहिच्छत्रा व ३३, १०७
अहोम ज २६०, २६८, ३०७, ३११, ३१४, ३६०, ३७२
आईने-अकबरी ३५६
आउटराम, सर जेम्स ५४६, ५७८-८०
आकर दे १४३
आकलैंड, लार्ड ५४०, ५४२, ५४७, ५६१
आक्टरलोनी, डेविड ५०३, ५०६, ५१०, ५१२-५
आगरखाँ ३७८
आगरा न २६०, २६६, ३१६, ३२१, ३२३-५, ३२७-८, ३३३-४, ३३८-६, ३४२-३, ३४७, ३५५-७, ३६२-३, ३७०-२, ३७६, ३८४, ३६४, ३६६, ४०१, ४०५, ४१३-५, ४२२, ४२८, ४३८, ४४०, ४४३, ४४६, ४४६, ४५२, ५०२-४, ५०६, ५१७, ५२७, ५३३, ५३५, ५७०, ५८२
आगाखाँ ६२६, ६३१, ६४६
आग्नेय ज १६, ६८, १२६, २३८, २६०, ५२१
आंग्रे ज ४३६
आंग्रे, कान्होजी ४०३, ४०६, ४१६
आज़म, शाहजादा ३८७, ३६५, ४००
" गढ़ व ३२५-६, ५८०
" शाह, गयास, देखिये गयास आज़मशाह
आज्ञापत्र ४८४
आड़ावला, (अरवली) गि ३, १३, ३८७
आंडाल, कवयित्री ३१४
आत्रेय व ५५, ७८
आदित्यवर्धन रा १७८
,, वर्मा रा १७८
,, सेन रा १७८, १८१
आदिनाथ मन्दिर २२६
आदिल, देखिये अदाली सूर
,, शाह ज ३१८

आदिल अली रा ३७४, ३८१
,, इस्माइल रा ३१८
आनन्दपाल रा २१०-१
आनन्दपुर ब ३६७
आनन्द मठ ६११
आनन्दराव गायकवाड़ रा ५०१
आनन्द शाक्य ६६, ७१-२
आना रा २२०
आनाम दे १२, १६७, ३०५
आन्ध्र दे ५०-२, ५५, ८७-६, ६१, १०४, १४१, १४४, १४७, १७०, १७६, १८४-५, २२३, २५४-८, २६३, ४३५, ४३७, ४३६-४१, ४५४, ४५७, ४६२, ४७५, ४८२, ४८८, ५२६, ६२६; ज ५७२
आफ्रिका दे १२८, १६६, २६७, २६६, ४०६, ४२१, ५६०, ६०४, ६३१
,, उ ६७, ६२६
,, द ६२२, ६२६
आबिदख़ाँ ४५२-३
आबू गि ब ३, २२६-७, २४२, २६०, ३३५-६, ३४४, ३८६
आभीर ज १४१, १४८, १५१
,, ईश्वरसेन, देखिये ईश्वरसेन
आमू न ८, ११, १४, ५६, ८१, १०५, ११८, २०६, २११, २१८, २५६, ३०१, ३१६-२०, ३५३, ६८०, ६१३
आमूर न १११
आमेर दे ३४४, ४००
आम्भीयर, ५६०
आम्बूर ब ४२६
आम्बेर ब ३१६, ३३५
आम्भिरा ८१,८३, १६४
आयरकूट ४४२-३, ४७३
आयुर्वेद ५५
आयूबख़ाँ ६०८
आरकाट ब ४२६-३२, ४३६-४२, ४८०, ५२६, ५२८, ५६०
आरगाँव ब ५०४
आरा ब ५७८
आरामशाह रा २४७
आर्कराइट ४६३
आर्जुनायन ज १४८, १५१
आर्मीनिया दे १८
आर्य ज १७-८, २०-१, २७-६, १११, ११६, १३०, १३३, १७५, २०६, २३८, ३१६, ४६३, ४६२, ५६२
,, बो १५-७, १६-२०, ३०७
,, भट १७४
,, समाज ६६२

आर्यावर्त दे ३०, ४१-३, ५६, ५८, १३०, १५४, २२०
आर्यावर्त्ती बो ४८२
आलबुकर्क २६६
आलमगीर, देखिये औरंगज़ेब
„ (२य) रा ४३४, ४४४
आलमीदा २६६
आलासिंह ४३८, ४४८, ४५३
आलिम अली ४०५
आवा ब ५२२
आँवला ब ४२५, ४२७
आशा अन्तरीप २६८, ३६६, ५११ ६२२
आशापल्ली, देखिये आसावल
आश्रित सन्धि ४८१, ४६६, ५०१, ५०५
आसंग १६६
आसादख़ाँ ३८६-६०
आसफ़ख़ाँ ३४५, ३५६
आसफुद्दौला ४६७
आसाम दे ३, १०, १५, १८, ११८, १८२, २०२, २५८, २६०, २६२, २६६, ३०७, ३११, ३१४, ३४६, ३६०, ३७२, ३७५, ३७७, ३८५, ५२१-२, ५८६-६०, ५६६, ६२६-३०, ६५६-६०
आसावल ब २६४, २८६
आष्टी ब ५१८
इक्ष्वाकु ज ३०, १४१-२, १४४, १७०
” रा ३०, ३३, ४४
इंग्लैंड दे ३६१, ३६७, ४०६, ४१६, ४२८-६, ४३६, ४४१-२, ४५८, ४६३-५, ४६८, ४७०, ४७३-५, ४६२-५, ५०८, ५१२, ५३६-८, ५६०, ५६४, ५७६, ५८६, ५८८-६०, ५६३, ५६५-६, ५६८, ६००, ६०४-५, ६०८-६, ६१५-८, ६२१, ६२३, ६२६, ६२८, ६३५, ६४०, ६४३
इंग्लिश चैनल ६३१
इ-चिङ् २३४
इजियन सागर ३१८
इटली दे २५५, २६७, ४६२-३, ६०४, ६१३, ६२६
इटालियन ज ४६४-५
इटावा ब २४३, ४१४, ४२७, ४४५, ४४८, ५२७, ५७६
इंडियन पिनल कोड ५३४
इर्तिंश न ६८, ५३६
इस्तिकाद खां ३८६-६०
इन्तिज़ामुद्दौला ४३३-४
इन्दरपत, देखिये इन्द्रप्रस्थ

इन्दौर ब ४११, ४४०, ५०५, ५७०, ६३७; दे ४५१, ५१०
इन्द्र (देवता) ४७-८, १३२
इन्द्रप्रस्थ ब ३६, ४१-२, ३४०
इन्द्रराज राठोड़ या इन्द्र नित्यवर्ष रा २०४, २०७
इब्न अब्दुल वहाब ५६७
इन्द्रायुध रा २०१
इब्राहीम गार्दी ४४२, ४४८
" लोदी रा ३१६, ३२१-३
" शाह शर्की रा २८४
इमादशाह रा ३१८
" या इमादुल्मुल्क ४३३-५, ४३७-८, ४४४, ४४६
इराक़ दे २५७, ६३१-२, ६६३
इरावती न ११-२, ५२१, ६१४
इरिच ब ३६३
इलाहाबाद ब १४७, २६३, ३५१, ३५५-६, ३७३, ४०१, ४०५, ४०७, ४२२, ४२८, ४५७-८, ४६१, ४६१, ५२७, ५६६-७०, ५६२-४, ५८०, ५६२
इलिचपुर ब २६३-४, २६६, ५०४
इलियास शाह बंगाली रा २७५, २७७, २८३-४, ३११
" शाही वंश २६४
इली न ६००
इल्तुतमिश रा २४७-५१, २५३, २५७, २७०
इल्बर्ट ६१३
इस्ताम्बूल ब १२६, ६३३
इस्तोनिया दे ६४०
इस्माइलशाह रा ३२०
इस्लाम १६१-२, २०८, २२५, २३७, २६१, २६७, ३०३, ३०५, ३०६-७, ३११, ३२१, ३५१, ३५३, ३६२, ६४१
इस्लामशाह सूर रा ३३६, ३४१-२
ईडर दे २८५, २६२, ३२५, ५६१, ६१६
ईरान दे १७, २७, ४६, ५८-६, ८१, १०५, ११५, १३३, १४३, १५४-५, १५७, १६०, १७५, १८५, १६२-३, १६८, २०६, २१३, २१८, २५६, २५६, २७६, २८१, २६१, ३०८, ३१८, ३२०, ३४२, ३५६, ३६२, ३८६, ४०१, ४०८, ४१६, ४६६, ५००, ५०८-६, ५२३, ५३६, ५४०-१, ५६५, ५६६, ५७३, ५८८, ६०१, ६०४, ६२२, ६२४, ६२६, ६२८, ६३१-२, ६४०, ६४६

ईरान की खाड़ी ५८, २५६-७ ३६८-६, ५४०, ६२२
ईरानी ज ३७, १३३, १७६, १६८, २०८-६, ३२३, ३५७, ३६६, ४१८, ५०६, ६२८;
,, बो ६०, ५६२
ईश्वरकृष्ण १७४
ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ५६३, ६०६
ईश्वरवर्मा रा १७८-६
ईश्वरसेन आभीर रा १४१
ईश्वरीसिंह रा ४२३
ईशानवर्मा रा १७८-६, १८६
ईसा ६८
ईसाई मत २६१, ३१५, ३५१, ३६१
ईसाबेला रा २६८-६
ईस्ट इंडियन रेलवे ६३५
ईस्ट इंडिया कम्पनी, देखिये कम्पनी
उग्रसेन रा ३६
उच्च ब २०७, २१०, २४२, २४६, २५१, २५३, २७०, २८१, ३०२
उज़बक २५२
उज्जयिनी, देखिये उज्जैन दे
उज्जैन दे ३८, ४१, ५२-३, ५५, ६३, ८८-६०, ११०, ११३-५, १२३, १५१, २४६, २६३, २७०, ३१६, ३२८-६, ३६५, ३७२, ३८५ ४८४-६
उज़्बग ज ३१६-२०, ३२५, ३४६, ३५४, ३६४
उड़िया बो १५-६, २०
उड़ीसा दे ४, ५, १३, १८, ८६, १००, १३५, १५६, १८३, २००, २०२, २१६, २२२, २३१, २५०, २५३, २५७-८, २६६, २७७-८, २८८, २६१, २६४, २६६, ३०४, ३१७, ३२५, ३३७, ३४६, ३४८, ३५१, ३५५, ३६८, ४२२-३, ४५७, ४८८, ५०२, ५०४, ५६४, ६२६, ६५६, ६६१-२
उणियारा ब १४३
उत्कल, देखिये उड़ीसा
उत्तर पच्छिमी सीमान्त १८८
उत्तर भारत १२४, १४१ १५३, १५८, १७७, १८७, २०१-२, २१२, २१७, २१६, २४६, ३२७, ४८०, ४६१, ४६७, ५०१, ५०४, ५१७, ५२६, ५३१, ५६७, ६२४, ६२६
उत्तरापथ दे ८६, ६०, १०४-६, ११६, १५२, १८१-२
उत्तरी सरकार दे ४३५, ५२६, ५२८

उत्पल ज २०३
उद्भांडपुर ब २०४
उदयगिरि गि १५१-२, १७२, २६२-३, ३१७, ३२५, ३६८, ३८३
उदयन रा ५३, ५६-७
उदयपुर २२६, ३४४, ३६५, ३८६-७, ४१४, ४१८, ४२३
उदयभान रा ३६३
उदयसिंह रा २६०
,, रा ३३४, ३४४, ३४६-७, ३४६
उदयादित्य रा २१६, २२६, २३१
उदयेश्वर मन्दिर २२६
उदाजी पँवार ४०६, ४११, ४१७
उदगीर ब ३६५, ३६८, ४४२, ४४५
उद्दंडपुर ब २०६, २४४
उधुआ नाला ब ४५७, ४८६
उपगुप्त १७८
उपप्लव्य ब ४२
उपरला-हिन्द दे ११८-२०, १२२-३, १२६, १२८, १६५, १६८, १८३, १६६, २३०
उपालि ६६
उप्टन ४६६
उफ्रातु (फरात) न ६०
उमर १६२-३
उमरकोट ब ३३५
उमरशेख ३१६
उमाबाई दाभाडे ४१२, ४२४
उरगपुर ब १२४, १५१
उरशा दे १५७, २०४, २०६
उरैपुर ब १२४, २५४
उर्दू बो १५, ४८२, ४८६
,, कविता ४८२
उलूगखाँ खिलजी २६४
उवक्ष दे ६०
उपवदात ११३, १३७, १३६
उस्मान १६२
ऋक संहिता ग्र ४४
ऋषिक ज १११-२, ११८-६, १२१, १२३, १२६, १४१, १५५, १६५
ऋक्ष गि ४१
एकलिंग २४६
एडवर्ड (७ म) रा ६२८
एडवर्ड पाजेट (जंगी लाट) ५२२
एडवर्ड्स ५६१-२
एरन ब १४८, १५७
एलामजै गि ४
एलिजाबेथ रा ३६१
एलदोज़, ताजुद्दीन २४७-८
एलिनबरो ५४७-५३, ५५१, ५६४
एलोर ज़िला दे ४३५
एलोरा, देखिये वेरूल

एलिगन ५६५, ६००, ६१५, ६१८,
एल्फिन्स्टन, माउण्ट स्टुअर्ट ५०६, ५११
५१७-८, ५२६-७, ५३०-३१,
५३४, ५७७
एवुक्रतिद् रा १०८
एशिया दे, ६, १८, ५८-६, ८७,
२५६, ६०४, ६२४
" उत्तर-पूरबी २४८
" मध्य ६७, १०५, १११, १४३,
१४५, १५४-५, १५७, १६०,
१६८, १७६, १८८, १९३, १९६,
२०८-९, २५६, ३१९-२०,
५३६-७, ५४२, ५६४, ६०५
" पच्छिमी ६७-८, १०५, १२८,
२०८, २१८, २५६, २८१
एशियाटिक सोसाइटी आव बंगाल
४६६, ५६१
ऐंग्लो-सैक्सन ज ४६३
ऐन्स्लेस्ले ३६६
ऐबक, देखिये कुतुबुद्दीन ऐबक
ऐबट ५६१-२
ऐम्हर्स्ट ५२१
ऐयनि (ईरान) दे ५८, ६०
ऐल ज ३०
ओखोत्सक समुद्र ५३६
ओगोताई रा २५६, २६१
ओडू दे २०२, २०६
ओबेदखाँ ५००
ओमन दे ६२२
ओरंगल २२२, २५४, २६६, २६८-७१,
२७३, २७५, २७६, २८६,
२६२
ओरछा दे ३५६, ३६२-३, ५८०
ओरांज दे ६२२
ओरांव जा ३७
ओरेइत दे ८२
ओर्मुज़ ब २५६, २६६
ओलन्देज़ ज ३६१-२, ३६६, ३६६,
४१६, ४६१, ५४१, ६२२
ओहिन्द ब २०३-४, २०६-७,
२०६-१०
औंध राज्य ६६२
औरंगज़ेब रा ३६३-४, ३६६-७०,
३७२-४, ३७६-६, ३८४-६४,
३६६-४०२, ४०६, ४२२, ४८२,
४८८-६, ४६२
औरंगाबाद ब ३८३, ३८८, ४०५,
४१०, ४३०-२, ४८२, ५०३
औसा ब ३६८, ३८३, ४४२
कंग रा १४६
कंस रा ३६
कचीन दे ६१५
कच्छ दे १२-३; १२३, १६५, २१२,
२७१, २६५, ३७२, ५२१

कटक (वाराणसी-कटक) ब २७८, ३४८, ५०४, ५३२
कटवा ब ४२२
कटासराज ब १४५
कटेहर ब २५२-३, ४२५
कटोच दे ५१०, ५१२
कठ दे ८४
कडप दे ३६१, ४३६, ४३६, ५२६
कड़ा मानिकपुर ब २६३-४, २६८, २७१, २७८, ३४५, ४६८
कणाद १३४
कण्णनूर ब २५५, २६७, २७५
कण्व ३१-२
कछार दे ३४६, ५२१-२, ५३५
कनाडा दे १४१, २५६, ३७५, ३८१, ४५६, ५२६, ६५२
" ज २२०
" (उत्तरी अमेरिका) ६३०
कनाडी (कन्नड) बो २०, ३१४, ३६७
कनिंगहाम ६११
कनिष्क, देवपुत्र रा १२१-२, १२६, १३३, १३७
कन्ताजी कदमबन्दे ४१०
कन्तित, देखिये कान्तिपुरी
कन्दहार दे ब ११, ८७, ११५-६, २६६, ३२०-१, ३२८, ३३६, ३४२, ३५५, ३५७, ३६२, ३६४-६, ३६८-६, ३७७-८, ४०८, ४१६-७, ४२५, ४८४, ५०५, ५०८, ५२४-५, ५३६, ५४२, ५४६-७, ६०१, ६०७-८
कन्नौज दे ब १७७, १७६-८०, १८२-३, १८८, १६०, १६५-६, १६६, २०१-४, २०७, २०६-१०, २१२, २१८-६, २२१, २२५, २३६, २४३-४, २४७-८, २७३, २८४, २६४, ३२३, ३२६, ३३४, ३६३, ४८२
कन्याकुमारी १७५, ४३०
कपिल ७८-६
कपिलवास्तु ब ५५, ५७, ६५, ६८-६, ७१, १६८
कपिलेन्द्र रा २६१, २६३
कपिश दे १०२, १२०, १८८, ३२०
कबीर ३०६, ३५७
कमरुद्दीन ४०६, ४१३-४, ४१७, ४२५, ४३३
कमलनयन ५०७
कमलाकर भट्ट ३०८

कमलावती रा ३८५, ४८४
कमालपाशा, मुस्तफ़ा ६४५-६
कम्पन २७४-५
कम्पनी, ईस्ट इंडिया ३६१, ३६७, ४१६, ४५७, ४७५, ४८७, ४९१-३, ४९५, ५०१, ५०६, ५११-२, ५१८, ५२७ ५२६, ५३३-४, ५४७, ५६३, ५६६, ५७०, ५८३-५, ५८८-९०, ५९३-४, ५९८
कम्बन् (तामिल कवि) ३१४
कम्बु, महर्षि २३८
कम्बुज (कम्बोदिया) दे २०, १२७, २३८, २६०, ३०५
कम्बोज दे ५१, ५५, ५९, ८९-८, ९०-१, ९७-९, १११-२, ११८-२०, १७५
" ज २०२, २०४-५
करंजा व ३३०
करण, राणा ३५८
करतोया न २४६
कराची व ११, ६४२, ६५५
करिकाल रा १२४
करी ५६१-२
करेन्स्की ६३२
करोड़ व १२१
कर्कोट ज १८८, २०३
कर्कोटनगर व १४३
कर्जन, लार्ड ६१५, ६२१-४, ६२६
कर्ण रा ३९-४०, ४२
" सोलंकी (करण घेलो) रा २६५-६, ३०२
" कलचुरि रा २१८-९, २२१
कर्णाट ज २२१, २५८, २७१, २७८
कर्णाटक दे ५, १३-४, ८७-८, १४१, १४४, १४६, १४९, १५९, १७७, २००, २०३-४, २०७, २१७, २१९-२०, २२५, २५४-५, २७१, २७५, ३५५, ३६०, ३६७, ३६९, ३८४, ३८९, ४०९, ४२०, ४३९, ४५७
कर्त्तारसिंह ६३३-५
कर्तृपुर (कुमाऊँ) दे १४८
कर्नाक ४७२-३
कर्नाल दे ४१८
कर्नूल दे ४३६, ४३९
कर्पूरदेवी रा २२१
कर्मनाशा न ३३३, ४५७, ५२२
कलकत्ता व ३९८, ४३७, ४३९, ४५४, ४५६-८, ४६२, ४६५-६, ४६९, ४७५, ४८९, ५०२, ५०७, ५२१-२, ५३३, ५४३, ५६४-६, ५७०, ५७८-९, ५८८, ५९३, ६०२, ६०५, ६०९, ६१२, ६२१-२,

६२५-६, ६२८-३, ६३३, ६३५, ६४३
" मद्रसा ५३३
" युनिवर्सिटी ५६३
कलचुरि ज २०४
कलबर्गा, देखिये कुलबर्गा
कलात दे १, ८, ११, १६, ८७, ६०१, ६०५
कलानौर ब २७२
कलिंग दे ५, ५०, ६१, ६३, ७४, ९०, ९५, १०४-५, ११६, १४७, १५८, २००, २०२, २०४, २१७
कलुंगर गि ५१३-५
कल्याण ब २२२, ३७०, ३८८
कल्याणसिंह रा ३४५
कल्याणी ब २०६-७, ३८३
कल्हण २३६
कवि बो २३७
कविकुलेश ३८८
कश्यपमातंग १२८
कसूर ब ६३८
कसौली ब ५५१
कश्मीर दे ७, १०, १६, ५५, ९०, ९७, १०२, १२२, १३४, १५७-८, १६३-४, १६८, १८१-२, १८७, १८९, १९४, १९६, २०२-३, २०६, २१०-२, २२०, २२५, २३२, २३६, २४०, २५८, २७५, २८७, ३००, ३३३-४, ३३६, ३४१, ३५०-१, ३५४, ३५७, ३८५, ४५२, ४८५, ५१०, ५२४, ५४५, ५५१, ५७५, ६०५, ६१४, ६६२
कश्मीरी बो १५, १६
" ज १९९, २०२, २०४, २०५
काउन्सिल्स एक्ट ६१९
काकतीय ज २२२, २५५
काकेशस गि २८१
काँगड़ा दे ७, २०१, २०४, २११, २८१, ३६०, ५१०, ५१२, ५५९, ५८९
काँग्रेस, इंडियन नेशनल ६१९, ६२६, ६३७, ६३९, ६४१, ६४३, ६४५, ६४८, ६५५, ६५८, ६६०, ६६२
" अमृतसर ६४१
" नागपुर ६४१
" कार्यसमिति ६४२, ६५२-३, ६५६
काज़ार ज ५०८
काञ्चनदेवी रा २२०
काञ्ची ब १२५, १४४, १४६-७, १५१, १८१, १८६, २०१-३, २०६, २५५, ३९९

काञ्जीवरम् ब १२४, ४७२
काटलर ४६१
काठमांडू ब २७४, २७७, ४६०, ५१३, ५१५, ५५६
काठियावाड़ दे ३, ६२, १००, १०६, ११३, १४१, १४५, १४७, १४६, १६६, १७६, २०४, २७१, २७६, ४०५, ५६६, ६६२
कांडी ब २६२
काण्व ज ११३, ११७, १४६
कादम्ब ज १४६, १४६, १५१, १५६, १८१, २००
कानपुर ब ५०२, ५०६, ५२०, ५६६-७०, ५७३-४, ५७७-६, ६५५
कानसू दे ६८, १११, ११८-६, १६८, १८८
कान्तिपुरी ब १४३, १५१
कान्यकुब्ज, देखिये कन्नौज
कान्होजी आंग्रे, देखिये आंग्रे कान्होजी
कापालिक मत २२५
कापिशी ब ५६, १०२, १०८, २८१
काफिरकोट ब २३०-१
काफ़िरिस्तान दे ८, ५६, १०२, २८१, ३२०
काफ़ूर, देखिये मलिक काफ़ूर
काबुल दे ब ८७, ६०, १०२, १०५, ११३, ११५-६, १२०, १४३, १४५, १४६-५१, १५७, १६४, १६७, १७२, १८८-६, १६३, १६७, २०३-४, २०६-७, २०६, २६२, २६६, २७०, २८६, ३१८-२१, ३२७-८, ३३४, ३३६, ३४२, ३४६, ३५१-२, ३५४, ३६२, ३६५, ३७७-८ ४०८, ४१७, ४२८, ४६७, ५०७, ५२४-५, ५३६-४२, ५४५-८, ५६२, ५६६, ६०५-८, ६३५, ६४०
काबुल न ७-८, ११, ३७, १०५, २८१, ३७७, ५२४
काबुलीमल ४५३
कामतापुर ब २६८, २६४, २६६
कामबख़्श ३६०, ४००, ४४४
कामरान ३२८, ३३३-४, ३४२
कामरूप दे १४८, १५१, १७६, १८१-२, १८७, २४६, २५२-३, २५८-६०, २६८, ३५६-६०, ३७२, ३७५, ३७७
कामेश्वर रा २७८, २८३
काम्पिल्य (कँपिल गाँव) ब ३३
कायद्रांगाँव ब २४२
कायमख़ाँ बंगश, देखिये बंगश, कायमख़ाँ

कायलपट्टणम् ब २५६
कारवार ब ३७५, ३८१, ३८३
कार्टराइट ४६३
कार्नवालिस ४७५-६, ४७८-८०, ५०७, ५२६, ५२६, ५३१, ५६८
कार्ले १३५
कालंजर ब २०५-६, २१२, २४५, २५२, २५७-८, ३३६, ३४८, ३६५, ३६६, ५१७
कालपी ब २४५, २५७, २८४-५, २८८, ३१७, ३२६, ३२६, ४०७, ४५१, ५१७-८, ५६६, ५७६, ५८१-२
कालापहाड़ (राजू) ३४८
काला सागर १११, ६३२
कालिदास १०७, १३४, १६८, १७५-६, २३२, ५६३
काली न १६६, ५१५
" कोट ब २६२, २६८
" कुमारी ३७३
" गंडक न ४६०
" सिन्ध न २६०
काल्विन ३६१
कावग्नारी ६०५, ६०७
कावेरी न १३, १२४, १८५, २५४-५, २६७, २६१, ३६४, ३६७, ५६१
कावेरीपट्टनम् ब १२५, १५१
काशगर दे २०८-६, ३१८, ३३३
काशी दे ५१, ५३, ५५-६, ७५, २१८, ४५७, ४७२
" ब २१६, ३०८, ४८४
काश्यप ज ६८
कासिमबाज़ार कोठी ३६८
कास्पियन समुद्र ५६, १११, १२१, १६६, २०६, २११, ६००-१
काहनसिंह ५६१
किऊल न ३३१
किचनर ६२१
किड ३६६
किदार ज १५४, १५७
,, रा १५५, १५७
किनकसोत ब ३१
किनलोच, मेजर ४६०
किरमान दे १६३
किरात ज १८, ६२, ११८, १६४
किर्क पैट्रिक ४६८
किर्त्ती आन्दोलन ६४६
किलकिला न १४४
दे १४४
किशनगढ ब ४१४
किष्किन्धा ब ३६
किष्टवार दे २६२, ५४१
कीटिंग, कर्नल ४६६

कौन, सर जौन ५४२-४
कीर दे २०१, २११, २१८
कीरतपुर ब ३६३
कीर्त्तिलता २७८
कीर्त्तिवर्मा रा २१६, २२१, २२५
कीर्त्तिसिंह रा २७८
कीर्त्तिस्तम्भ २६०, ३०७
कुंगर्य्येकुन २६१
कुँवर सिंह रा ५७८, ५८०
कुंच ब ५८२
कुंडग्राम ब ७४
कुड्डलूर ब २५४, २७०, ४७४
कुलिन्द गण ज १०९-१०
कुत ब ६३२
कुतलग २६५
कुतुब मीनार २४१
कुतुबशाह ज ३१८, ३८२, ३८४, ३८६
" कुली रा ३१८
" गुजराती रा २९०
कुतुबुद्दीन ३५८
" ऐबक २४३, २४५-७
कुनार न ७, १०, ११, ८३, ३२०
कुनाल रा १०२
कुंजपुरा ब ४४७
कुन्तल दे १४६, १४९, १५८
कुन्ती रा ३८-९
कुन्दूज़ न ३२०
कुबलैखान रा २५९-६२, ३०५
कुबाचा, देखिये नासिरुद्दीन कुबाचा
कुभा, देखिये काबुल न
कुमाऊँ दे ७, १४८, १९६, ३४५, ४२७, ४६०, ४७६, ५१५, ५६०, ५८९
कुमारगुप्त (१ म) रा १५३-४, १५६-७, १७४
" (२ य) रा १५७
" (३ य) १७८-९
" १७८, १८१
कुमार जीव १६७-८
" पाल रा २२०
" देवी रा १४६
" विष्णु रा १४४
कुमारायण १६८
कुमारिल २२४
कुम्भलगढ़ ब ३४७, ३४९, ३८६
कुम्भलमेर ब ३८७
कुम्भा राणा २८९, २९०, २९५, ३०७
कुम्भेर गढ़ ४२७, ४३३, ४३४, ४३८
कुरान ४३४
कुराल (कोल्लेरु) १४१
कुरु दे ५१, ५३, ५५, १७१, १८९

कुरु रा ३८
" (Cyrus) रा ५९
कुरुक्षेत्र दे २, १०, १३-४, ३८-९, ४२, १८१, ४४७
कुरैशा ज १६१
कुर्किहार ब २३२
कुर्ग, देखिये कोडुगु
कुर्रम न ७, ११, २०९, ६०५, ६०७, ६१५,
कुलचन्द्र खोकर २७४
कुलपहाड़ ब ४१०
कुलबर्गा बं २७६
कुलशेखर, मारवर्मा रा २५६, २५७, २६०, २६६
" रविवर्मा रा २६७
कुली प्रथा ५९०
कुलोत्तुंग चोल रा २१९
कुल्लू दे ७, २०४
कुवेणी रा ६३
कुशिनार (कुशिनगर) ब ५२-३, ७२-३, १६८
कुषाण कप्स रा ११९-२०
" वंश ज १४५, १४९-५०, १६३, १७२
कुस्तुन्तुनिया ब २६७, ३१५, ३२३, ४६७, ६०६
कूके, देखिये नामधारी
कूचा दे ब १६६, १९८, १८९
कूलम, देखिये कोल्लम
कृतरजस जयवर्धन रा ३०५
कृतविजय रा ३०५
कृष्ण, वासुदेव रा ३९-४०, ७९, १०३, १३२, १५६, ३०८
" (राष्ट्रकूट) रा २००-१
" अकालवर्ष रा २०२, २०४
" गंगा न ८, १३४
" देवराय रा ३१६-८, ३३७
" द्वैपायन, देखिये वेदव्यास
कृष्णप्पा नायक रा २७५, २७९
कृष्णा न ५, १३-४, १४१, १६७, १८५, २५५, २७२, २७९, २८८-९, २९१, २९३, ३१७-८, ३४६, ३६४, ३६७, ३८४, ४२०, ४३०, ४३६, ४५९, ४८९, ५१७, ५६१
" रा ३९
कृष्णागिरि दे ४५९ ४७९
के, जौन ४९३
केकय दे ३३-४, ३७, ८३, १४५
केन न ३ १४३
केपकालोनी दे ५११, ६२२
केरल दे ५, १३, ६१, ६३, ८८, २१७, २२४, २५४-६, ६२५
केशवसेन रा २४५

कैकेयी रा ३३-४
कैकोबाद रा २५४, २६८
कैकोस रा २६८
कैप्टन, देखिये क्राइ तुड्
कैनिंग, लार्ड ५६४, ५६८-९, ५८०, ५६५, ६०२, ६११-२
कैम्बेल, ह्यू कालिन ५७६-८१
कैलाश गि ७
कैलाश मन्दिर (वेरूल) २००-१, २३०
कैलिफ्रोर्निया द ६३०
कैवेंडिश ५३५
कैस टाग दे २५६
कोइटा व ६०५, ६०७, ६१३-४
" नुरकी रेलपथ ६३१
कोंकण दे ५, १४, ६०, ११३, १४६, १६३, २६७, २६१, ३३०, ३६७, ३६६-७०, ३७४-५, ३८१, ३८८-६, ४०३, ४१५-७, ४३६, ४७०-२
कोंगुदेश दे २५४-५
कोच ज २४६
कोच बिहार दे ३३६, ३४६, ३४६, ३५६, ३६५, ३७२, ३७५
कोच्चि (कोचीन) दे २६२, २६६
कोटा रा २७५
" ब ५०५
कोंडपल्ली ब ३१७, ४३५
कोडुगु दे ४७६, ५३५, ५६० ५८६
कोंणार्क ब २५१
कोंडवीडु ब २८६
कोपरगाँव ब ४५४
कोप्पम् ब २१६
कोप्पल ब ३८४
कोमागातामारू ६३०
कोयम्बटूर दे १२४, २५४, ५२६
कोयल दे ५०२-३
कोरकई दे १४
कोरा ब ४५७-८ ४६१, ४६८
कोरिया दे १३३, १६६, १७६
कोरेगाँव ब ४३१, ५१८
कोर्ट ४६५
कोलब्रुक ४६६, ५६१
कोलम्बस २६८-६
कोलरून न ५६१
कोलवन दे ३८१
कोलाबा ब ४१६
कोलाहलपुर ब २००
कोलिय ज ६५
कोली ज ४१३
कोल्लम ब २५६
कोल्हापुर ब ४११; दे ३७४, ३८१, ४०३, ४८८, ५०१, ५७२
कोल्हार ब ७, २००, ३८४

कोवैत ब ६२२
कोशल दे (उ) ३३-४, ३७, ५१,
    ५३, ५५-७, ६१, ७४
" (द) १४४, १४७ १८४, २०१-२
कोसी न ४७६, ५१४
कोहकाफ़ (काकेशस) गि ५३६,
    ६३२, ६४५
कोहाट दे ब ३६५, ३७८, ६०५, ६५६
कोहेनूर हीरा ५११
कौटन, सर आर्थर ५६१
कौटल्य ८६-७, ६०, ६४
कौठार दे १२६, १२८
कौड़ामल रा ४२७
कौण्डिन्य १२६
,, (२ य) १६६
कौतैबा १६६
कौरव ज ३७-८
कौशल्या रा ३३
कौशाम्बी ब ३८, ५०, ५३, ५५, ६१,
    १०७, १४०, १४३, १४७
क्युठंल दे ७
क्रामवेल रा ४६३
क्रा की जलग्रीवा ३०५
क्रान्ति आन्दोलन ६२८, ६४४
,, कारी दल ६२६
क्राम्प्टन ४६३
क्रीमियाँ दे ५६५
क्लाइव ४३०-१, ४३६-६, ४४१,
    ४५७-८, ५२६, ५३३
क्वाङ् तुङ् (कैप्टन) ५४७
खड़की ब ५१८
खड़गसिंह रा ५२५, ५४३
खड़ीबोली बो ७३, ३१४, ४८२
खजवा ब ३७३
खजुराहो ब २०५-६, २३०-१
खटक अफ़ग़ान ज ३७७
खंडगिरि गि १०६
खंडनपुर ब २५५
खंडवा दे ४०५
खंडेराव दाभाड़े, देखिये दाभाड़े खंडेराव
खंडेरी किला ४०६
खदीव ज ५६६, ६०८
खम्भात दे २५६, २६५, ४२५, ४६६
खम्भामेट दे २६३, ३१७
खरे, प्रधानमंत्री ६६०
खर्दा ब ३४८, ४८०-१
खलीफ़ा १६२-५, १६७, २६०,
    ५६७, ६४१, ६४६
खलेस देवर, देखिये कुलशेखर, मारवर्मा
खल्द् ब २८
खांडव बन ३६
खानखाना, अब्दुर्रहीम ३५४, ३५७
खानदेश दे ५, १८०, २७६, २८६,
    ३३०, ३५१, ३५५, ३६४,

३७१, ३६१-२, ४११, ४१५, ४८८, ५१८
खानवा ब ३२४, ३२७-६, ३३४
ख़ानेदौरान समसामुद्दौला ४७७-८, ४१३-४, ४१७-८
खामबाबा १०८
खारवेल रा १०५-७, १३५
खार्तूम ब ६०६
खालसा संगत ३६६, ५२२, ५४४, ५५२-३
खासगीवाला, दादा ५५०-१
खिज्रख़ाँ, सैयद २८७
ख़िज़रख़ाँ खिलजी २६५
ख़िजराबाद ब २६५
खिलजी ज २४६, २५४, २६६, २६०, ३०३
खिलाफ़त १६२, १६६, १६८, २०८, २६०, ६४१-२, ६४५-६
खीरथर गि ११
खीवा दे २४८, ५४२, ६०१
खुदीराम वसु ६२७
खुरासान दे १०५, १६८, २०६, २७३, २७४, ३१८, ३२०, ४१६
खुर्रम शाहज़ादा ३५८-६०
खुलना दे २६८, २६४
ख़ुशालख़ाँ खटक ३७८, ३६५
ख़ुसरो (२य) रा १८५
खुसरो गज़नवी २४२-३
" मलिक (कवि) २५४, ३१४
" (नासिरुद्दीन) रा २६६, ३०३
" (मुग़ल) ३५६-७
खेड़ा दे ६३७, ६५२
ख़ैबर दर्रा ११, ३७७-८, ५२४, ५३६, ५४७-८, ६०६, ६१५, ६४०
खैरपुर (सिन्ध) दे ५०६, ५४२, ५५०
खैराबाद ब ५२४
खोकन्द ब ११६
खोकर ज २४६, २५०, २५२-३, २७४, २६२
खोतन दे ६०, ११६, १२१-२, १२८, १६६, १८८-६, १६४, १६७
खोतनदेशी बो १६४-६, २३७
ख्मेर ज २३८
ख्वारिज़्म दे २०६, २४८, ३२०
गक्खड़ ज २१०, २५३, २६२, ३२१, ३३४
गंग ज १४६, १५१, १६६, २००, २१६, २५०, २८८, २६१
गंगवाड़ी दे २००
गंगराज रा १६६
गंगराज ज १६६
गंगा न १-३, ५, ८, १०, १३-४, १६, १८, २७, ३१-४, ६१,

१४३-४, १४७-८, १५८, १६६, १७३, १८३, २०१, २१७, २४४-५, २४६-५०, २५७-८, २७१, २७४, २८४, २६३, २६६, ३३३, ३४८, ४४१, ४४३-४, ४७३; ४८२, ५७७-६, ५८६ ५६१

गंगाधर शास्त्री ५१७,

गंगापार का हिन्द, देखिये सुवर्णभूमि

गंगाबाई ४६८

गंगू, हसन २७६

गंगैकोंड, राजेन्द्र, देखिये राजेन्द्र चोल

ग़ज़नी दे ११, १६६-७, २०६-६, २११, २१४-६, २२६, २४२-३, २४६-७, २५०, २५३, २५६, २७०, २६१, ३१८, ३४८, ४१७, ५०८, ५४२, ५४७, ५२४, ५४८

गजमद ३०५

गंज ए सवाई ३६६

गंजाम दे १८३, ३६५, ४३६, ५०२

गढ़ कटंका ब २७८, ३१७, ३३६

गढ़वाल दे ७, ३१, २२४, २६२, ३७३, ५१३, ५१५

गढ़वाली सैनिक ६५२

गढ़ा दे २७८, २८८, २६२

„ मंडला दे ४११

गणपति रा २५५-६, ३१४

गंडक न ३३, ३२६, ४७६

गंडाकाटा ब ३६८

गत ज १५५

गदग ब ४१०

गदर ५६४-६००, ६०२, ६०६

„ दल ६३०, ६३३-५, ६४६

गदरोसिया दे ८७, १०६

गदाधरसिंह रा ३७७

„ गणेश रा २८३, ३०३, ३०६, ३१४

गणेशरथ १८६

गणेशशंकर विद्यार्थी ६५५

गणेश्वर रा २७८

गन्दमक ब ५४६

„ की सन्धि ६०७-८

गफ़, लार्ड ५५४-५, ५६२

गया दे ३८, ६६, ६८, १०१, २३२, २४५, २७०, ३७६, ४२२, ५६२

गयास आज़मशाह रा २८३, ३०८

गयासुद्दीन उवज़ २४६

„ तुगलक (गाज़ी तुगलक) रा २६६ २६६, २७१, २७२, २८२, ३०३

„ बहादुर २६८

गरम दल ६२४, ६२६, ६३७

गवीलगढ़ ब ३२५, ३६८, ५०५, ५१६

गहरवार ज २१६
गागरौन ब २६०, २६२, ३१७, ३२५
गांगेय देव रा २१८
ग़ाज़िउद्दीन ४१५, ४२६, ४३०, ४३१, ४३२, ४३३
,, फ़ीरोज़जंग २य (निज़ाम), देखिये निज़ाम
ग़ाज़ियाबाद ब ४४८
ग़ाज़ी तुगलक, देखिये गयासुद्दीन तुगलक
ग़ाज़ीपुर दे ब १५६, १५८, ३२३, ३२६, ५०७
गन्धार दे ११, ३७, ४०-१, ५१-२, ५५, ५८-६, ८२-३, ८६, ६७, ११३, ११५, ११६-२१, १२८, १३७, १५४, १५७-८, १६८, १८१, १८८, २०१, २०६
गान्धारी रा ३८
गान्धी ६३७-८, ६४१, ६४३, ६४६, ६४८, ६५०-२, ६५४-६, ६५८, ६६३
गान्धी-अर्विन समझौता ६५५
गायकवाड़ ज ४१२, ४७३-४
,, आनन्दराव रा ५०१-२, ५१७
,, गोविन्दराव रा ५०१
,, दमाजी ४२४
,, पिलाजी रा ४१०, ४१२
,, फतेसिंह रा ४७१
गायत्री रा ३०५
गारलोक ब ५५५, ६२३
गाली पोली ब ६३१-२
गाल्वानी ४२५
गाहड़वाल ज २१६, २२१, २४६, २८८
गियाना दे ५६०
गिरनार ब ६२, ६६, २८५
गिरिधर बहादुर नागर ४०६-११
गिलजई ज ४०८, ४१६
गिल्गित न दे ७, ५५१, ६०५, ६१४-५
गीता ५६३
गीर्वाण युद्ध विक्रमसिंह रा ५४३
गुइथे, जर्मन कवि ५६३
गुजरात दे ३, ११-२, १५, ३३, ३७, ४२, ६०, १२३, १४१, १४५, १४७, १४६, १७६, १८१, १८४, १६२, २०७, २१६-२०, २२३-४, २२८, २४२-३, २४६, २५३, २५७, २६३-६, २७१, २७६-७, २७६, २८२, २८४-६, २८६-६०, २६५, २६६, ३०२, ३०४, ३०७, ३१३, ३१७, ३२८, ३३०, ३३४-५, ३३७, ३४४, ३४६-५१, ३५३, ३७१-३,

३६४-५, ४०३, ४०८-११, ४१३, ४२५, ४६८-६, ४७१, ४८२, ४८८, ५०३, ५०५, ५१६-७, ५८७, ६०६-१०
गुजरात (पंजाब) दे ब ३३, १७६, ५६२
गुजरांवाला दे ४५२, ४६६, ६३८,
गुजराती बो १५, १६, २०, ६११
,, अखबार ५६३
,, ज ४४३
गुज्ज ज २१८
गुर्जरसिंह ४५३
गुट्टनबर्ग ३१५
गुणवर्मा १६७-८
गुणाढ्य १३४
गुंटर दे १४१, २८६, ४७१
गुदफर रा ११५
गुत्ति ब दे ४२०, ४३६, ४५१, ४५६
गुप्त रा १४६
" ज २६, १४१, १४६-७, १४६-५१, १५६-७, १५६-६६, १६६-७०, १७२-७, १७६, १८१, १८४, १८७, २२४, २३१-२, २३७, २४०, ३१४-५, ४८७
" पिछले ज १७७-६, १६५-६
" लिपि ५६२
गुप्त संवत् १४६
गुरदासपुर ब २७२, ४०३
गुरमुखी बो २०, ३५७
गुरुकुल ६२५
गुरुदत्तसिंह ६३०
गुरुद्वारा कानून ६४४
गुरु नानक, देखिये नानक
गुर्जर ज १७६, १८३-४
" (आ) दे १७६, १८१, २०१, २०६
" प्रतिहार ज २०१, २०३, २२५, ३०१
गुर्जिस्तान (ज्यार्जिया) दे २११
गुलाबसिंह रा ५२५, ५४०-१, ५४५, ५५३, ५५६-७, ५५६, ५६२
गुलाम ज २४७, २५४, २५७
" कादिर ४७७
गुलामी प्रथा ५६०
गुहसेन या गुहिल रा २४६
गुहिलोत ज २७४
गूजर ज ५०२
गोकला ३८४
गोखले गोपालकृष्ण ६२६
गोघूँदा दे ब ३४६
गोंड ज २८८, ३६३, ४२२
गोंडवाना दे २८८, ३४४-५, ३५१, ३८५, ३६२, ३६६, ४१६, ४८८

गौंडा दे ५१
गोंडी बो १६
गोदावरी न १३-४, १६, ३४, ३६, ५०, १८३, १८५, २११, २१३, ३१७, ३१८, ३१२, ४०१, ४३१-२ ४५२, ४७४, ५११
गोपाल रा १६६-२०१
" राव पटवर्धन ४४२
" हरि देशमुख ६०६
गोपीलीला २२५
गोमल न ७, ११
" घाटा ५०८
गोर दे २११, २४२
गोरखपुर दे ५३, ७२, ६१, २२३, २७८, ३२६, ४६६, ५१२-४, ६४३
गोरखा व ४६०
" ज ४५६-६०, ४७६, ४८२, ५१०-१, ५१३, ५१५-६, ५२३-४, ५७२
गोरखाली बो ४६०
गोरी शहाबुद्दीन रा २४२-३ २४६-७, ३०१-२, ३०७
गोर्डन ६०६
गोलकुंडा ७, १४, २७६, ३१८, ३४६, ३४८, ३५५, ३६२, ३६४, ३६७, ३६६, ३८२, ३८४, ३८८-६, ४३१
गोलकुंडा व ३६६, ३७६, ३८६, ४३०
गोलगुम्बज ३६६
गोलमेज सम्मेलन ६५४-५,
गोवा व २७४, २६६, ३३१, ३६०, ३७१, ३७८, ३८१, ३८८, ४१६
गोविन्द (३य) रा २०१ २
" चन्द्र गाहड़वाल रा २२१
" पन्त बुन्देला ४४४-५, ४४८
" पाल रा २२१, २४४
" राज चौहान रा २४३
" राव गायकवाड़, देखिये गायकवाड़ गोविन्दराव
गोविन्दसिंह गुरु ३६६-७, ४००-१, ४५३, ४६१
गोहाद व ४७१, ५०५, ५०७
गौड़ द १७६, १८२, १६५-६, २०१, २०४-५, २१७, २४५, २४६-५०, २५४, २५८, २८४, २६६, ३०२, ३३१-३, ३६३
गौडर्ड ४७०-२
गौतम अक्षपाद १३४
गौतमीपुत्र वाकाटक रा १४४
" शातकर्णि रा ११४-६
" बालश्री रा ११४
गौरगोविन्द रा २६४
गौहाटी व ३७२, ३७७

ग्यरस्लड ब १६०
ग्रहवर्मा रा १७८, १८२
ग्रेटइंडियन पेनिन्सुला रेल्वे ५६१
ग्वालियर दे ब २१२, २२१, २२३, २२६, २४६, २८५, २६६, ३१६, ३२३, ३३४-५, ३४२-३, ३५६, ३६५, ४०६, ४१४, ४२२, ४३७, ४८५, ४७१, ४७३, ४६४, ५०५-६, ५१०, ५१६, ५१८-६, ५३५, ५५०-१, ५७०, ५८०, ५८२-३, ५६६, ६०१, ६२८
घटप्रभा न २७६
घटोत्कच रा १४६
घर्मट ब ३७२
घाघरा न ३२६-२७, ४१६, ५८३
घूंसेबाज़ (Boxer) ६२१
घृसणेश्वर मंदिर ४८४
घेरिया ब ४५७
घोरपड़े मुरारीराव, देखिये मुरारीराव घोरपड़े
" सन्ताजी, देखिये सन्ताजी घोरपड़े
चक्रधरपुर ब ६३५
चक्रध्वज रा ३७७
चक्रायुध दा २०१-२
चगाताई दे २८१
चंगेज़ख़ान रा २४८, २५६, २६१, २८१, ३१६-२०
चच रा १६३-४
चटगांव दे ११-२, १४८, २८४, २६२, ३३१, ३६०, ३६५, ३७५, ४५४, ५१६, ५२१, ६५१
चड़तसिंह ४५२, ४६६
चंडीदास ३१४
चंडेश्वर २७१
चतरसिंह ५६२
चन्दकौर ५४३-४
चन्द बरदाई २४४
चन्दावर ब २४३
चन्दासाहब ४२०, ४२६-३१
चन्देरी दे २५२, २६३, २७०-१, २८५ २८८, २६२, ३१०, ३१७, ३२६, ३२६, ५८०
चन्देल ज २०५, २३०, २४५, २५७, २८८
'चन्द्र' रा १५३
चन्द्र ज २०३
" गाहड्वाल २१६, २२१, २२५
" गुप्त मौर्य रा ८६-७, ६१-२
" " (१म) रा १४६-७
" " विक्रमादित्य रा १५०-४, १६६, १६८
" " गुहा १५२

चन्द्रगिरि दे २६३, ३५६, ३६५-८
चन्द्रनगर ब ३६७-८, ४३७, ४३६
चन्द्रापीड वज्रादित्य रा २४०
चमन दे ६१४-५, ६४०
चम्पकरामन पिल्लै ६३४
चम्पतराय बुन्देला ३६३, ३७३
चम्पा दे १२८, १६६, २३७, ३०५
" ५१-२, ५५, ७५, १२८, १४३, १६८
" देखिये चम्बा
चम्पानगर ५१
चम्पारन दे ६६-१००, ५१२, ६३७
चम्बल न ३, ११०, १४३, २४४, ३१६, ३३५, ३७२, ४०४, ४१४-५, ४१८, ५१८, ५५१, ५८३
चदक १२२, १३४
चष्टन १२३
" ज १४१, १४५
चाइल्ड, जोशिया ३६७
" जौन ३६८
चाङ किएन ११८
चाणक्य, देखिये कौटल्य
चाँदनी चौक (दिल्ली) ६२६
चाँदबीबी रा ३५५
चांदा ब ३६३, ३८८, ४८८
चाँपानेर ब २८५, २६५, ४१३
चारनाक जौब ३६८
चारसद्दा दे ६५१
चारासियाब बै ६०७
चारुमती रा १०२
चार्ल्स (स्पेन) रा २६६
" (१म) रा ४६३
चालुक्य ज १७७, १८१, १८६, १६५, २००, २०६, २१७, २१६, २२२, २२६, २४६, २५४, २५६
" कल्याणी के २०७
" पूरबी ज १८५, २३७
चिंचुड़ा (चिन्सुरा) ब ३६८
चिङहिरहान, देखिये चंगेज़ख़ान
चितराल दे ६०५, ६१४-५
चित्तूर दे ३१८
चित्तौड़ ब २४६, २५३, २६५-६, २७०, २६०, ३१३, ३१७, ३२६, ३२६, ३३४, ३३६, ३३६, ३४४, ३४६-८, ३६५, ३८६-७
चित्रकूट गि ३६
चित्रसेन २३८
चिदम्बरम् दे २५४, २६७
चिनहट ब ५७३
चिनाब या चनाब न १४, ३३, ३८, २५२-३, ३५७, ४२७, ५४०, ५६२

चिन्दवीन न ११
चिपलूणकर विष्णुशास्त्री ६११
चिमाजी अप्पा ४०८, ४११, ४१३, ४१६, ४१९, ४४२, ४८०
चिलिका झील ३६४
चिलियांवाला ब ५६२
चीतलद्रुग दे ३६१, ४५१
चीतू पेण्डारी ५१६, ५२०
चीनकिरात ज १८
चीन दे ९, २७-८, ६८-९, १११, ११८-२२, १२६, १२८, १६६, १६८, १७६, १८८-९०, १९३, १९६-७, २०८, २५६, २५९-६२, २७४, ३१४-५, ४७६, ४९२, ५१२, ५१६, ५४३, ५४५, ५४७-८, ५६६, ५६९, ५८९, ५९९, ६००, ६०४, ६१५, ६२१, ६२३-४, ६२९-३०, ६३४, ६४०
चीन सागर २५९, ३६१
चीनी ज १८, २८, ९९, ११९, १२२, १६७, १७६, १९३-४, १९६-७, २०८, ३०६
चीनी तिब्बती ज २६०
चीनी क्रान्ति ६३०
" क्रान्तिकारी ६३५
" तुर्किस्तान दे १११
चीलराय (शुक्लध्वज) ३४६, ३४८
चुटु-सातवाहन ज १४१, १४४, १४६
चुनार दे व १००, २४४, २७०, ३२६, ३२९, ३३२, ३४२, ४५७
चुन्दलोहार ७२
चूड़ामन जाट ३९४-६, ४००, ४०४, ४०७
चूड़ासमा ज २७६, २७८
चेतसिंह रा ४७२-३
चेदि दे ३८, ४१, ५१-३, ८९, १४४, १३९, २०४, २१८-९, २२१, २५७, २७१, २७८, २८५, २८८, ३०४, ४८८
" ज १०४-६, २५७
" संवत् १४४
चेम्सफ़ोर्ड, लार्ड ६३७-८, ६४२
चेर दे ६२-३, ८८, ९७, १२५
चेर कुलवल्ली रा २५५
चैतन्य सन्त २९४, ३०९, ३११
चोडगंग अनन्तवर्मा, देखिये अनन्तवर्मा
चोल या चोलमंडल दे ५, १४, ६१-३, ८८, ९७, १२४-५, १८७, २०३, २१६, २२२, २३९-४०, २५४, ३६७, ४२९, ४४१
चौकीघाटा ३१
चौथ ३७९
चौबीस परगना दे ४३९

चौरागढ़ ब ३६३, ४२०
चौरीचौरा ब ६४३
चौसा ब ३३३
चौहान ज २०७, २२०, २४३, २५०, २५७, २६५
छछ २१०-१
छत्तीसगढ़ दे ३, १५, १४४, १४७, १८४, २०१, २०५, २५७-८, २७१, २८८, ३१७, ३४५, ५२०
छत्रसाल बुन्देला रा ३७३, ३८५, ३६२-६, ४००, ४०५, ४०७-८, ४१०-२, ४८३-४
छपरा ब ४५८
छापने की कला ३१५
छिन्दवाड़ा ब ३६३
छोटा नागपुर दे ३, १३
छोटियाली, देखिये थल छोटियाली
ज़क़रिया ख़ां ४०३, ४०६, ४१७, ४१६, ४२५, ४२८
जगतराज बुन्देला रा ४१२,
„ सिंह रा ४२३
जगदलक दर्रा ५४६
जगदीश चन्द्र वसु, देखिये वसु
जगदीशपुर ब ५७८, ५८०
जगन्नाथ मन्दिर २१६, २७८
जगराज ३६३
जंगबहादुर रा ५५६, ५७२, ५७८-६, ५८४
जजिया ११५, २८७, ३४५, ३७६, ३८४, ३८६, ३८८, ३६७, ४०१, ४०४-५
जंजीरा दे ३८८, ३६८, ४४८
जझौती दे २०४-५, २१०, २१५, २१८, २२१, २४३, २४५, २४६, २५२, २५७, २७१, २८८
जटावर्मा सुन्दर पाण्ड्य रा २५५-६
जनक ज ३३
जनकोजी शिन्दे ४४५
जनस्थान ३४-६
जनोजी भौंसले ४५६
जन्तर मन्तर ४८५
जफ़र खां २६४-५, २७७, २८५
जबलपुर दे २०२, २०४, २८८, ५७२, ५८०
जमना न १, ३, ८, २७, ३१, ३२, ३७, ३८-६, ४१, ५३, १०६, १४३, १४७, १६१, २०१, २०४, २२१, २४४-५, २५०, २६६, २७२, २७७, २६६, ३२२-३, ३३३, ३७२, ३६६, ४०१, ४०८, ४१०-१, ४१४, ४४४, ४४६-७, ४५३, ५०२-३,

५१०, ५१४, ५२७, ५५६, ५६८, ५६१
जमरूद ब ३७७, ५३६-४०
जमानशाह रा ४६७, ४६६, ५००, ५०६-१०
जमालुद्दीन, मलिक २५७
जम्मू दे २८१, ४०३, ४५२, ५४०-१ ५५२
जयच्चन्द्र रा २२१, २३६, २४३-४, ३०२
जयद्रथ रा ४०
जयध्वज रा ३७२
जयन्त भट्ट २३४
जयपाल रा २०६-१०
जयप्पा शिन्दे ४२७, ४३४-५, ४४४
जयपुर दे ब १४३, ४११, ४१३, ४२३, ४२७, ४४६, ४५१, ४५३, ४७७, ४८५, ५०५, ५०७, ५३५, ५७०, ६६२
जयमल ३४६-७
जयवर्धन २६०
जयविष्णुवर्धिनी रा ३०५
जयसिंह १६४
" कछवाहा रा ३७३, ३७५-६, ३८५
" राणा ३८८
" सवाई ४०४-५, ४१३-५, ४१७-८, ४८५
जयाजीराव शिन्दे रा ५५०, ५७०, ५७५
जयापीड रा १६६, २०२
जरथुस्त्र ५८
जरथुस्त्री ज ३५२
जरफ्शां न ३१६, ३२४
जरासन्ध रा ३८-४०
जर्मन ज ४८५, ४६३, ६०५, ६३१-५, ६४०, ६६३
" उपनिवेश ६३१
" तुर्की हिन्दी प्रतिनिधि मंडल ६३५
जर्मन दे १२८, ४६३, ४६४, ६०४, ६०६, ६१३, ६२१-२, ६२५, ६३०-१, ६३४, ६६३
जलाल खाँ, देखिये इस्लामशाह
" लोहानी ३२६, ३२६, ३३१
जलालाबाद दे ब १०२, २३४, ३२०, ५४६-८, ६०७, ६४०
जलालुद्दीन, शाह रा २४८
" खिलजी रा २६३
" अहसानशाह रा २७३, २७५
" (यदु) रा २८४
जलियाँवाला बाग़ ६३६
जलेसर ब ४१४
जल्ला पंडित ५५२
जवाहरसिंह, जाट रा ४३८, ४५३, ४६१

जवाहरसिंह, जाट रा ५५२-३
जसपाल सेहरा २५२
जसरथ खोकर २८१, २८७, २१४
जसवन्तराव लाड ५२०
" होल्कर, देखिये होल्कर, जसवन्तराव
" सिंह रा ३७२-५, ३७७-८, ३८६
जहाजपुर व ३३६
जहान खाँ ४३८, ४४०, ४४४
जहाँगीर रा ३५७-६०, ३६२, ३६६-७, ४६२
जहाँदार शाह रा ४०१
जाओरा दे ५११
जाजपुर या जाजनगर व २५८
जाजौ व ४००
जाट ज ३००, ३६३, ३७३, ३८४, ३१४, ३११, ४०७, ४१०, ४११, ४२७, ४३२-४, ४३८, ४४५, ४५२-४, ४५८, ४६१, ४८४, ५०६
जातक ७८
जात पाँत २४१. ३११
जान शोर, सर ४१७, ४८०
जातीय शिक्षा परिषद् ६२५
जापान दे १३३. १६१, १७६, २३६, ६२१, ६२४, ६४३
जापानी ज २३६
ज़ाबिता ४६१
जाम (सिंधी) ज २७८-१, २८६
जायसवाल, काशीप्रसाद ८६
जायसी, मलिक मुहम्मद ३४१
ज़ार ६३२, ६४०
जालोर व २१२, २४४, २६६, २८५, ३८६
जालन्धर व २६४, ४५२. ५७१
जावा दे १. १२८, १६६, २१७, २३१-२, २३७, २६०, ३०५, ३१२-३, ५११, ५१३, ५८८, ६३५
जिन्दाँकौर रा ५५१-२. ५६१-२
जिंजी व ३६७, ३८६-६२. ३१५, ४२०, ४३०. ४३२, ४४३
" न ३६७
जिब्राल्तर (जब्रुल् तारिक) व १६६, ४०६
जिलेस्पी, कर्नल ५११-५
जिस्सा व ६२२
जीजाबाई ३६७, ३७४, ३७६
ज़ीनत महल रा ५६५, ५६७, ५७६-७
जीन फिलोस ५०५
जींद दे ५६८, ५७१
जीवितगुप्त (१म) रा १७८
" (२य) रा १७८

जुझारसिंह ३६३
जुतोग ब ५५१
जूना २६६, २७१-७२
जूनागढ़ ब २६५
जुन्नर ब ११३, १५५, ३६७, ३६१
जुल्फ़िकारख़ाँ ३६०-६२, ४०१, ४२०
जेजाकभुक्ति, देखिये जझौती
जेतवन ६६, ७०
जेमैका दे ५६०
जेम्स (१म) रा ३६२, ४६३
" वाट ४६५
" टाड, देखिये टाड, जेम्स
जेहलम दे ३३
" ब १०-१, ८३-४, २११, २४६, २५२, २८१, ३२१, ३६२, ४५३, ५४१, ५६२
जैतपुर ब ४१०-२, ४१४-५, ५६३
जैत्रसिंह रा २४६
जैथक ब ५१४
जैन धर्म १३३, ३५१
ज़ैनुलआबिदीन रा २८७, ३११, ३५०
जैमिनि १७४
जैला ब ६०६
जैसलमेर ब २६२, ३६५
जोधपुर दे ब २६२, ३३६, ३३१, ३६२, ३६५, ३८६, ४००, ४१३, ४७७, ५२०, ५३५, ५७०
जोन्स, सर विलियम ४६६, ५६१
जोरावरसिंह ३१७
" " ५४१, ५४३, ५४५
जोशिया चाइल्ड ३६७
जोहिये ज १०६
जौनपुर दे ब २७७-८, २८४, २८८, २६३-४, ३१३, ३२३, ३२६, ३३३, ३४३, ३४६ ३५२
जौहर १६५
ज्यार्ज (५म) रा ६२८
" ब बार्लो ५०७
ज्ञात्रिक ज ७४
झज्झर ब ३३५
झाड़खंड दे ३, १०, १३, १८, २७, १४७, ३३२-३३, ३३५
झालरापाटन ब ५८३
झालावाड़ा दे ५८३
झाँसी दे ब १७३, ४५१, ४५८, ४७०, ४६१, ५६४, ५७०, ५८०
झीलवाड़ा दे ३८७
झोब न ५६, ६१४-१५
टक्क या टाँक ज १८४
टक्कदेश दे १८४, ११४
टंडन, पुरुषोत्तमदास ६५६
टाड, जेम्स ५१६, ५१८
टामस रो ३६२
टिवाणे ५६१

टीपू ४७४, ४७८-६, ४८१, ४६८-६, ५२६
टेम्स ५८६
टोंक दे ३३५, ५०५, ५१६, ५८३
टोची ६१५
टोडरमल रा ३३४, ३३८, ३४६, ३५०, ३५२, ३५४-५, ३६०
टोडा ब २६०
टैरिफ़बोर्ड ६४३
ट्रान्सवाल दे ६२२, ६२६
ठगी प्रथा ५६३
ठट्ठा ब १४, २७६, ३५४, ४१६
ठाकुर, अवनीन्द्रनाथ ६२५
" रवीन्द्रनाथ ६२५
ठाकुरी वंश ज १८७-८
ठाना दे १६३
डफ़रिन, लार्ड ६१२-४, ६१६-७, ६१६
डबो ब ५५०
डलहौसी, लार्ड ५६१-५६३-४
डवाक दे १४८, १५१
डहाला दे २०२, २०५
डाकोर तीर्थ ४१३
डायर, जेनरल ६३६
डार्बी ४६४
डिज़रायली ६०६
डिमित, देखिये देमेत्रिय
डीडवाणा २६०, ३३५, ३८६
डुगर दे ५४०
डूंगरपुर व ३८६
डेरा इस्माइलख़ाँ दे ११, २३१, ५०८, ५२४
" गाज़ीख़ाँ दे ५२४
" जात दे ३७, ५०६, ५३७, ५४४
डोगरा ज ५४०, ५५७
ड्रेक ४३७
ढाका ब २०३, २४५, ३५६-६०, ५२१, ५८७
" अनुशीलन समिति ६२४, ६२७
तक्ष रा ३७
तक्षशिला ब ३७, ५५-६, ६१, ७८, ८१, ८६, ८८, ६०, १०८-६, १२०, १२५, १५८
तख़्त ताऊस ३७०
तंज़ीम आन्दोलन ६४५
तल्व ख़ालसा ४०४
तथागत गुप्त रा १५७
तबरेज़ ब २५६
तरग़ी २६६
तरावड़ी ब २४३, २७०, ६४४
तरुण तुर्क दल ६३३
तलैंग ज ५२१
तहमास्प, शाह रा ४१६
ताजमहल ३५६, ३७१

ताजिक ज ३१६

ताजुद्दीन एल्दोज २१७

तांजोर ब २०६-८, २१६-७, २१६, २३०, २५४, ३८१, ३८४, ४१०, ४२६, ४३१, ४६६-७, ४७४, ५००, ५२६-७

तात्या टोपे ५७८-५८३

तापी (ताप्ती) न ३, ५, १३, २६५, ४०५, ४३२, ४८०

तामलूक ब १४, ६७, १६८

तामिल बो १६, २०, १३३-५, २३७, ३१४,

" ज २१६-२१८, ४६७, ४७५

" दे ५, ५५, ८८, ११७, १२४-५, १३५, १४४, १४६, २०३, २२४-५, २५४-६, २६६-७, २७४-५, ३५६, ३६७, ३६६, ३८६-६०, ४२०, ४२२, ४२६-३०, ४३२, ४३५-६, ४३६-४०, ४४२-३, ४५४, ४५७-६, ४६६-७, ४७१, ४७३, ४७५-६, ४८२, ५००, ६२६, ६२८

ताम्रपर्णी न १४, ७५, २५६,

" दे ८८६

ताम्रलिप्ती ब ६७, १६८

तारकनाथ दास ६३४

तार लेखन ५६०

ताराबाई ३६२-३, ४०२-४, ४२४-५

तारिक १६६

तारीम न ८, ११, ६६, १११, ११८-६, १६६

तालपुर ब ४०६

तालीकोटा ब ३४६

ताशकन्द दे ३१६, ३२५, ६००, ६०६

तिब्बत दे ८, १८, २०, ६६, १११, १२२, १७६, १८६-६०, १६४, १६६-७, २२३, २३५-६, २५६-६२, ४७६, ५४१, ५४५, ६००, ६१५, ६२३, ६३०

तिब्बती बो २०, १८६-६०, १८०, २३७

" ज १८६-६०, १६४, १६६-७, २२३, २६०, ३०५, ४६०

तिरहुत दे १६१, २०३, २२०-१, २५८, २७३, २७५, २७७-८, २८३-४

तिरुनेवली (तिनेवली) दे ६२८

तिरुपति ब ३१८, ३६८

तिरुवण्णामलै ब २७५, ४५६

तिलक (अफ़गान) २१८

" बालगंगाधर ६११, ६२१, ६२७, ६३७, ६४१

तिलंगा ज ४४८, ५७२

तिष्य रा ६७
तीरभुक्ति १६१-२, २०६
तुएनहुआङ् ब १६५
तुकाराम, संत ३७२
तुकोजी होल्कर, देखिये होल्कर तुकोजी
तुखार ज ९८, १११-३, ११९, १२९, १२८, १४१, १४३, १४५, १५५, १५७, १६५, १८३, १८९, २०६, २०८-९
तुखारिस्तान दे ११२, १४९, १८१, १८९, १९६
तुखारी बो १६६, २३७
तुग़लक़ २८४
" पुर ब २७३
" फ़ीरोज़शाह, देखिये फ़ीरोज़ तुग़लक
तुग़लकाबाद ब २७१
तुंग २११
तुंगभद्रा न १४, २१९, २७९, २८९, ३८४, ५००, ५२६
तुरफ़ान ब १३६, १८८-९,
तुर्क ज १०५, १११, १८८-९, १९७, २०८-११, २१६, २१८-९, २४३-५०, २५८-९, २६३, २६५, २६७, २६९, २८२, २९७, ३००-४, ३०६, ३११, ३१५, ३१९, ३२३, ३३७, ४०१, ४६३, ४९७, ६२२, ६२५, ६२९, ६३१-३, ६४०, ६४५-६
तुर्क उस्मानली ज ३२३
" चग़ताई ज २५९
" भारतीय ज ३१४
" प्रजातंत्र ६४६
तुर्किस्तान दे १०५, १६४, २४८, २५९, ३१८-९, ३५७, ६०७
" चीनी दे १११
तुर्की दे ५०८, ५९६-७, ६०४, ६०६, ६०८, ६२३, ६२९, ६३१-३, ६४१
" बो १९८
तुर्वसु रा ३०
तुलम्आ ब २८१, २९२,
तुलसीदास ३५६-७
तुलाजी, ४३६
तुलुव ज २९४
तूरान दे ३५३-४
तूरानी (तुर्क) ज २८, ३१९, ४०१-२
तेग़बहादुर, गुरु ३७४, ३८५, ३९६
तेजसिंह ५५३-४, ५५६-८
तेनासरीम दे ५२१-२, ५६३
तेलंगाना दे ५, ७, २२२, २९९, २७१-२, २७७, २८८-९, २९१, ३६४, ३८१, ३९८

तेल या तेलवाह न ५०, ५२
तेलुगू बो १६, २०, २३७, ३१४
तेवर, देखिये त्रिपुरी
तैमूर रा २८०-१, २८४-७, ३१८-९
" शाह अब्दाली रा ४३८, ४४०, ४७७, ४९७, ५०६
" (शाहशुजा का बेटा) ५४२
तैमूरी वंश ज ३१९-२०, ४३४
तैलप चालुक्य रा २०७, २१७
तोमर ज २२०, ३५६
तोरमाण रा १५७
तोसली ब ८९-९०
तौसी न २११
तौहीदे इलाही ३५३
त्यूतन ज १५५, १९६, ४६३
त्यूनिस दे ६०६
त्रावनकोर दे २६७, ४७१, ६६१
त्रासवादी दल ६५१, ६५७
त्रिगर्त दे ४०
त्रिंकोमलै ब ४७४
त्रिचनापल्ली ब १२४, २५४-५, २६७, २७०, २९१, ४१०, ४२०, ४२९, ४३६
त्रिची ब ४२०, ४२९-३२, ४३५-६ ४४०
त्रिनीदाद दे ५९०
त्रिपिटक ७३, ७६, १६९ ५
त्रिपुरा दे १४८, २६६, ३४६, ६५५
त्रिपुरी ब २०४, २०५-६, २१६, २५७, २६८, २७०, २७८
त्रिपोली ब ६२९
त्रिम्बक ब ४३१
त्र्यम्बकराव दाभाडे, देखिये दाभाडे, त्र्यम्बकराव
त्रिलोचनपाल रा २११
त्रिशला रा ७४
त्रैलोक्यवर्मा चंदेल रा २४९, २५८
थर दे २, ५४१
थल छोटियाली दे ६०७
थाना-बिहपुर ब ६५२
थानेसर ब ३२, १५९, १७९, १८१-२, १८८, २११, २१९, २७७, ५५२
थारू ज २४६
थियानशान गि ११२
थियेन-चु (भारत) दे १६७
थेरवाद १३३
थूणगढ़ ब ५२, ४०४, ४२७
दक्खिन आफ्रिका सत्याग्रह ६३७
दक्खिन भारत हिन्दी प्रचार ६३७
दक्खिनी आफ्रिका, देखिये आफ्रिका, दक्खिनी
" समुद्र ३९९
दक्ष रा २३२
दक्षिणापथ दे ८९-९०, १५१

दजला न २७-८
दतिया ब ३५१, ३६५, ३८५
दत्ताजी शिन्दे ४३५, ४४३-५, ४४८
दनुज मर्दन रा २८४
दनुजराय रा २५३
दन्तिदुर्ग रा २००
दन्दान उलिक ब २३०
द-ब्वाञ ४७६-७
दमदम ब ५६६
दमन ब ३६८, ३८३, ३११
दमलचेरी घाट ४२०, ४२१
दमाजी गायकवाड़ ४१३, ४२४
दमिश्क ब ११२
दमोह ब २७१, २८५, २६५, ४१२
दयानन्द स्वामी ६०९-११, ६२४-५, ६३७
दयाबहादुर ४११
दरद् बो १६
दरद देश (दरदिस्तान) दे ८, १३४
दरबार साहब ४८४
दरभंगा दे ४२३
दरे दानियाल ६०६, ६३१
दलपतिशाह रा ३३७, ३४४
दलभूम दे ३४८
दलमऊ ब २७३, २६२
दलाई लामा ६१३
दशगुणोत्तर गणना ३१४
दशग्रीव, रावण रा ३६
दशरथ रा ३०, ३३-४
" (मौर्य) रा १०१-२
दशार्ण दे ३८, ५२
दशार्णा, देखिये धसान
दसबन्ध ३५६
दाऊद रा ३४६
दाँडी ब ६५१-२
दादा भाई नौरोजी ६०६-१०
दादू ३५६-७
दानापुर ब ५७८
दान्यूब न १८, १५४
दाभाडे, खंडेराव ४०३, ४०५, ४०७, ४०६
" त्र्यम्बकराव ४०६-१२
" यशवन्तराव ४१२, ४२४
दाभोई ब ४१०, ४१२, ४७१
दामोदर न ३, २६३, ३४८
" गुप्त रा १७८, १८०
दारयवहु रा ५६, ६१, ८१
दाराशिकोह ३६३, ३७२-४
दावर, कावसजी नानभाई ६१२
दास तारकनाथ, देखिये तारकनाथदास
दासोर दे १५६-६०
दाहिर रा १६४-५
दाहोद ब ५१७

दिङ्नाग १७४
दिनकरराव ५७०
दिन्दिगुल दे ४७६
दियाज़ २६८
दिलावर अली, सैयद ४०५
" ख़ाँ गोरी २८५
दिलीपसिंह रा ५५१, ५५६, ५६१
दिलेर ख़ाँ ३८१, ३८४-५
दि-ज़ेसेप ५६६
दिल्ली १३, ३६, १००, १५२, २२०-१, २३६, २४३, २४६-६, २५२-४, २५७-८, २६३, २६५-६, २६८-८२, २८४, २८६, २६०, २६२, २६४, २६६, ३०२-४, ३१६-७, ३२१, ३२३, ३२५, ३३३, ३३६, ३४१-३, ३४५, ३६५, ३७०, ३७२-४, ३७६, ३८५-६, ३६१, ३६३-५, ४०३-६, ४०८, ४१०, ४१३-५, ४१७-६, ४२५-८, ४३०-१, ४३३-४, ४३७-८, ४४०, ४४४-५, ४४७-५०, ४५२-३, ४६१, ४७६-७, ४७६, ४८५, ५०२-४, ५०६, ५१०, ५३३, ५३७, ५५६-७, ५६५-७२, ५७४-८, ५८०-१, ५६१, ६०५, ६२८-६, ६३८
दिल्ली षड्यंत्र ६२६
दीग ब ४२७, ४४५, ५०६
दीदारगंज ब १०२
दीनबन्धु मित्र ५८६
दीनाजपुर ब २६४
दीपंकर श्रीज्ञान, देखिये अतिशा
दीपालपुर ब २५३, २६६, २६६, २७१, २६२, ३२२
दीर दे ६१५
दीर्घतमा, ऋषि ४६
दीव ब २६६, ३१६, ३३०
दीवानचन्द ५२४
दुआर दे ६००
दुज़्दाप ब ६३१-२
दुराहासराय ब ४१६, ४२२
दुर्गादास राठोड ३८६-७
दुर्गावती रा ३४४-५
दुर्योधन रा ३८-४०, ७६
दुर्रानी ज ५२४
दुर्लभवर्धन रा १८८, १६६
दुल्लेवाल ब ४१६
दुःशासन ३८
दुष्यन्त रा ३०-२, १७५
देउस्कर, सखाराम गणेश ६२४
देदेस रा ३१३
देमेत्रिय (डिमित) रा १०६
देलवाड़ा ब २२६-७

देवकी रा १५६
देवकोट व २४६, २४१, २७०
व ३६३, ३६२, ४१६
देवगिरि दे व २२२, २५४, २५७, २६४-७०, २७२-३, २७६, ३०८
देवगुप्त रा १७८, १८१, १८७
देवघर व ६३५
देवदह व ६५
देवनपटम् व ४२६, ४४१
देवपाल १०२
" रा २०२-३, २३४
देवरकोंडा व २६१-२
देवराम (१म) रा २८६
" (२य) २८६, २६१
देवल व १६४, २०६
" पट्टणम् व २५६ २७०
" सिंह रा ३६३
देश दे १०७
देशी भाषाएँ ३१४, ३७२
" राज्य (रियासत) ५४३, ५६०, ५६५-६
देसूरी व ३८६-७
देहरादून दे १००, ५१३, ५१५, ६५७
दोआब (गंगा-यमुना) दे २०६, २५२-३, २६७, २७३-४, २८४, ३२३, ३३३, ३८४, ४०१, ४१४, ४२७, ४४०, ४४५ ५०५-६, ५६६, ५७६-८०
दोनाबू व ५२२
दोराई व ३७३
दोस्तअली, नवाब ४२०
" मुहम्मद रुहेला ४०५
" " अमीर रा ५११, ५२४, ५३६-४०, ५४२-३, ५४६, ५४८, ५६२, ५६६, ६००
दौलतखाँ लोदी ३२१
दौलतबाग ४८४
" राव शिन्दे ४८०-१, ५०१, ५०६, ५१०, ५३५
दौलताबाद व २७२-३, ३६४, ३८३, ४१०, ४४३, ४८०
ड्यूप्ले ४२६-३०, ४३२, ४३५
ड्यूमा ४२०-१
द्रामिल, देखिये तामिल
द्राविड बो १६-७, १६-२०, ३१४, ६३७
" ज १७, २०-१, २८
द्रुह्यु रा ३०
द्रुपद यज्ञसेन रा ३६
द्रोणसिंह रा १७६
द्वाबा, जलन्धर दे ४०१, ४५२
द्वारिका व ३६, ४१, २०६, २२४, २६५

धंग रा २०५, २०६
धननन्द रा ८०
धनाजी जादव ३६०-२, ३६४-५, ४०२-३
धन्यमाणिक्य रा २६६
धरासना ब ६५२
धर्मकीर्त्ति २३२, २३६
धर्मचक्र प्रवर्तन ६८
धर्मपाल रा २०१-२
धर्मरत्न १२८
धर्मराज रथ १८७
धसान न ३८, २२१, २५७
धामुनी ब ३८५, ३६२, ३६६
धारवाड़ ब ३८४, ४५६, ४७६
धारा या धार ब २१२, २१६, २३६
धुवड़ी ब ३७७
धृतराष्ट्र रा ३८, ४०
धोरसमुद्र दे २२२, २५४, २६६, २६८, २७१-२
धौलपुर ब ३१६, ३२३, ३२५, ४००, ४२२
धौली ब ६०
ध्यानसिंह रा ५२५, ५४१, ५४३-४
ध्रुव (उ) दे १८
ध्रुव धारावर्ष रा २०१
ध्रुवसेन रा १८३
ध्रुवस्वामिनी रा १५०-२
नगर दे ६१४
" कोट ब २११, २१८-६
" हार, देखिये निंग्रहार
नजफ़गढ़ ब ५७५
नजीबख़ाँ रुहेला ४३३, ४३७-८, ४४०, ४४४-५, ४४८-५०, ४५२-३, ४६१
नजीबाबाद ब ३१, ४४४, ४६१
नजीबुद्दौला ४७७
नज़्द दे ५६७
नडियाद ब ६३८
नदिया ब २४५, २५२, २७०
नन्द रा ८४, ८६, १०३
नन्दराम, जाट ३७३
नन्दलाल मंडलोई ४१९
" वसु ६२५
नन्दनगढ़ ब १०३
नन्दिराज ४३१-२
नन्दिवर्धन रा ६१
नन्दी १६६
" देवता १०८-६, १२०, १४५, २०७, २४३
नमक कर ६५०
" कानून ६५०-२
" सत्याग्रह ६५६
" की पहाड़ियाँ गि १०, ३२१, ३३४

नयपाल रा २१८
नर-नारायण १७३
" " रा ३४६, ३४६
नरम दल ६२४, ६२६, ६३७
नरवर व २५२, २७०, २६२
नरवर्धन रा १७८
नरस नायक रा २६४, ३१७
नरसिंहगुप्त-बालादित्य रा १५७
" देव (१म) रा २५०, २५१, २६६
" " (३य) रा २७७
" वर्मा रा १८४-७
नरेन्द्रनाथ भट्टाचार्य (मानवेन्द्रनाथ राय) ६३५, ६४६
" सेन रा १५४
नर्मद, कवि ६११
नर्मदा न ३, १३, ३८, ६०, १४१, १६१, १८३, ३६३, ३७२, ३६२-४, ४१२, ४१५, ४१८, ४४६, ४६८-७०, ५१६, ५१६, ५३३, ५८३
नल ३०५
नलगोंडा दे २६३, ३१७, ३२५
नलवा, हरिसिंह ५३६
नल्लमलै दे ३६४
नवनाग रा १४२-३
नवसारी व १६५
नवाबगंज व ५८३
नसरतखाँ २६४-५
" जंग (जुल्फ़िकार) ३६२-३
" शाह बंगाली ३२१, ३२६-७, ३२६-३०
नसरुल्ला, अमीर रा ६४०
नसीराबाद व ३८६, ५७०
नहपान ११३-४, १२१, १४१
नाग ज १४१-४, १४७, १६६-७०
नागदा व २४६, २७०
नागपुर व दे १४२, १४४, ४२२, ४५७, ४७०, ४८८, ४६६, ५०८, ५१७, ५१६-२०, ५६०, ५६४, ५७२, ५८३, ६४१
नागभट रा २०१
" (२य) रा २०१-२
नागरी वो १५, १६-२०
नागा गि १
नागार्जुन १३३-४, १६८
नागार्जुनी कोंडा १४२, १७१
नागी सोमा १२६
नागोरगढ़ व २४४, २५३, २८६, २६०, ३२६, ३३५, ३८६, ४३४, ४४४
नाटाल दे ६२२, ६२६
नानक, गुरु ३०६, ३४५, ३५७, ४५३, ४६१, ५७७

नाना फड़नीस ४५१, ४६६, ४६८, ४७१-३, ४७७-८१, ४८४, ४८६
नाना साहब ५६४-६, ५६६, ५७३-४, ५७८, ५८१, ५८४
नान्देउ ३६८, ३८३, ३८८
नान्यदेव कर्णाट रा २२०, २५८
नादिरशाह (नादिरकुली) रा ४१६-६, ४२३, ४२५, ४३८, ४४८, ५०८, ५५७, ६५०
नाभा दे ५६८, ५७१
नामकिउ गि १
नामदेव ३०६, ३५७
नामधारी (कूके) २६८
नारदस्मृति १६४
नारनौल ब २८१, ३८५, ४४५
नारायणपाल रा २०३
नारायणराव, पेशवा ४६७-८, ४७६
नारा विहार १६६, २३६
नार्थब्रुक, वाइसराय ५६५, ६०१-२, ६१६
नाल ब २८
नालन्दा ब १५४, १६१, १६३-४, १७४, १७६, २०२, २२३, २३४-६
नालमले गि १४१
नालागढ़ दे ५१४
नालापानी ५१४
नाविक क़ानून ५८८
नासिक ब ३४, ११३, १३७, ३८१, ४६०, ६२८
नासिरजंग ४१५, ४२६, ४३०, ४३६
नासिरुद्दीन कुबाचा २४८
" महमूद रा २५१-२,
" उर्फ़ बुगरा २५१, २६८
" (खुसरो) रा २६६
नाहड़देव रा २०२
नाहन दे ५१३-४
निकल्स, कर्नल ५१५
निकल्सन ५६१, ५७५-८
निंग्रहार (नगरहार) दे १०२, २०६, २३४
निज़ाम ज ४६८-५००, ५०५, ५०८, ५१६-७, ५२६, ५६४, ५७२
" या निज़ामुल्मुल्क (गाज़िउद्दीन फ़ीरोज़जंग २य) ४०२, ४०५-१३, ४१५, ४१७-२३, ४२६
" सलाबत जंग ४३१, ४३५-६
निज़ामअली रा ४४१-३, ४५१-२, ४५७, ४५६, ४६८, ४७१, ४७६, ४८०-१
" शाह ज ३१८, ३६०, ३६४
निपन, देखिये जापान
निम्बाजी शिन्दे ३६३, ३६६

निमावर ब ५१६
नियामक समिति (पार्लिमेन्टरी बोर्ड) ६६०-१
निरंजना न ६६, ६८
निलहे गोरे ६३७
निलावर, देखिये नेल्लूर
नीमच ब ५७०, ५७५
नील न १६७, ४६८, ६२१
नील, कर्नल ५७२-३, ५७७-८
नीलकंठ ३०८
नीलगिरि गि ५, १४, ५२६ ५६०, ५८६, ५६६
नील दर्पण ५८६
नुस्की ब ६३१
नूनो-दा कुन्हा ३३०
नूरजहाँ रा ३५६, ३६२
नूरुद्दीन ५६१
नेकानेकी ३११
नेपाल दे ४, ७, ६५, १०२, १४८-६, १५१, १८७-६०, १६६, १६६, २०७, २५८, २६१, २७१, २७५, ३००, ४५६-६०, ४७६, ५१०, ५१२-५, ५४३, ५४५, ५५६-६०, ५६७, ५७८, ५८४, ५६६
नेपाली ज ४७६, ५१३-५, ५४३, ५१५, ५७१-२
नेपियर, सर चार्ल्स ५४६-५०
नेल्लूर दे ब २५५-६, २७४, २६३-४
नेल्सन ४६८, ४६८
नेवार ज ४६०
नेहरू, जवाहरलाल ६५६
" मोतीलाल ६५२-३
नैपोलियन बोनापार्ट ४६७, ५००, ५०८, ५१०-३, ५३६, ५८७, ५६२, ६०४, ६२२
नौजवान भारत सभा ६४७
नौट, जेनरल ५४७-८
नौनिहालसिंह ५२५, ५३६, ५४३, ५४५
नौर्मन ज ४६३
नौशीरवाँ रा १६०, १८८
नौशेरा ब ५२४
न्यायदर्शन १३४
न्यूकोमन ४६४-५
न्यूगिनी द्वीप दे ३०५
न्यूज़ीलैंड दे ६००
पक्थ ज ४१, ५६
पक्थदेश दे ५६
पखली ब ३७७
पगू ब ५२१, ५६३
पंचवटी ब ३४, ३६
पंचतन्त्र १७५, १६८
पंचाल दे ३३, ३६, ४१, ४५, ५१-२, ८६, १८३, २२१, ४२५, ४८२

पंचाल (उ) दे १०७
" (द) दे १७६
पंचायत २३६-४०
पंचिङ्गमीघाट गि ५, २६१, ४६६
" मंडल दे ११०, ११६
पंजकोरा न ८३
पंजदेह ब ६१३
पंजनद दे २१०
पंजाब दे २, १०, १३, ३३, ३८, ४२, ६२, ८०, ८४, ८६, ९०, १०६, १०८-१०, ११३, ११५, १२०-१, १३३, १४३, १५०, १५६-६, १७६, १८१, १८४, १८६, १६४, २०१, २०४, २०७, २१०-१, २१३, २१८, २२०, २४३, २४८-५०, २५३-४, २६४, २६६, २७२, ३०६, ३०६, ३१८, ३२१-२, ३२८, ३३४, ३३८, ३४२-३, ३४६, ३५२, ३५७, ३६०, ३६३, ३७२-३, ३८५, ३६६, ४००, ४०१, ४०६, ४१४, ४१७, ४१६, ४२५, ४२७-८, ४३५, ४३७-४०, ४४३-४, ४४७, ४५२-३, ४५६, ४८५, ५००, ५०७-८, ५१०, ५२३-४, ५३६, ५३८, ५४१-३, ५४५-६, ६ ५५०-४, ५५८-६०, ५६३, ५६७-८, ५७१-२, ५७४-५, ५६१-२, ५६५, ६००, ६१५, ६२४, ६२६, ६२८, ६३०, ६३४-५, ६३८, ६४१, ६५३, ६६०-१
पंजाब, नहरें ६१७
पंजाबी ज ४८३, ४६१, ५२३, ६२८-६, ६३४
" मुसलमान ५७१
" बो १५-६
पटना ब १२, १४, ३८, ५२, ६१, ७३, ७६, ८६, ८६, ६०, ६०-३, १०२-३, १०६-७, १२१, १४६-७, १४६, १५४, १८०, २०६, २६६, ३४०, ३६५, ४०१, ४५६, ५१३, ५७८, ६५८
पटवर्धन, गोपालराव ४४२
" परशुराम भाऊ ४७२, ४७६, ४८०
पटियाला ब २६३, ४३८, ४४८, ५६८, ५७१
पटेल, वल्लभभाई ६५६, ६६०-१
पट्टयम्, देखिये रामेश्वरपट्टयम
पठान ज २३१, २६४, ३२१, ३२३, ३४०, ३७७-८, ३८१, ४०७-८,

पठान ४१६, ४२५, ४२७, ४३०, ४३६, ४४२, ४८५, ५२३-४, ५४५, ५६२, ६०७, ६१५
पण्ढरपुर ब ३०८, ३६८, ५१७
पतकोई गि १, ११
पतञ्जलि १३३
पत्ता, सीसोदिया ३४६-७
पदमपवायाँ, देखिये पद्मावती
पदुमावति, काव्य ३४१
पद्मसंभव २२३
पद्मावती ब १४१, १४२, १४७, १५१
पद्मिनी रा २६५
पनियार ब ५५१
पन्ना ब दे १४३, १४४, ३४५, ३६५, ४१२, ४८४
पन्हाला ३७४, ३८१, ३८३-४, ३९०
पम्पा ब ३७
पयोष्णी, देखिये ताप्ती
पलाशिका न ब १५१
परतावगढ़ ब ३८६
परबतिया, देखिये पहाड़ी
परमर्दी चन्देल रा २२१, २४५, २४९
परमार राजपूत ज २०६, २१२, २१६, २२७
परला हिन्द दे ७, १२६, १६६, १६६, १७६, २२७, २६०, ३०५, ५२१
परशुराम भाऊ, देखिये पटवर्धन परशुराम भाऊ
परवेज़, शाहज़ादा ३५८
परुष्णी, देखिये रावी
परेन्दा ब ३६८, ३७०, ३८३, ४८०
पर्णाशा, देखिये बनास
पलामू दे ३६५
पलार न ३८९
पलाशी ब ४२२, ४३९, ४५५, ४५८, ४६८, ४९४, ५८६
पल्लव ज १४३-४, १४६-७, १४९, १५१, १६४, १८१, १८६, २०३, २५४
पशुपति १५७
पश्चिम समुद्र ८७, १५६, १८५, १९२, २०६
पश्तो बो १५-६, ५९, ४८३
पह्लव ज ११५, १२०-१, १२३
पहांग ब ३०५
पहाड़सिंह ३६३
पहाड़ी ज ५२०
” बो १५, १९, ४६०
पाक्पट्टन ब २८१
पाटन ब १०२, ३१५, ४६०, ४७७
पाटलिपुत्र, देखिये पटना
पाणिनि ७९, २३७
पाण्डव ज ३९-४०, ४२, २४०

पाण्डव रथ १८५
पाण्डिचेरी, देखिये पुद्दुचेरी
पाण्डु रा ३८-६
" ज ६२
पाण्डुआ ब ३११
पाण्डुरंग दे १२६-८
पाण्ड्य दे ६१-३, ८८-९, ६७, १०६, १२५, १६२, २०६, २१७, २५४
" ज १०७
पातञ्जल योग सूत्र १७४
पानीपत ब १३, २४३, २७०, ३२२-५, ३२७, ३३४ ३९६, ४१७, ४४७, ४४६, ४६१, ४६१
" दे २
पामीर गि दे १, ८, ११, ५५, ८७, ११२, ११८, १३४, २०६, ६१४-५
पारस दे ५८
पारसनाथ गि ३
पारसी (पारसीक) ज ६८, १६२, ३५१, ५८८
पारियात्र गि ४१
पार्थव ज दे १०५, ११२, ११५, ११८, १२०, १२६, १४३
पार्लिमेण्ट ४६३-५, ४६७, ४७०, ४७४-५, ४६३-४, ५६४, ६१६, ६२७, ६३१, ६५४, ६५८
पार्वती न १४१
" रा ३६३
पाल ज १६६, २०२-५, २२०, २२५, २३२
पालक्काड (पालघाट) १४
पालखेड़ ब ४१०, ४१५
पालगा ब ३६०, ५१३
पालयगार ४४१, ५२८
पालयम ५८८
पालि बो १५, १३४, १६६, ३०५, ३८६, ५६२
पालेम्बाँग ब १२७, १६६
पावा ब ५३, ७२, ७४
पावेल, कर्नल ५०४
पिगोट, लार्ड ४६७
पिंगले, विष्णु गणेश ६३४-५
" मोरोपंत ३८२
पिट, छोटा ४७४-५
पिलाजी गायकवाड, देखिये गायकवाड़ पिलाजी
पिशीन दे ६०७
पिष्टपुर ब १५१
पीर अली ५७८
पीर मुहम्मद २८१
पीलिया खाल ३१६
पुण्ड्र या पुण्ड्रवर्धन दे १५१, १७७, २०३, २०६

पुत्तलम् ब २७०, २६२
पुदुदुकोटै दे १८५
पुदुदुचेरी ब ३६७, ४१६-२०, ४२६-३०, ४४०-१, ४४३
पुरगुप्त रा १५७
पुरन्दरगढ़ ब ३७५, ३७६, ३८५, ४६६, ४७३
" खाँ वसु २६६
पुरबिया ज ५६७-८
पुराण संहिता २६, ४४
पुरातत्व विभाग ६२३
पुरी ब ६०, २२४, २७८, २६२, २६६, ३४८, ३७६, ५०४
" दे १०६, २२७
पुरु रा ८२-४, ११४
" रा ३०
पुरुषपुर ब १२२
पुरुषोत्तम रा २६३-४
पुरूरवा रा ३०
पुर्तगाल दे २६७-८, ३५४, ३६०-१, ३६६, ३७१-२, ३७८, ३६७, ५११, ५४७
पुर्तगाली ज २६८-६, ३२६-३१, ३५३, ३६६, ३७५, ४१५-८
पुलकेशी रा १८१
" (सत्याश्रय) (२य) १८३, १८५-६, १६१, १६३, ३०१
पुलुमावी, वासिष्ठीपुत्र रा ११७
पुष्कर रा ३७
" ब ११३, ३८६-७, ४००
पुष्करावती ब ३७, ४१, ५२, ७८, ८२, १०८, ११४, १२०, १२२
पुष्यमित्र रा १०५, १०७, १३०, १३३
" (गण) ज १४४, १४६
पूना ब ११४, ३६५, ३६७-८, ३७४-५, ३८३, ४३१, ४३६, ४५१-२, ४६१, ४६८-७०, ४७३, ४७७, ४७६-८०, ४८४, ४८६, ४६६, ५०१-२, ५०४-५, ५१६-८, ६२१, ६६०
पूरणमल चौहान रा ३२५
पूरब दे १०४
पूरबी घाट गि ४, ५, २६१, ४६६
पूरब समुद्र ८७, १८५, १६६, २०६
पूर्णवर्मा रा १६६-७
पूर्णिया दे ब २६२, ५१२-४
पृथ्वीनारायण रा ६६०. ४७६
पृथ्वीराज, चौहान रा २४३-४, २५७, ३०२
" बुंदेला रा ३६३
" रासो २४४
पृथ्वीसिंह रा ३७३
पृथिवीषेण रा १४६, १५३
पेण्डारी ज ५१६-७, ५१६

पेनुकोंडा ब ३४६, ३५६, ३६८
पेनगंगा ब ४३१
पेपिंग ब २६१
पेरक दे ६०१
पेरों ४७६, ५०२-३
पेवार घाटा ६०७
पेशवा ज ३७८, ३६०, ४०३, ४०८, ४११, ४१६-२०, ४२२-३, ४२५, ४२८-८, ४३०-६, ४३६, ४४२-३, ४४५, ४४७, ४४६, ४५१-३, ४५६-६१, ४६७, ४७१, ४७३, ४७७, ४८०, ५०१-२, ५०६, ५१७-८, ५२०
पेशावर ब दे ११, १००, १०२, ११८, १२२-४, १३७, २०६, २१०, २१३, ३६५, ३७७, ४१७, ५०७, ५०६, ५२४, ५३६-४०, ५४४-७, ५६८, ५६७, ६१५, ६३४, ६५२
पेसली ब ५८७
पैठन ब ५०, ११८, १२३-४, ३६८, ४५२
पैरणार न २५५, ३६७
पैरिस ब ४४३, ५६२, ६३१, ६४४
पोप २६८-६, ३६१
पोर्ता ४६४
पोलक ५४७-८
पोर्जन नाह्व (पौलस्त्यनगार) ब ३६
पौलैण्ड दे ६४०
पौटिंजर, कर्नल ५३७, ५४०
पौफम, कर्नल ४७१
पौरव ज ३०
पौराणिक धर्म १३०, १३२-३, १६८, १७०, २२४-५, २३७, ३०७
प्यू ज १६४
प्रकटादित्य रा १७७
प्रजामंडल ६६१
प्रजावती ६५, ६१
प्रतापगढ़ ब ३७४, ३८३
प्रतापरुद्र रा २५५, २६६, २६६, २७५
” ” देव रा २६४, २६६, ३१७, ३३७
प्रताप, राणा ३४६, ३५५ ३५८
” राव गूजर ३७८
” साह रा ४७६
” सिंह, कुमार ५२५, ५५१
प्रतिनिधि ३६०
प्रतिज्ञाबद्ध कुली प्रथा ५६०, ६३७
प्रतिष्ठान ब ५०, ११३-४
प्रतिहार ज ११६, २०१, २०१, २३६
प्रद्योत रा ५६-७
प्रफुल्लचन्द्रराय ६२५
प्रभाकरवर्धन रा १७८, १८१-२

प्रभावती गुप्त रा १५३
प्रभास ४१
प्रयाग दे ब १२-३, ३४, ३८, १००, १४६, २०६, २१८, ३८८, ४१०, ४२२, ४३४, ४४३, ४७०, ५१६, ५७३
प्रवरसेन रा १४४-५, १४७-६
प्रवरसेन (२य) रा १५३
प्रशान्त महासागर १६, २५६, २६६
प्रशिया दे ६०५
प्रसेनजित् रा ५६-७
प्रह्लाद नीराजी ३८२, ३६०, ३६२
प्राकृत बो १५, ७३-४, १०८, ११६, १२३, १३३-४, २३७, ५६३
प्राग्ज्योतिष दे १८२, २०२, २०६
प्राची या प्राच्यदेश ८६-६०
प्राच्य पुरातत्व ५३३
प्राणनारायण रा ३७२
प्रान्तीय व्यवस्था सभा ६३६, ६५६
" स्वशासन ६६०, ६६२
प्राम्बनन ब १२७, २३२, २३८
प्रिन्सेप, जेम्स ५६२
प्रेस आर्डिनेन्स ६५२
प्रेस्तर जौन रा २६७
प्रोम ब १२, ५२२
फख़रुद्दीन रा २७५
फ़म्पा २६१-२
फ़तहख़ाँ ३६४
" , वज़ीर ५११, ५२४-५
फ़तहगढ़ ब ४२७, ५७४
फ़तहपुर ब ५७४
" सीकरी ब ३४८, ३५१, ३५६
फतहसिंह ३६७
फतेसिंह गायकवाड़, देखिये गायकवाड़ फतेसिंह
फ़न-ये, देखिये फ़ाहियेन
फनरन ब १२, १२७
फ़रगाना दे ११६, ३१६-२०, ६००
फरात न २७-८
फ़रारूद न २४२
फ़रीद, देखिये शेरशाह
फ़रीद, भक्त ३५७
फरीदाबाद ब ४३८
फ़र्रुख़सियर रा ४०१-६, ४२०, ४५५
फ़र्रुख़ाबाद दे ब ३३, २७४, ४०७, ४२५, ४२७, ५०१, ५२७, ५७४
फलोदी ३३५
फ़स्ता ब ४३७
फ़शोदा ब ६२१
फ़ारमोसा दे ६२१
फ़ारस की खाड़ी ६२३
फ़ारसी बो १५, ११५, २५४, ३१४, ३५६, ३७२, ४८५
फ़ाहियेन १६७-६

फ़िरंगी ३६०, ३६८, ६२५
फ़िरदौसी २१३
फ़िलिप रा ८१
" (स्पेन का) रा २६६, ३६१
फ़िलिपाइन द्वीप २६६, ३६०-१
फ़िलिस्तीन दे १६२-३, ६३१-२, ६४१
फ़िलोस, जीन ५०६
फ़िलौर ब ५७१
फीरूशहर ब ५५५-६
फ़ीरोज़, शाहज़ादा ५८१
" जंग ३८६, ३६३, ३६६, ४०२
" पुर ब ५४२, ५४६, ५४८, ५५१-६, ५६८, ६३४
" बहमनी रा २८८-६
" शाह रा १५७
फ़ीरोज़शाह, देखिये फ़ीरूशहर
" तुग़लक रा १००, २७६-८०, २८७, ३११
फ़ूनान दे १२६, १६६, २३७
फ़ैज़ी ३५२
फ़ैज़ाबाद ब ५६५, ५६६
फ़ैन्सी ३६६
फोंडा ब ३८१, ३८३
फ़ोर्ट सेंट डेविड (देवनपटम्) ४२१
फ़ोर्ड, कर्नल ४४१
फ़ौज़ी खर्च ६१७-८
फ़ाँज़ बॉप् ५६२
फ़्रान्स दे ४०६, ४२८-६, ४६३-४, ४७३-४, ४६७, ५००, ५०८-६, ५३६, ५६०, ६०४, ६०६, ६०८, ६१३-४, ६२१, ६२५-६, ६३०, ६३२, ६६३
फ़्राँसीसी ज १२६, ३६२, ३६६, ३६७, ३६६, ४२०, ४२८-६, ४३१-३, ४३५-७, ४४०-३, ४४६, ४४८, ४७३-४, ४७६, ४८०, ४८२, ४६७-५००, ५०६, ५६६, ६०६, ६०८, ६१३, ६२१-२, ६३१, ६४०
बंकिमचन्द्र ६११, ६२४
बकुलपुर ब ३०५
बंकोवर ब ६३०
बक्खर ब २७०, २७८, २६२, ३२५, ३६५, ५४२
बक्सर ब ३२५-६, ४५७, ४६८, ४७२, ६२१
बख्खर ४८३
बख़्त खां ५६६, ५७४-५, ५७७, ५८०
बख़्तबुलन्द ३६६
" मल रा ४१५
" सिंह रा ४०७, ४२४
बख़्तियार ख़िलजी, देखिये मुहम्मद बिन बख़्तियार ख़िलजी

बगदाद ब १९२, १९८, २६०, ६२५, ६३२
बगुड़ा दे २५२
बंगकोक ब १२
बंगला बो १९-२०
" अखबार ५९३
" कविता ६११
" गीत ३२५
" साहित्य ३१४
बंगश, मुहम्मद खां ४०७-१४
" क़ायम खां ४१०, ४२७
" अहमद ४२७, ४४९
बंगाल दे १, ३-४, ७, १०, १३, १५, १८, ८८, ९०, ९७, १५२-३, १७७, १७९, १८१-२, १९६, १९९, २००, २०३-५, २१६-७, २२०-१, २४५, २४९-५०, २५३. २५८, २६३, २६८, २७१, २७५, २७७-८, २८३-४, २८८, २९२, २९४, २९६, ३०३, ३०८, ३११, ३३०-१, ३३३, ३३८, ३४२-३, ३४६, ३४९, ३५१-२, ३५५, ३५८, ३६०, ३६६, ३७२-३, ३७५, ३९४, ३९७-८, ४०६, ४३०, ४२२-३, ४३७-४१, ४५४-५, ४५७-८, ४६१-२, ४६५-६, ४६९-७१, ४७३-५, ४९४, ५२२, ५२६-७, ५२९, ५३१, ५३४, ५६०, ५६३, ५६६, ५७०, ५७२, ५८९, ५९१, ५९३, ५९७, ६१०-१, ६२३-९, ६३५, ६४६-७, ६५१-३, ६५७-६०
बंगाल नागपुर रेलवे ६३५
बंगाली ज ३२६-७, ६२३, ६३५, ६५७
बघेल ब २५७
" सोलंकी ज २५७
" खण्ड दे ३४, १०७, १४३-४, २५७, २८८, २९२, ३१७, ३४८
बड़ोदा दे ब ३६२, ३६५, ४१०, ४१३, ५०१. ५८४, ६५३
बदख्शाँ दे ८, ११, ५५, ८७, ११२, ११८, १२०, १२२, २९२, ३१९-२०, ३२५, ३२७-८, ३४२, ३५३-४, ३६४
बदनसिंह ४०७, ४२७
बदर कोट, देखिये बिदर
बदरिकाश्रम २२४
बदामी ब १८१
बदायूँ ब २४४, २७०, २९२, ३२६, ४२८
बहोवाल ब ५५६

बनवासी ब १४१
बनास न ३, ४१, २९०, ३३५, ३८६
बनारस ब १०, ६६, ६८, २०६, २७०, २७४-५, २९२, ३२५-६, ३३५, ३७२, ३७६, ४०४, ४२२, ४३४, ४४३, ४५७, ४६८-९, ४७३, ४७५, ४८५, ५१३, ५२६, ५५९, ५६१-२, ५६४, ५६९-७०, ५७२, ५८०
बन्दा वैरागी ४०१, ४०३-४, ४९२
बन्दोबस्त, महालवारी ५३१
" रैयतवारी ५२८-९, ५८५
" स्थायी ५२८, ५३२, ५९९
बन्दुल ५२१-२
बन्नू ब २८१, २९२, ३२५, ६३४
बम्बई ब २८९, २९२, ३३०, ३६५, ३६८, ३८३, ३९७-८, ४०६, ४१६, ४३६, ४४२, ४५९-६०, ४६५, ४६८-७०, ४७३, ४८९, ४९९, ५१८, ५२७, ५३०, ५३५, ५३७, ५५२-३, ५७२, ५७९, ५८८, ६००, ६०२, ६०९, ६१२, ६१९-२१, ६३३, ६३८, ६६०
" युनिवर्सिटी ५९३
बयाना ब २९०, २९२, ३२३-४
बरकतुल्ला ६३४-५, ६४०
बरन ब २७३
बरमा दे ७, १२, १८, ५५, १२६, १३३. १६४, २३७, ३०५, ५१६, ५२१, ५४३, ५६३, ५८२, ५८८, ५९८, ६१३-४, ६२६, ६२९, ६३४, ६४८, ६५६, ६६०
बरमी ज ५२१-२
बरमक ज १९८
बराड़ दे ५, १३, ३८, २६४, २८८, २८९, २९४, ३१८, ३२५, ३४९, ३५१, ३५५, ३६४, ३६८, ३८१, ३९१-३, ३९६, ४०३, ४०९, ४१९, ४३२, ४९९, ५०१, ५०२, ५०४, ५०५, ५१८, ५६०, ५६४
बराबर गि १०१
बरीद ज २९३
बरीदशाह ज ३१८
बरेली दे ३३, ४२५, ५६९, ५७४-५, ५८१, ६५७
बरोज़ ६०८
बर्जेस ६११
बर्दवान ब ३९८, ४२२, ४५४, ५८९
बर्नार्ड ५७२
बर्बरा ब ६०९

बर्लिन ब ६०६, ६२५
" बगदाद रेलवे ६२२
बर्मा ५३७-८, ५४०-१, ५४६, ५६२
बलकाश दे ६००
बलख दे ८, ११, ५६, १०५, १११, ११८, १२०, १२८, १५०, १५२-३, १६६, १६८, २०६, २५६, २६२, ३२५, ३३५, ३५३, ३६४
बलपुत्रदेव वर्मा रा २३४
बलबन, ग़यासुद्दीन रा २५१-४, २६८
बलभद्रसिंह थापा ५१३-५
बलवन्तराव महेन्द्रेले ४३६-३०, ४४७
बलसार ब ३६८, ३८३
बलोच ज ५०६, ६३४
बलोची बो १६
" पूर्वी बो १६
बल्हारा (वल्लभ राजा) २०३
बसई ब ३३०, ३६५, ३६८, ३८३, ३६७, ४१६, ४७२, ४८६, ५०१, ६६०
बसरा दे ६३१-२
बसवा गाँव ब ३२४-५, ३२८
बसाद ब ५३
बसावन ३५६
बस्तर दे ५०, १४४, १४७, ३६८
बस्ती दे ६५
बहमन रा २७६
बहमनी रियासत २७६, २८८-६, २६१, २६३-४, ३०४, ३०५, ३४४
बहराइच दे ५१, ३२५-६, ४६६
बहराम गज़नवी रा २४२
बहलोल लोदी रा २६४, २६६
बहिष्कार या बहिष्कार आन्दोलन ६२४, ६२६, ६४१-२, ६४४, ६४७, ६५०, ६५६
बाकरगंज दे ३६०, ३६५
बाकू दे ६३२
बागलान दे २६६, २६२, ३२५, ३८१
बाघ ब २३०
बाँकुड़ा दे ४२२
बाज़बहादुर रा ३४४
बाजी प्रभु ३७४
बाजीराव (१म) पेशवा ४०८, ४२०, ४२३, ४५०, ४८८
" (२य) पेशवा ४८०-१, ४८८, ४६२, ५०२, ५६४, ५८१, ६६०
बाजौर दे २६२, ३२०, ३२५, ३५४, ३७७, ६१५
बाजौरी ज ३२१
बाद ब २६६, ३३५
बाणभट्ट १८३

बादरायण १३४
बानगढ़ ब ४२४
बानगंगा न ४५१
बाँदा दे ४०८, ४७०, ५८०-१
बाँदाकुई ब ३२४
बान्धोगढ़ ब ३१७, ३२५
बाँसखेड़ा ब १८४
बापू गोखले ४१८
बापू शिन्दे ५०५
बावनिया २७८-६
बाबर रा ३१६-४, ३२६-७, ३२६, ३३३, ३७७, ४८२
बाबुलो ज २८, १६१
बामियाँ गि १७२
बायजाबाई ४३४
बारकपुर ब ५२२, ४६६, ४७०
बारडोली दे ६४३-४, ६४२-३, ६४५
बारा भाई ४६७-८
बारामती ब ३६८
बारामहाल दे ४४६, ४७६, ४२६-७
बालकन दे २६७. ६०६, ६२६
बालश्री, गौतमी रा ११४
बालाजी कुँअर ४१६
" गोविन्द बुन्देला ४७०
" जनार्दन भानु, देखिये नाना फडनीस
" नातू ४१८
बालाजी राव, पेशवा ४२०, ४२२, ४२३-४, ४३१, ४३३, ४३६-७, ४४३, ४५०-१, ४४६, ४८८, ४६१
" विश्वनाथ भट्ट पेशवा ४० २-३, ४०४-६, ४०८
बालादित्य भानुगुप्त १४८-६, १७७
बालापुर ब ४७३
बाला साहेब ५७३
बाली रा ३६
बालेश्वर ब ३६४-६ ३६८, ६३५
बालोबा ४८०
बाल्टिक सागर २४६
बाल्तिस्तान दे २८७
बावडेकर, रामचन्द्र नीलकण्ठ, देखिये रामचन्द्र नीलकंठ बावडेकर
बाबुल, देखिये बावेरु
बावेरु दे २८, ४२, ४६, ४८-६०, ७४
बाख्त्री (बलख) दे ५६-६०, ८१-२, ८६, १०४-६, ११२
बाह्मनाबाद ब ८२, १६४, २०६
बाह्लीक. देखिये बलख
बिजनौर दे ३१
बिठूर ब ५२०, ४६४-६, ५७८
बिठोजी होल्कर, देखिये होल्कर, बिठोजी
बिदर ब दे २०७, २७६, २६१-३,

३१८, ३२५, ३४५, ३६५, ३६८, ३७०, ३८३, ३८८, ४८०
बिन्दु सरोवर २२७
बिन्दुसार अमित्रघात रा ८७-८
बिम्बिसार रा ५६, ६८
बिलोचिस्तान दे ८, २८, ६०५
बिल्वतिक्त ब १२७, २६०, ३०५-६
बिहार दे २, ४, १०, १३, १५, ३८, २४५, २४६-५०, २६१, २६८, २७०, २७५, २७७-८, २८४, २८८, २९४, २९६, ३२१, ३२३, ३२५-७, ३२९, ३३१-२, ३३५, ३४२-३, ३४९, ३५१-२, ३५५, ३६६, ४०१, ४१०, ४२२-३, ४३७, ४४०, ४४३, ४५४-५, ४५७-८, ४६१-२, ४६५-६, ४६८, ४७५, ४९४, ५१४, ५२६, ५२९, ५३१, ५६०, ५७०, ५७२, ५७८, ५८९, ६२९, ६३७, ६५२, ६५९
बिहारी, कवि ३७२
बीकानेर ब २९२, ३१६, ३२५, ३३५, ४३५, ५०९
बीजापुर दे ब १८१, २९२, २९४, २९९, ३१७-८, ३२५, ३३०, ३३४-५, ३५५, ३६२, ३६४-५, ३६७-७०, ३७२, ३७४, ३७६, ३८१-३, ३८५, ३८८-९, ३९१, ४००, ४४३
बीना न १४८
बीबीगढ़ ५७४
बीरभूम दे ४२२
बीसलदेव चौहान रा २२०-१ २३६, ५९१
बुक्क या बुक्कराय रा २७४-५, २७९
बुख़ारा ब ८१, १९८, २०३-४, २०८-९, ३६४, ५३६, ५३८, ६००
बुगराख़ाँ, देखिये नासिरुद्दीन महमूद
बुटवल ब ५१३
बुध (सिद्धार्थ गौतम) ५१, ५३, ५६-८, ६४-६, ७१-४, ७८-९, ८३, ९८, १०२, १०९, १३०, १३३, १३६-७, १६७, १७२, २२३
बुद्ध गुप्त रा १५६-७
" सिंह हाड़ा रा ४१३
बुद्ध घोष १६९
बुनेर ब ३२१, ३२५
बुन्दरी ब ५५७
बुन्देल-की-सराय ब ५७२
" खंड दे ३, ४, १३, १५, ३७,

२८८, २६२, ३१७, ३३८-६, ३४५, ३५८, ३८५, ३९३-४, ४०६, ४११-३, ४४३, ४४५, ४५१, ४८७, ५०४-५, ५१६, ५६३, ५७६, ५८१

बुन्देला ज २८८, ३८५, ३९६, ४०५, ४०७, ४१०-१२, ४८२, ४८७-८,

बुन्देली बो ४८८

बुरहानपुर ब ३३६, ३६०, ३६५, ३६८, ३७६, ३८३, ४०५, ४१६, ४३१-२, ५०४, ५०६, ५२०

बुरंजी ३१४, ३७२

बुलगारिया दे १५५, २५६

बुलन्दशहर दे २७३, २८४

बुलसाड ब ३३०

बुशहर ब ४६६, ५६५

बुसी, दि ४३०-१, ४३५-६, ४४१-२, ४७४

बूँदी दे ४१३, ४४६

बृहत्कथा १३४

बृहत्तर भारत दे १२६, १६४, १६७, २१७, २३१, २३७, ३०५

बृहदीश्वर मंदिर २१६

बेंगलूर ब ३६४, ३६८, ३८३-४, ४४२, ४६०, ४७६

बेजवाड़ा ब ३१७, ३२५, ३६८

बेड़च न ३८६

बेतवा न ३, ४१

बेतिया ४६०

बेदनूर या बेदनोर ब ३६४-५, ३८१, ३८३, ४१०, ४३६, ४५६

बेंटिंक, लार्ड विलियम ५२६-७, ५३१-२, ५३४-५, ५३७

बेलगाँव ब ३६८, ३८३, ५७२

बेलबाग ४८४

बेली ४७१-२

बेल्लारी दे ३६८, ३८३-४, ५२६

बैकाल झील ५३६

बैरम ख़ाँ ३४२-४, ३५४

बैस ज १७७-६

बोअर ज ६२२

बोधिवृक्ष ६७, ६७, १८२

बोनापार्त, नैपोलियन, देखिये नैपोलियन बोनापार्त

बोरसद दे ६५३

बोरोबुदुर १२७, २२७, २३१, २३८

बोर्ड आव् कंट्रोल ४७१-५ ५८८

" " रेवेन्यू ४६६

बोर्नियो दे १६६, ३०५

बोलान दर्रा ८, ११, ३६५, ३७३, ५४२, ६०५, ६१४

बोलैार दे ११४, १६६, २०६, २८७, ५४३
बोल्शेविकी दल ६३२
बोहीमियाँ दे ३२३
बौद्ध धर्म १३३, २०२, २०८, २११, २२३-४, २६१, ३०५
बौद्ध वाङ्मय ५१२
ब्रज दे ४३८, ४८२
ब्रह्मपुत्र न ३, ७, ११, १५६, १७५, १८१
" पुरी ब ३८३, ३६१-२, ३६५
" गुप्त २३२
ब्रह्मा देवता ३०७
ब्राइडन ५४६
ब्रांका ४६४
ब्राहुई बो १६
ब्राह्मी बो १६६, ५६३
ब्रिगमैन उर्फ़ एवोरी ३६८
ब्रिटिश व्यवसायी ६४३
ब्रिटेन दे ६००, ६०६, ६२१, ६३०, ६३६, ६६३
ब्रोक वानडर ३६२
ब्यावर ब ३८६
ब्यास, देखिये व्यास न
ब्ल्यूखर ५११
भगतसिंह ६४७-८, ६५३, ६५५
भगवद्गीता ७६
भगवानदास रा ३५५
भज्जा ३६४
भटनेर ब २८१, २६२
भटार्क १७६, २४६
भटिंडर २४६, २७०
भट्टाचार्य, नरेन्द्र देखिये नरेन्द्र, भट्टाचार्य
भंडि १८२, १६६
भंडिकुल ज १६६
भदावर ब ४१४
भद्रक ६६
भद्रावर्मा (१म) रा १६६
भद्रावती ब १५१
भद्रावती (भांदक) ब २०५-६
भरत रा ३०-४, ३७-८, ४६-५०, १७५
भरतपुर ब दे १४३, २६०, ३६४, ४२७, ४४४-७, ५०६, ५७०
भरुकच्छ (भरुच) ब ५१ ५२, ५५-६, ७५, ८६, ११३, १७६, १८१, १८३-४, २०१, २०६, ४६६-७०, ४७३, ५०३
भवभूति २३२
भवनाग रा १४४
भाऊ, सदाशिवराव ४४२, ४४५-६
भागलपुर ब ५१, २०२, २६२-४, २६६, ३३१, ६५२
" दे १२८, १४३, १६८

भागवत ३१४
भागवत धर्म १३२
भाटिया दे २१०
भाटी राजपूत ज २१०, ३६५
भातगाँव ब ४६०
भानुगुप्त बालादित्य रा (२य) १५६-८, १७७
भानुदेव (२य) रा २६६
" (३य) रा २७७-८
भांडारा दे ३६८, ४८८
भामो ब १२
भारत ब ११२, ११५-६, १२६, १२८, १३२-३, १४७, १५५, १६६, १६८-७०, १७५, १७६, १८३, १८८, १६८, ४०८, ४१३-४, ४२१, ४२५, ४२८, ४३२
" (उ) १२४, १४१, १५३, १७७, १७६-८०, १८७
" (प) १२४, २१६, ३१८
" बृहत्तर, देखिये बृहत्तर भारत
भारत ज ३२, ३८, ४४, ५३, ५६
भारत का कर्ज़ ६०२
भारत-प्रवेश-फ़रमान ६३३
भारत मन्त्री ५६५, ५६६, ६०१, ६०३, ६१६, ६४६, ६५६
भारत-रक्षा-क़ानून ६३५, ६३८
भारतीय कारीगर ५८६
भारतीय दंड-विधान (इंडियन पिनल कोड) ५३४
भारतीय पुरातत्त्व ६१२
भारतीय राष्ट्रीय दल ६३४
भारतीय लिपि १८६, २६२, ३०५
भारतीय सेना ५००, ६२२, ६३१-२, ६६३
भारमल रा ३४४, ३५५
भारशिव ज १४१, १४३-५, १७०
भारहुत ब १०५, १३५, १३८, ५१२,
भालकी ब ३६८, ३८३, ४३२, ४३५
भावनगर ब १७६
भास ५६, १३४
भास्कर कोल्हटकर ४२२
" पन्त ४२२
" वर्मा रा १८२-३
भिन्नमाल (भीनमाल) ब १७६, १८४, १६५, २०१-२, २०६, ३८६
भिल्लम २२२
भीटा ब १४४, १६१
भीम ३६
भीमसेन थापा ५१२, ५२३, ५४६, ५५३
भीम सोलंकी रा २१२, २१६
भीमा न ३२१, ५६८

भुवनेश्वर ब १०७, २०६, २२७, २३०
भूटान दे ७, ५४३, ६००
भूमध्य सागर १२८, १६७, ४०६ ५००
भूपेन्द्रनाथ दत्त ६२४
भूषण कवि ४८३
भृकुटि रा १६०
भृगुकच्छ, देखिये भरुकच्छ (भरुच)
भेरा ब २१०, २७०, २६२, ३२१, ३२५
भेलसा ब १०७-८, १४१, १५१, १७३, २४६, २६३, २७०, ३१७, ३२५-६, ३२६, ३६६, ५०५
भोगवर्मा रा १७८
भोगेश्वर रा २७८
भोज, देखिये मिहिर भोज
" परमार रा २१२, २१८-६, २३६, ३३७
" पुरी ज ३००, ३४०
भोजराज रा ३२८
भोपाल दे ३१७, ३२५. ४०५, ४१५, ४७०
भोला भीम २५७
भोंसले, अप्पासाहब, देखिये अप्पासाहब भोंसले
भोंसले कान्होजी रा ४०३
" जनोजी रा ४५६
" मुधोजी ४७०-१, ४७३-४, ४८०
" रघुजी ४१६-२४, ४३१, ४८०, ५०१-२, ५०४-६, ५०८, ५१७, ५३२
मअबर दे २५६-७, २६० २६७, २६६, २७१-३, २७५
मऊ ब ५७०, ५७६-८०
मकदूनिया दे ८०-१,
मकबूल, ख़ानेजहान २७७
मकरान दे ११, ५६, ८१, १८४, १६३-४, २०६, २६२, ३५४
मक्का ब १६१, ३५४, ३६६
मख़दूम-ए-आलम ३३०
मग ज १३३, २५८
मगध दे ३८-४२, ५१-३, ५६-७, ६१, ६३, ६८, ७४, ७७, ८०, ८६, ८८-६, १०२, १०६, ११३, ११७, १२१, १२३, १३६, १४६-७, १६८-६, १७७, १८१, १८७, १६०, १६५-६, १६६, २०६, २१८, २२१, २३२, २३४, २३६, २४४-५, २५७, २७८
मंगल पांडे ५६६

मंगलूर ब ४७४
मंगोल ज २४८, २५०, २५२-४, २५९-६६, २७२, २७४, ३१४-५, ३१९-२१, ३२४, ५३६
मंगोलिया दे १११, ११९, १२२, १७६, २५९, २६१, ६३०
” बाहरी दे ६३०
मंगोली बो १९८, २४८, २६२
मंजुपत्तन ८६, १०२
मचाओ ब ५४७
मजपहित ब १२७, २६०
मणिपुर दे ब ११, ३४६, ५२१, ६१४
मण्डन मिश्र २२४
मण्डला ब २९२, ३१७, ३२५, ३४४, ३५८, ३६५, ३६८, ४११, ४८८
मण्डलीक रा २७६, २९५
मण्डी ब ५२०
मत्सय दे ४०-१, ५१-२
मथुरा दे ब ३७, ३९, ४१, ५२, ५५-६, ६२, ८६, १०३, १०६-७, ११३-४, १२०, १२२, १४३, १५१, २१२, २१४, ३६३, ३६५, ३७३, ३८४, ३९५, ४१४, ४३४, ४३७-८, ४४९, ५०४, ५०६
मदगास्कर दे १२८, ३६७, ३९९
मदनसिंह ४०५
मदन पण्डित ३८२, ३८४, ३८९
मदीना ब १९१
मदुरा (मथुरा) ब ६२, ८९, २०६, २५४, २६७, २७०, २७५, २७९, २९२, ३६५, ३६८
मद्र दे ३८, ४१, ५२, १०७, १४५, २०१, २०६
मद्रक ज १४५, १४८, १५१
मद्रास दे ब १२, २६६, ३६८, ३९८, ४२९, ४३६-७, ४४१-२, ४५९, ४६१, ४६५, ४६७, ४७१-३, ४७९, ४९९, ५२१, ५२६-७, ५२९-३१, ५७२, ५८५, ५९२, ६०२, ६०५, ६०९, ६११, ६१६, ६५६
मद्रास युनिवर्सिटी ५९३
मध्य एशिया, देखिये एशिया मध्य
मध्यदेश दे ५२, ६१, ८९-९०, १०४, १०६-७, ११६, १२१, १२३, १६८
मध्य प्रान्त दे ५१९, ५३३, ५९८, ६५२, ६५९-६०,
मध्य भारत ५२६
मनुस्मृति १३४, १४०, १६४, ५९३
मनु १३४
मन्दसोर ब १६०, ३२५, ३२९, ३८६, ३९३, ५१९

मन्दारण ब २५८, २७०, २६२, २६६, ३२५
मयूरभंज दे ३४८
मयूरशर्मा (कादम्ब)) १४६, १४६
मराठा ज ३८८-६१, ३६३, ४०४-५, ४०७-१६, ४१८-२०, ४२३-५, ४२७-३७, ४४०, ४४२-३, ४४५-६, ४५१-३, ४५७-८, ४६०-१, ४७०-१, ४७३-४, ४७६-७, ४७६-८४, ४८६-६१, ४६४, ४६८-६, ५०१-२, ५०४, ५०६-८, ५१०, ५१६-८, ५२०, ५२३, ५३०, ५३३, ५३६, ५६४, ५६८
मराठी बो १५-६, १६, ५६३, ६११
मरे, कर्नल ५०५
मर्त्तबान ब १२७, ३०५
मर्व ब १८८, ३२०, ३२५, ६१३
मलक्का दे १२८, १६६, २६६
मलबार दे ५, ८८, २६८, ३६८, ४५६, ४७६, ५२६-७
मलय गि ४, ५, १४, ४१
मलयालम बो २०
मलवल्ली ब ४६६
मलाकन्द दर्रा ५६७, ६१५
मलान या मलन दे ८, ८२
मलाया दे २१७, ६०१, ६२६-३०, ६३४
मलिक अम्बर ३६०, ३६२, ३६४
” काफूर २६५-८, ३००
” खुसरो, देखिये खुसरो मलिक
मलूकदास ३५६
मल्ल दे ६६
मल्लिकार्जुन रा २६१, २६३
मलहार राव होलकर ४०४, ४०६, ४११, ४१३-४, ४१७, ४२३, ४२७, ४३४-५, ४३६, ४४५-६, ४४८-६, ४५१, ४५३, ४५८, ४६०, ४६१
मसऊद रा २१८, २२६
मसुलीपट्टम १२, ३६६, ३८६, ३६७, ४३०, ४४१-२
मस्कत ब ६२२
महमूद खिलजी रा २८६-६०, ३२८
” गज़नवी २०६-१६, २२१, २२६-७, २२६, २४२, ३००-१, ५४८
” गवाँ २६३
” (२य) रा ३१७
” शाह बंगाली रा ३३०-१
महमूद पुर (लाहौर) ब २१६
” बेगढ़ा रा २६५-६, २६६, ३११, ३२०
” लोदी रा ३२३, ३२६

महमूद शाह रा ४६६, ५०६, ५११, ५२४
महमूदाबाद ब २६५
महरौली ब १५२-३
महाकान्तार दे १४७, १५१
महाकाल मंदिर २४६, ४८४
महाकोशल दे ५६, २०५, २५७, २७१, २८८
महाचीन दे २५६
महात्मा गाँधी, देखिये गाँधी
महादजी शिन्दे ४६०, ४६८, ४७०-३, ४७६, ४८६, ४९८-६, ५५०
महादेव गि ५२०
महानदी न ३, १२, ४१, ३८६
महानन्दी रा ६१, ८०
महापद्म नन्द रा ८०
महाबत ख़ाँ ३५८, ३६२
महाबन्धुल, देखिये बन्धुल
महोबा ब २०५-६, ४१०, ५८१
महाभारत ३०, ३७, ४२, ४४, ५०, ७६, ७६, १३४, ३१४, ३५६
महाभाष्य १३३
महाभिनिष्क्रमण ६६
महायान १३०, १३३, १३४, १६८-६, २२३, २२५
महायुद्ध ६३६, ६४३
महाराजपुर ब ५५१
महाराष्ट्र दे १३-५, २६, ५०, १०४, ११३, १२३, १३५, १४१, १४४, १४६, १४६, १५३, १५५, १७१, १८३, १८५, २००-१, २०४, २०६-७, २२२, २५४, २५७, २६७, २६६, २७१, २७६, २६४, ३०८, ३७२, ३७६, ३८२, ३८४-५, ३८८-६, ३६१-३, ३६५, ४०२-३, ४०७-८, ४१२, ४१६, ४२३-४, ४३०, ४३६, ४५०-३, ४६१, ४६८-६, ४८१, ४८३, ४८६-६, ५०२, ५१६, ५१८, ५२०, ५२६, ५६३, ५७२, ५८३, ६०६, ६२४, ६२६, ६२८, ६६२
महावीर, वर्धमान ५१, ६४-५, ७४, १३३
महासेन गुप्त रा १७८, १८१-२
” गुप्ता १७८
मही न ३
महीदपुर ५१६
महीपाल रा २०४
” (पालवंशी) रा २०५, २१७-८
महेन्द्र गि ५, १५१, १५६
” ६७

महेन्द्र रा २८४
" पाल प्रतिहार रा २०३-४, २३६
" प्रताप राजा ६३५, ६४०
" वर्मा पल्लव रा १८४-५
माईवन्द ब ६०८
मांगरोल ब ४५१
मांचेस्टर ब ४६४, ५८६
मांजरा न ४४२
माट ब १२२
मांट गुमरी दे २८
मांडलगढ़ ब २६०, २६२, ३८६
मांडू ब २८६, २६२, ३१७, ३२५, ३२८, ३३६, ३६२
मातबरसिंह ५४३, ५५६
माद्री रा ३८
माधवगुप्त रा १७८, १८१, १८७
माधवराव पेशवा ४५१-२, ४५६-६१, ४६७
माधोदास, देखिये बन्दा वैरागी
माधोसिंह रा ४२३, ४४६, ४५३
मानकू खान रा २५६, २६१
मानव ज ३०
मानवसीति ब ६१
मानवेन्द्रनाथ राय (नरेन्द्र भट्टाचार्य) ६४६
मानसरोवर ५४५
मानसिंह रा ३४४, ३४६, ३५२, ३५४-६
" तोमर रा २८५
मानिकपुर, देखिये कड़ा मानिकपुर
मानुपुर ब ४२५, ४२७
मांदले ब ६१३
मान्धाता रा ३०, ३८
मान्यखेट ब २०२-३, २०६-७
मामल्लपुरम ब १८५-७, २०६, २३०, २३६
माया रा ६५
मारवर्मा कुलशेखर, देखिये कुलशेखर मारवर्मा
मारवर्मा सुन्दर पांड्य रा २५४-५
मारवाड़ दे ६०, १२३, १७६, १८१, २०१, २४४, २६६, २६०, ३११, ३१६, ३२६, ३४४, ३७२, ३८६-८, ३६५, ४००, ४०५, ४०७-८, ४२३, ४३४, ५८७
मारिशस दे ५११, ५६०
मार्को पोलो २५५-६
मालकम, जौन ४८६, ४६८, ५००, ५०७-८, ५२६-७
मालखेड, देखिये मान्यखेट
मालदा दे ३११, ३६८
मालदिव दे २१७

मालदेव रा ३२६, ३३४-६
मालव दे ८२, १२७, २०२, २०६
मालवगण ८५, १०६, ११३, ११५, १४३, १४८, १५१
मालव संवत् ११५
मालवा दे ३, १३, ३८, ६०, १०७, १२३, १४३-४, १४६, १५६-७, १५६, १७६, १८१-२, २०१, २०४, २०६-७, २१२, २१८-२०, २३०-१, २४६-५०, २५२-३, २५७, २६३-६, २७१, २७०, २८२, २८४-६, २८८-९२, ३०४, ३१०, ३१३, ३१६-७, ३२४-६, ३२८-३१, ३३४-६, ३३८, ३४३-५, ३४६, ३५१, ३६३, ३६८, ३७३, ३९६, ४०५, ४०८-११, ४१३-५, ४२२, ४४६, ४७२, ४८६, ४८८, ५०५, ५१६, ५७१
मालविकाग्निमित्र १०७
मालिनी (मालिन) न ३१
माली, जाम २७८-६
माल्टा दे ६०६, ६४५
मावरी ज ६००
मावली ब ३७४
माहिष्मती ब ३८, ४१-२, ५२-३, ८६,
" दे १४४
मिट्ठनकोट ब ५३७
मिताक्षरा २३७
मित्रराष्ट्र ६३०, ६३२, ६४५
मिदनापुर दे ४५४, ६५२
मिथिला ब ६१, ७४, १९६, २००, २०५-६, २७८, २९६, ३०८, ३२१, ४६०
मिथ्रदात (२य) रा ११२, ११५
मिन्टो, वाइसराय ५०७-६, ५११, ५२१, ५३१-२, ५९१, ६२६, ६२८
मियानी ब ५४६
मियाँमीर (लाहौर) ब ५६८
मियाँमीर, सन्त ३७६
मिराशी या मिराशदार ५३०
मिर्जापुर दे १००, १४३
मिर्जा हैदर रा ३३३-४, ३४१
मिश्र या मिस्र दे २८, ५८-९, ९७, १२८, १६७, १९२-३, २९७, २९९, ४९७-८, ५००, ५८८, ५९६-७, ६०४, ६०६, ६०८, ६२१, ६२८, ६३१, ६६३
मिस्र युद्ध ६१६
मिस्लें ४५४
मिहिरकुल १५७-९

मिहिर भोज या भोज रा २०२-४
मीडोज़, जनरल ४७६
मीमांसा दर्शन १३४
मीर कासिम रा ४५४-७, ४८६, ४८६
" जाफ़र रा ४३६, ४५४, ४५६, ४५८, ४७४, ५४१
" जुमला ३६६-७०, ३७३-५, ३७३
मीरनपुर कटना ब ४६१
मीरपुर ब ५०६
मीर शहाबुद्दीन, देखिये फ़ीरोज़जंग
मीर होज़ेम २६६
मीरान ब २३०
मीराबाई रा ३११, ३२४, ३२८, ३४६
मुअज्ज़म, शाहज़ादा (शाह आलम) ३७५, ३७८, ३८७
मुइनुल्मुल्क ४२५-८
मुकुन्दरा घाटी ४१३, ५०५
मुकुन्द हरिचन्दन देव रा ३४६, ३४८
मुक्तापीड ललितादित्य, देखिये ललितादित्य मुक्तापीड
मुग़लानी बेगम ४२८, ४३५
मुगुसुद्दीन तोग़रल २५३
मुंगी-शेवगांव की सन्धि ४१०
मुंगेर दे ब १०, २२१, २६४, २६६, ३३१, ३७२, ४२२, ४५५
मुंज परमार रा २०७, २१२
मुंड ज १८-६, २७; बो १८
मुंशीराम ६२५
मुज़फ़्फ़र जंग ४२६-३०
" नगर ब ४४८
" पुर दे ब ५३, ६१५, ६२६-७
" शाह रा २८५-६
" " (२य) रा ३१७, ३२८
मुजाहिद रा २७६
मुदकी ब ५५४-५
मुद्गल दे २८६, २६२
मुनरो, मेजर ४५७, ४७२
" सर टामस ४८१, ४६८, ५२६-८, ५३०-१
मुबारक शाह रा २६८-६, २८४
मुबारिज़ ख़ाँ ४०६
मुमताज़ महल रा ३५६, ३७०
मुम्बई, देखिये बम्बई
मुरा ८६,
मुराद ३७२-३
मुरादाबाद ब ४२८, ५१५
मुरारीराव घोरपडे ४२०, ४२२, ४३१-२, ४३६, ४४२
मुर्शिदकुलीख़ाँ ४०६, ४२२
मुर्शिदाबाद ब ४२२, ४३६, ५१३, ५८७
मुलतान (मूलस्थानपुर) दे ब १४, १२१, १३३, १८४-५, २०३,

२०६, २१०-३, २२५, २४२, २४६, २५० २५२-३, २६४, २७०-२ २८१, ५ ८७, २८२ ३२१, ३२५, ३३५, ३३६, ३५१, ३५४, ३६५, ४४०, ४७७, ५०६, ५२४, ५३७, ५६१-२, ५६१ ६०२, ६४५
मुल्हेर ब ३६८ ३८१, ३८३
मुस्लिम कालेज अलीगढ़ ६०६
" लीग ६२६, ६३७
मुहम्मद हज़रत १६१, २१६, ५६७
" अज़ीम रा ५२४
" अमीन ख़ाँ ४०२-३, ४०६-७, ४०६
" अली रा ४२६-३१, ४३५-६, ४३६-४० ४५७-६, ४६६-७, ४७५, ५००, ५२८
" अली मौलाना ६३१
" आदिलशाह रा ३६२, ३६६
" इब्न क़ासिम १६४, १६५-६
" ख़ाँ, देखिये बहार ख़ाँ लौहानी
" ख़ाँ बंगश, देखिये बंगश
" ग़ोरी, देखिये शहाबुद्दीन ग़ोरी
" तुग़लक़ (जूना) रा २७२-४, २७६-८
" बिन बख़्तियार ख़िलजी रा २४४-६, २४६, २५२, २६१
मुहम्मद शैबानी ३१६-२०, ३२४
" शाह (२य) बहमनी रा २७६, ३०८
" " (१म) रा २७६
" " (३य) रा २६३
" " रा ४०५, ४०७, ४०६, ४१४, ४१७-६, ४२१, ४२३, ४२७
" " देखिये अदाली सूर
" सुलतान ३७३
" हकीम रा ३४२, ३४६, ३५२
मूर ज २६७, २६६, ३०५, ३१५
मूरक्राफ़्ट ५३६
मूलक दे ५०, ५५
मूलराज सोलंकी २०६
" " (२य) रा २४२
" दीवान ५६१-२
मूलवर्मा रा १६६
मूसी न ५०
मेकला दे १४४
मेकौङ न ११, १२६
मेक्सिको दे ३३०
मेगास्थेने ८७, ६०, ६४, १०३
मेच ज २४६
मेटकाफ़, सर चार्ल्स ५१०-१, ५२३, ५२६-७, ५३२

मेड़ताँ ब ३३६, ३४४, ३६५, ३८६-७, ४७७
मेदिनीपुर दे ब २५१, ३६८, ४२२-३, ४५७
मेदिनीराय रा ३१७, ३२६, ३३१, ३३५
मेनन्द्र रा १०८-६
मेयो, लार्ड ५६५-७, ६०१-२, ६१२
मेरठ दे ब ३१-२, २८१, २६२, ५१२-३, ५६७-८, ५७२, ६०७, ६४८, ६५७
मेरा अप्सरा २३८
मेव ज २५०, २५२-३
मेवाड़ दे २४६-५०, २६४-५, २७४, २८३, २६०-२, ३०२, ३०४, ३१६-७, ३२६, ३२८-६, ३३४, ३४४, ३४६-७, ३४६, ३५८, ३८६-७, ४००, ४१४, ४५६, ४७७, ५८३
मेवात दे २५०, २५२, ३६४, ४००, ४५२
मेसोपोतामिया दे ६३१
मेहदी ६०८
मेहरुन्निसा ३५८
मैकडानल्ड, राम्से ६५६-७
मैकनाटन ५४१-२, ५४४-६
मैकाले ५३३-४, ५६३
मैगलान २६६
मैत्रक ज १७१, १६५, २४६
मैथिली बो ३१४
मैलेट ४७८
मैसूर दे ५, ७, १००, २००, २२२, ३६०, ३६७, ३८३, ४३०-२, ४३६, ४३६, ४४२, ४५६-६०, ४८१, ४६८, ५००-२, ५३५, ६०५, ६६१
मोकल रा २८३, २८६
मोग्गलान (मौद्गलायन) ६८-६
मोज़ाम्बीक जलग्रीवा ३६८
मोतसिम-बिल्ला, खलीफ़ा २६०
मोती मस्जिद ३७०-१
मोरंग दे ५१४
मोरिय ज ८६
मोस्टिन ४६१, ४६७-६
मोहकमचन्द ५११
मोहन जो दड़ो ब २८
मोहनदास करमचन्द गाँधी, देखिये गाँधी
मोहमन्द दे ६१५
मौखरि ज १७७-८१, १६६
मौडस्ले ४६५
मौण्टेगू, भारतमंत्री ६३८
,, चेम्सफ़ोर्ड सुधार योजना ६३८-६

मौन्सन ५०५-६
मौर्य ज ८६-६०, ६२-५, १०२-७, ११०, १३०, ५६३
" चन्द्रगुप्त, देखिये चन्द्रगुप्त मौर्य
मौर्ली, जान ६२६
मौर्स ४६०
म्यम्म (बरमी) बो २०
यंग हस्बैंड ६२३
यजु संहिता ४४
यज़्दगुर्द (२ य) रा १५६
" १६२, २०८
यज्ञश्री शातकर्णि रा १२४-५
यतीन मुखर्जी ६३५
यतीन्द्रनाथ दास ६४८
यदु, देखिये जलालुद्दीन
" रा ३०
यन्दबू ब ४२२
यमुना, देखिये जमना
ययाति रा ३०
यरवदा ब ६५२, ६५६
यवद्वीप दे १२८, १६६, १६८-६
यवन ज ६८, १०४, १०८, ११३, १७४
" (युरोपियन) १४५
यशवन्तराव दाभाडे देखिये दाभाडे, यशवन्तराव
यशोदा ७४
यशोधरपुर ब १२७, २३८
यशोधर्मा रा १५६, १५८-६०, १६१, १७७, १७६, १८१
यशोवर्मा रा २३८
" रा १७८, १६४-७, १६६, २३२
" चन्देल रा २०४
यशोहर ब २६८, २६४
यहूदी ज २८, १६१
याकूब-ए-लैस २०४
" खाँ ६०७
यागिस्तान (गान्धार) दे ८
याङ् चेक्यांग् न २७, ४४८, ६२१
याज्ञवल्क्य-स्मृति १३४, १४०, १६४, २३७
यातुङ ब ६२३
यादव ज ३७-८, १४५, २२२, २६६, ३०८
यारकन्द न ८, ६०, ११६, २०८, ५३६
युइचि (ऋषिक) ज १११, १२०, १२४
युक्त प्रान्त दे ४३३, ६४६
युगान्तर ६२४, ६२७
युधिष्ठिर रा ३६
युनिवर्सिटी ६२१, ६२३
" कानून ६२३
युराज १८, ५३६

युरोप दे १७-८, ८१, १५४, १७५, १९८, २५६-७, २६२, २९७, ३१५, ३५४, ३६१, ३७२, ४०६, ४२१, ४३७, ४८५, ४९२-५, ४९७, ५०८, ५११-२, ५६५, ५८७, ५९३, ५९६, ६०४, ६०६, ६२४, ६२८
" मध्य दे १५५
" पश्चिमी दे १७६, १९६, ३१४
युवानच्वाङ १८३, १८८, २०५, २२३, २३७
यूनान दे ५८-९, ७५, ८१, ८४, ९७-८, १११, २९७, ६४५
यूनानी ज ८०-१, ८६-७, ९९, १०५, १०७-९, ११२-३, ११५-६, १२३, १२८, १३३, १३७, १७५, २९८, ५९३
" बो १०८, ५९१-३
यूसुफ़ज़ई ज ३७७
येसूबाई ३८९-९०, ४०५
यौधेय गण ज ४१, १०९, १२१, १२३, १४३, १४८, १५१
रक्सौल ब ५१५
रघु रा ३३, १७५
रघुजी भोंसले, देखिये भोंसले, रघुजी
रघुनाथ नारायण हनुमन्ते, देखिये हनुमन्ते
रघुनाथराव, देखिये राघोबा
रघुनाथ हरि ४९१
रंगनाथ मन्दिर २५५
रंगून ब १२, ५२१-२, ५६३, ५७७, ६३४
रंगो बापूजी ५६५, ५७२
रजस नगर रा ३०५
रजसबाई ४०३, ४२४
रजससंग अमुर्वभूमि रा ३१३
रज़िया रा २५०-१
रणजीत देव रा ४५२
रणजीतसिंह रा ५००, ५०६-७, ५०९-११, ५१५-६, ५२२-५, ५३६-४४, ५५१-४, ५६१, ५६८
रणजोरसिंह ५५६-७
रणथम्भोर ब २४४, २४९-५०, २५२, २५७, २६३, २६५, २७०, २९०, २९२, ३१७, ३२६, ३२९, ३४४, ३४८
रणबहादुर रा ४७६
रत्नपुर ब २०६, २५७, २७०, २९२, ३२५, ३६५
रत्नसिंह रा २६५
" राठौर ३२४
" रा ३२८-९
रत्नागिरि दे ३६१, ३७५, ३८३, ६१४

रयिदास ३५६-७
रविवर्मा कुलशेखर, देखिये कुलशेखर रविवर्मा
" ६२५
रवीन्द्रनाथ ठाकुर ६२५
रस्कम, देखिये यारकन्द
रहीम, देखिये अब्दुर्रहीम ख़ानख़ाना
राइन न १५४
राउलट ६३८
" कमिटी ६३८
राक्षस (अमात्य) ८७
" भुवन ब ४५२
राघोबा ४२५, ४३३-४, ४३६-४०, ४४३, ४५१, ४५८, ४६०, ४६७-७०, ४७३-४, ४८०
राजकोट दे ६६२
राजगृह ब ४१, ५१, ५७, ६६, ६८-६, ७३, १५४, १७४
राजतरांगिणी २३६
राजदेवी रा ३०५
राजपुताना दे २-३, १३-५, ७४, १०६, १३३, २०२, २०४, २०७, २१२, २१८, २२०, २७१, २८२, २६०, ३१६, ३२४, ३२६, ३२८-६, ३३४, ३४४, ३८७, ४००, ४१३, ४२३, ४३३-४, ४४५, ४७७, ५०८, ५१६, ५१८, ५५०, ५७०, ५८३, ५६६, ६६१
राजपुरी ब ३०५
राजपूत ज १६६, २०७, २४१, २४८-६, ३००-१, ३२४, ३२६, ३८५, ३८७, ४०७, ४१७, ४२३, ४३२, ४३४-५, ४४५, ४४६, ४७७, ५०२, ५२३
" राज्य ३००, ३३६, ५१०, ५१६, ५१८
राजमहल दे १०, २४५, ३६५, ३६८, ४२२, ४५७
राजमहेन्द्री ब २६६, २६२-३, ३६८, ४३५
राजराज चोल रा २१६-७
" (३य) रा २५४-५
राजराजेश्वर मन्दिर २३०
राजशाही दे ४६६
राजशेखर कवि २३६
राजसमुद्र ब ३८६-७
राजसिंह रा ३८७-८
राजस्थान, देखिये राजपूताना
राजस्थानी बो १६, ४६०
राजाधिराज चोल रा २१६
राजापुर ब ३८३
राजाराम रा ३८८-६२, ४२०
" जाट ३६४-५

राजुक ६१
राजू कालापहाड़ ३४८
राजू साहेब ४३१-२, ४४१
राजेन्द्र चोल रा २१६-६
" " (३य) रा २५४-५
" परकेसरी रा २१६
" प्रसाद, राष्ट्रपति ६५८, ६६०-१
" लक्ष्मी रा ४७६
राज्यपाल २०६, २१२
राज्यवर्धन (१म) रा १७८
" (२य) रा १७८, १८१-२, १८६
राज्यश्री रा १७८, १८१-३
राठोड ज २००
राठोड़ ज २०७, ३२६, ३६५
राढ दे ५२, ८६, २०३, २०५-६
राधाकान्त शर्मा ५६१
रानी गुम्फा १०६
" भवानी ४६६
रानोजी शिन्दे ४०६, ४१३, ४१७, ४१६, ४२७, ४६०
राप्ती (अचिरावती) न ५१
रामकृष्ण परमहंस ६१०-१, ६२०
रामगढ़ ब ४२२
रामगुप्त रा १५०-२
रामचन्द्र रा ३०, ३३-४, ३६-७, ३०८-६
रामचन्द्र ६३५
" गणेश ४६०
" नीलकंठ बावडेकर ३६०, ३६५, ४०४
" पन्त ४८८
रामचरित मानस ३५७
रामचेहरा ३६४
रामदास, गुरु ३५७
रामदेव रा २६४, २६६, २६८
रामनगर ब ३३
" घाट ५६२
रामपुरा ब ४१३, ५०५-६
रामभद्र रा २०२
राममोहन राय ५३४-५, ६०६
रामराजा रा ४२४
रामराय ३७४
रामरी द्वीप १२
रामशास्त्री प्रभुणे ४५१
रामसिंह कछवाहा रा ३७६-७, ३८५, ३६४
" रा ४२४, ४३४
रामसिंह, गुरु ५६८
रामानन्द ३०८-६, ३५६-७
रामानुज २२४-५
रामायण ४२, ७६, ७६, २३२, २३८, ३५६
" कम्ब ३१४

रामेश्वरम् या रामेश्वर पट्टण ब २०२, २५६, २६७, २७०
राय, प्रफुल्लचन्द्र, देखिये प्रफुल्लचन्द्र राय
" मानवेन्द्रनाथ, देखिये मानवेन्द्रनाथ
" राम मोहन, देखिये राममोहन राय
" गढ़ ब ३२८, ३८१-३, ३८७-९०
रायचूर ब २९२, ३१७-८, ३२५, ३६८
रायपुर ब ३६८
रायबरेली दे १८९
रायमल २९१, ३१६
रायसाल खोकर रा २४६
रायसेन ब ३२९, ३३५
रावण, देखिये दशग्रीव रावण
रावलपिंडी ब ५६२, ६३४
राव साहब ५८१-३
रावी न ३८, ८४, २५३, २८१, ४१९, ५३७, ५४०-१
राष्ट्रकूट ज १९९-२०१, २०३, २०७, ३०१
राष्ट्रसंघ ६४१
राष्ट्रीय विद्यापीठ ६४२
रासबिहारी वसु, देखिये वसु, रासबिहारी
राहुल ६९
रिकाब गंज ब ४१५
रिपन, लार्ड ६०८, ६१२-३, ६१६, ६२८
रिस्पना न ५१५
रीडिंग, लार्ड ६४२, ६४७
रीवाँ दे ३३६
रुड़की ब ६५७
रुद्र देवता ४८
रुद्रदामा १२२-४
" स्वामी, (२य) रा १४९
रुद्रदेव (रुद्रसेन) १४८-९
रुद्रसेन (३य) रा १४९
" (२य) रा १५३
रुद्रम्मा रा २५५-६
रुहेलखंड दे २५२, २८४, ४२५-७, ४४५, ४६१, ४६८-९, ५८०, ४८२, ४९७, ५००-१, ५२७, ५६९, ५७९, ५८१, ६०९
रुहेला ज ४२५-८, ४३७-८, ४४०, ४४४, ४४७-९, ४५७-८, ४६९, ४८५
रूप २९६
रूपमती ३४४
रूस दे २५९, २८१, ५०८, ५४१, ५६५, ६००, ६०५, ६१५, ६२१-२, ६२५-६, ६३०, ६३२, ६४०, ६४५-६

रूस जापान युद्ध ६२४
रूसी ज ३१५, ५३६, ५४०, ५४२, ६०१, ६०६, ६१३-४, ६३०
" क्रान्ति ६४६
" तुर्किस्तान ६०७
रेग्युलेटिंग एक्ट ४६१, ४६३, ४६५-६
रेज़िडेन्सी ५६६
रेनल ४६० अ
रेमो ४८०, ४६६
रेलें या रेल कम्पनी ६०१, ६०८, ६१६-७
रेवा, देखिये नर्मदा
रेवाड़ी ब ३६४-५, ४१४, ५१७
रैयतवारी बन्दोबस्त, देखिये बन्दोबस्त, रैयतवारी
रोपड़ ब ५३७
रोम दे ६६, ११७, १२८-६, १५४-५, १६३, १६७, १७५, १६२, १६६, २५७, २६७-८, ३१५
रोमन ज १२६, १७६
रोमसागर, देखिये भूमध्य सागर
रामपुरवा ब १००
रोरुक (रोरी) ब ५५, ६६, ३६५
रोशनबेग ५१६
रोहतक दे २८७, २६२, २६५
रोहतास ब ३३२-५, ३३६, ३५२, ३६५, ४५३, ५४०
रोहिणी न ६५
रौबर्ट बर्ड ५३२
रौबर्ट्स ६०७-८
लम्रो दे १२, १२७
लक्कादिव दे २१७
लक्षसिंह (लाखा) रा २८३
लक्ष्मण ३३-४
" सेन रा २२१, २४५
लक्ष्मीबाई रा ५६४, ५८०-३
लखनऊ ब ४५७, ५६६, ५६६-७०, ५७७-८१, ५८३, ६३७
" कांग्रेस (१६१६ ई०) ६३७
लखनौती दे ब २४५, २४७, २४६-५०, २५२-४, २५८, २६८, २७०-१, २७५, २६२, ३०४, ३२५
लखनौर ब २४६-५०, २७०
लंका (ताम्रपर्णी) दे ३४, ३६, ६३ (देखिये सिंहल)
लंकाशायर ब ६०२, ६१६, ६५३
लदाख दे ५४०-१, ५४३
लन्दन ब ३६७, ५४१, ५६४-५, ५६३-४, ६२४, ६३६, ६५४, ६५६-७, ६५६
लमग़ान (लम्पाक) दे २०६, २६६
ललितपुर ब ५८३
ललितादित्य (मुक्तापीड) रा १६६, १६६, २०२, २३२, २४०

लस्खिय २०४
लवपुरी न १२, १२७
लहनासिंह ४५३
लाखा, देखिये लखसिंह
लाजपतराय ६२४, ६२६, ६४१
लाट दे १८१, २०१, २०६
लाड (राढ़) ६३
लातीनी बो ५६१
लारकानो दे २८
लारेन्स, कर्नल ६३२, ६४६
" जौन ५६३, ५७१, ५७४, ५६५, ५६७, ६००, ६१२
" हेनरी ५६६, ५७३, ५७७
लाल कवि ४८३
" किला ५६७
" ढांग दे ३१
" सागर १६७, २६७, ३६८-६, ५००
" सिंह ५५२-६, ५५६
लाली ४४१, ४४३
लासवेला दे ८, ८७, ३६५, ६०१, ६०५
लासवाड़ी न ५०४
लाहौर न २१६, २४३, २४६ २४८, २५०, २७०-१, २७३, २८१, २६२, ३२२, ३२५, ३३४, ३३६, ३४२, ३५१, ३५४, ३६२, ३६५, ३८६, ४०३, ४१७, ४२५, ४२८, ४३५, ४४०, ४४३-४, ४४७, ४५२-३, ४६१, ४६६-५००, ५२०, ५२३, ५३७, ५५२-३, ५५६-७, ५५६, ५६१-२, ५६८, ६३४, ६४७-८, ६५३
लिंगायत सम्प्रदाय २२५
लिच्छवि रा ५३, ७१, १४६, १४६, १८७-८, ४६०
लिटन ६०५-६, ६१६-७, ६१६
लिनलिथगो ६५६
लीबिया दे ६२६
लुआङ्काबाङ न १२, १२७
लुई चौदहवाँ ४०६
लुधियाना दे न ४५२, ५१०, ५१२, ५२४-५, ५३८-६, ५४२, ५५६, ५७१, ५६८
लुम्बिनी (रुम्मनदेई) ६५, १००
लुशेई गि १, ६०१, ६१४-५
" त्रिन दे ६१४
" ज ६०१, ६१५
लूकन ५०३
लूथर ३६१
लूनी न ३, ३८६
लेक, कर्नल ५०२-३, ५०५-७, ५२३
लेडीस्मिथ न ६२२

लेनिन ६३२
लेस्ली, कर्नल ४७०
लैन्सडौन ६१४-६, ६१८
लैम्बटन ५९२
लोदी ज ३११
लोदी महमूद, देखिये महमूद लोदी
लोपामुद्रा ४६
लोमश १०१
लोहगढ़ ४०१, ४०३
लोहर ब २०५, २१२
लोहानी अफ़ग़ान ज ३२१, ३२६
लौड़िया नन्दनगढ़ ब ६६
लौहित्य न १५६, १७५, १८१
ल्हासा ब १२, १८६-६०, २०६, ४७६, ५४५, ६२३
वंक्षु न ८, ६०, ८२, ८६, ६८, ११८
वंग दे ५२, ८६, २०६
वंग (द्वीप) १२७
वंग-भंग ६२३, ६२६, ६२८-६
वज्रच्छेदिका १६४
वज्रयान २२३, २२५, ३०६
वज्रादित्य, चन्द्रापीड, देखिये चन्द्रापीड वज्रादित्य
वज्रायुद्ध रा १६६
वज़ीर ख़ाँ ३६७, ४०१
वज़ीरिस्तान दे ६१५, ६४०
वज़ीरी ज ६१५
वडगाँव ब ३२५, ४७०
वडनगर ब २२८
वत्स दे ५०, ५२-३, ५६
वत्सराज रा २०१
वर्त्तु २४८
वन्दिवाश ब ४४०
वन्देमातरम् ६११
वरहरान (५म) रा १४५
वराहमिहिर १७५, २३२
वर्क़ान (Hyrcania) दे ६०
" सागर ६०
वर्धमान महावीर ७४
वर्धनकोट ब २५२
वर्षा न ३, ५, १०६, २०५, २५७
वलभी ब १६६, १७६, १८३, १६५, २०६
वली ४८२
वसाति ८२
वसु रा ३८, ४८, १३२
वसु, जगदीश ६२०
" नन्दलाल ६२५
" रास बिहारी ६२६, ६३४-५
वसु बन्धु १६६, १७४
वसुमित्र रा १०७
वहाबी ज ५६५, ५६७, ६००
वाई ब ३६८

वाकाटक ज १४१, १४३-६, १५१, १५३, १५८, १६०-१, १६३, १६६-७०, १७२, १७६, १८१
वाग्भट २५०
वाजिद अलीशाह रा ५६४-५, ५७०, ५७३
वाटर्लू ब ५११
वाट्सन ४३६-७
वाता ी ब ३८१, १८५, २०६
वाममार्ग २२५
वारसाइ ६४०
वाराणसी ब ५१-२, ५५, ८६
वाराणसी कटक, देखिये कटक
वारिसशाह ६८३
वारीन्द्रकुमार घोष ६२४, ४२७
वाल न ६२२
वालेस ५०५
वासवदत्ता ५७
वासिष्ठीपुत्र पुलुमावी रा ११७
वासुदेव, कृष्ण, देखिये कृष्ण
" देखिये विष्णु
" रा १२२
वास्को द गामा ३६८
विक्टोरिया रा ५८३, ५६५, ६०४, ६२२
विक्रमपुर ब २०३, २०६
विक्रम सम्वत् ११४-५
विक्रमाजीत रा ३२६
विक्रमशिला २०२, २०६, २२३, २३५, २६१
विक्रमांक चालुक्य रा २२०, २२२, २२५, २३६
विक्रमादित्य ज ११३-५, १२१
" चन्द्रगुप्त, देखिये चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य
" (१म) चालुक्य रा १८४, १८६-७
विग्रहराज, देखिये बीसलदेव
विगो ५३१
विजगापटम ब ३१७, ३६८, ४४१
विजय वंश ज १६७
" कीर्त्ति रा १२१, रा १६४
" चन्द्र रा २२१
" नगर दे ब २७४, २७६, २८८-६, २६१-४, ३१६, ३२५, ३३७, ३४४, ३४७, ३६४-५, ३६७-८
" दुर्ग ३२५, ३८३, ४०६, ४१६, ४३६-७, ४६१
" फुंगी ६४८
" राय रा २१०
" सम्भव रा ११६, १२१
" सिंह रा ४२४, ४३४-५, ४४६
" सेन रा २२०-१
" स्कन्द वर्मा रा १४६
" संग्राम रा १८८

विज्ञानेश्वर २३७
विदर्भ दे ३८, ४१-२, ५०-१, ६१, १०६, २०४
विदिशा ब ५५, १०७, १०६, १४१
विदेह ३३, ४१, ५३
विद्याधर २१२
" पति ३१४
विद्यारण्य २७५
विनयादित्य रा १८७
विन्ध्यक ज १४४
विन्ध्यमेखला गि ३, ७, ११, ३६, ४१, १४४, १८२, २०२, २०४, २२०, २८८, ४८६
विन्ध्यशक्ति रा १४४
विन्ध्याचल, देखिये विन्ध्यमेखला
विपिनचन्द्र पाल ६२४
विम कफ्स रा १२०-१, १४५
विमल वसही २२६
" शाह रा २२६
विराट् रा ४०
विरूढक रा ५७
विरूपाक्ष रा २६३
" बल्लाल २७५
बिलासपुर व ३६८, ३६७, ५१४
विलिंग्डन, लार्ड ६५५-६, ६५६
विलियम (चतुर्थ) रा ५३८
विल्किन्स, चार्ल्स ५६१-२
विल्सन ५७६-७
विवेकानन्द ६२४
विशनसिंह ३६४
विशालगढ व ३८३, ३६२
विशालपुर ३७४
विश्तास्प रा ५६
विश्वनाथ मन्दिर ४८४
विश्वामित्र ४३-४
विश्वरूपसेन रा २४५
" सिंह कोच रा ३५६
विश्वासराव ४४२, ४४८
विष्णु ४८, १०६, १३२, १४८, १५०, १७०, १७३, ३०१
" गुप्त चाणक्य, देखिये कौटल्य
" " चन्द्रादित्य रा १७८
" गोप रा १४७
" पद गि १५०, १५२
" वर्धन, कुब्ज रा १८५
" शर्मा १७५
विसाजी कृष्ण पंडित ५६०
विसोबा खेचर ३०८-६
वीर कूर्च १४४, १४६
" देव २३५
" धवल २५७
" नरसिंह रा २६४, ३१६
" (२य) रा २५४-५
" पांड्य रा २५५, २६६-७

वीरबल रा ३५४
" बल्लाल २६६, २६८
" (३य) रा २७४-५
" वर्मा चन्देल रा २५८
" विजय रा २८६
" शैव मत २२५
वीरमगाम ६३८
वीरसिंह देव बुन्देला रा ३५६, ३५८-६, ३६२-३
" सेन रा १४३
वृजि दे ५१-३
" संघ ५७-८
वृन्दावन ३५६
वेंकटाद्रि ३४६, ३५६
वेंगिपुर ब १५१, १६७, १८५, २०६, २१७, २१६, ३६८
वेंगूला ब ३८३
वेंतुरा ५२३. ५६२
वेणगंगा न ३, १०६
वेजवती, देखिये बेतवा
वेद ४३-४, ३५६
" व्यास, कृष्ण द्वैपायन ४४
वेदान्त १३४
वेनिस ब २६७
वेरूल (एलोरा) २००, २०६, २३०, ३६८, ४८४, ५६२
वेलमुंडि १२४
वोल्गा न १५४, २८१
वोल्ता ४६५
वेल्ज़ली, आर्थर ४६६, ५०१-४, ५०८, ५११
" लार्ड ४६८-५०५, ५०७-८, ५२६-७, ५३५, ५४१
" हेनरी ५०१
वेल्लूर दे ब ३६५, ३६८, ३८३-४, ५२७
वैगै न १३
वैजयन्ती ब १४१, १५१
वैदिक धर्म २२४
वैतरणी न ३
वैरोचन ११६
वैलिंगटन, ड्यूक आव, देखिये वेल्ज़ली आर्थर
वैशाली ब दे ५२-३, ५८, ६६, ७१-४, ८६, १४६, १६२-३
वैशेषिक १३४
वैष्णव धर्म २२५, ३११
व्यंकोजी ३८१
व्यक्तिगत सत्याग्रह ६५७-८
व्याघ्रपल्ली ब २५७
व्यावसायिक क्रान्ति ४६२, ४६५
व्यास (योगभाष्यकार) १७४
" न १४, ८४, १०६, १२०, २५३, २७०, ५०७, ५५६

शाक ज ५६, ६८, १०५, १११-६, १२१-४, १३५, १४१-२, १५४, २०८-६, ३०३, सम्वत् १२१
" द्वीप दे ११२
शाकद्वीपी १३३.
शाकरखेड़ा ब ४०६-१०, ४२०
शाकस्थान दे ब ५६, १०५, ११२, ११५-६, १६३
" हिन्दी दे ११२
शकुनि ४०
शकुन्तला ३२, १७५, ५६३
शंकर रा २६६-७
" मलहार ३६०, ४०४-५
" वर्मा रा २०४, २२५
शंकराचार्य १७४, २२४-५, २३२
शंघाई ब ५४८, ६३५
शत्रुघ्न ३२
शबर जा १६, १८२
शबरी न ५०, ५२
शम्सुद्दीन इलियास, देखिये इलियास-शाह बंगाली
" फ़ीरोज २६८, २७१
शर्की ज २८४, २६४
शर्ववर्मा रा १७८-८१,
शशांक रा १८२-३
शशिगुप्त ८१, ८४
शहर-ए-बहलोल ब १३७
शहादरा ब ४१७
शहाबुद्दीन ग़ोरी या शहाबुद्दीन बिन साम, देखिये ग़ोरी, शहाबुद्दीन
शहाबुद्दीन मीर, देखिये फ़ीरोज़ जंग
शाइस्ता ख़ाँ रा ३६३. ३७४-५
शाकल, देखिये स्यालकोट
शाक्त सम्प्रदाय २२५. ३०६
शातकर्णि (१म) रा १०५-६, १३५
" रा १३०
" गौतमीपुत्र रा ११४-५
" यज्ञश्री रा १२४
शान या साम ज २६०, रियासतें ६१५
शान्तरक्षित २२३, २३२, २३५-६
शाम दे १६२
शामली ब ४५३
शमशेर बहादुर रा ५०४
शारदा लिपि ३५७
शालाकोट, देखिये कोइटा
शालतुर ब ७८
शालिवाहन रा १०४, १२१
" ज १२१
शाहआलम उर्फ़ मुअज्ज़म (बहादुरशाह) ३८७-६, ३६१, ३६६, ४००, ४३४
" (२य) (अलीगौहर) रा ४४४, ४४७, ४५०, ४५७-८, ४६१, ४७७, ५०३

शाहजहाँ रा ३१६, ३६०, ३६२-४, ३६६-७, ३६६-१२, ४६३, ४८८
" (२य) ४४४
" जहाँनाबाद ब ३७०
" जहाँपुर ब ४२५, ५८१
" जी भोंसले ३६४, ३६७, ३८१
" नवाज़ ३७१
" नामा २१३
" पुर ३३
" मीर २७५
" मुहम्मद सन्त ३७६
" शुजा रा ५०६ ५११, ५२४-५, ५३८-६, ५४१-२, ५४४, ५४७
शाहाबाद दे ५७८
शाहू छत्रपति रा ३८६-६०, ४००, ४०२-३, ४०८-१२, ४१४, ४१६, ४१६-२०, ४२२-४, ४२६
शिकाकोल ब ३६४, ३६८, ४३५
शिकागो ब ६२०
शिकारपुर दे ५२५, ५३७, ५३६
शिकोहाबाद ब ४१४
शिन्दे ज ४६७-५०८, ५१६-८, ५२०, ५२३, ५३२, ५७०
" जनकोजी राव ४४५
" जयपा, देखिये जयप्पा शिन्दे
" जयाजीराव ५५०, ५७०, ५८२
" दत्ताजी, देखिये दत्ताजी शिन्दे
शिन्दे दौलतराव ४८०-१, ५०६, ५५०
" महादजी, देखिये महादजी शिन्दे
" रानोजी, देखिये रानोजी शिन्दे
" शाही पेंढारी ५१७
शिमला ब ५४१, ५५१, ५६०, ५६८
शिरा दे ब ३६८, ३८३, ४५१, ४५६, ४७६
शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमिटी ६२४, ६४४
शिव १२०, १३२, १४३, १४५, १५७, १७०, ३०७
" छत्रपति, देखिये शिवाजी
शिवनेरी ब ३८३
शिवर्स ३६६
शिवसिंह रा २८३-४
" स्कन्द वर्मा रा १४६
शिवाजी रा ३६७, ३६६-७०, ३७२, ३७५-८५, ३८८, ३६०, ३६४, ३६६, ४०५, ४१०, ४६०, ४६३, ४८३, ४८८, ५१८, ५२१
" (२य) रा ३८६
शिवालक गि २८१, ३४१, ३६६
शिवि दे ज ५५, ८२
शिशुनाक ब ५१, ८०
शिशुपाल ३८-४०
शिशिर गि १२८

शिहाब, देखिये इमादुलमुल्क
शीराज़ ब ३५६
शीलादित्य रा १८३-४
शुक्रध्वज, देखिये चीलराय
शुङ्ग ज १०४, १०७, १०६, ११३, ११६, १३१, १३३-४, १३८, १४१
" पुष्यमित्र रा १०७, १३
शुजा ३६६, ३७२-३, ३७५
" अत खाँ ३४४
" उद्दौला ४३७, ४४३-५, ४४७-६, ४५१, ४५७-८, ४६१, ४६८-६
" उलहक़ ६२८
शुतुरगर्दन घाटा ६०७
शुतुद्रि या शतद्रु, देखिये सतलज
शुद्धोदन ६५, ६६, ७१
शुभकर्ण बुन्देला रा ३८५
शूरसेन दे ३७, ३६, ४१, ५२-३, १०३, १३२, ४८२
शूर्पारकपट्टन ब ६३, ७५,
शूलपाणि ३०८
शेख़ मुबारक ३५१
शेखा खोकर २८१
शेख़ूपुरा ब ५६१
शेर अफ़ग़ान ३५८
" अली अमीर ६००, ६०५-७
" खाँ सूर, देखिये शेरशाह
शेरगढ़ ब ३४०
" शाह रा ३२१, ३२६-४३, ३५०-१, ३५६, ३८७
" सिंह ५२५, ५४३-५, ५६२
शैबानी देखिये मुहम्मद शैबानी
शैलेन्द्र ज १६६, २१७, २३१
शैवधर्म १३३, २२५, ३०५
शोभासिंह ४५३
शौकतअली ६३१
श्पलिरिष रा ११५
श्यामजी कृष्णवर्मा ६२४, ६२८
श्यामदेव ३६३
श्रावस्ती ब ५१-२, ५५, ६५, ६६, ८६, ६१
" भुक्ति दे १५१, १६१
श्रीक्षेत्र दे १२७, १५१, २३७
श्रीनगर (ग) ब ८६, १०२, १२२, २०६, २६२, ३२५, ३६५, ३७३
श्रीपर्वत गि १४१, १५१, २२३
श्रीभद्र, आचार्य २११
श्रीरंगपट्टम ब ३६०, ४१०, ४३१, ४३६, ४४२, ४७६, ४८१, ४६६
श्रीरंगम् ब २५५, २६७, २७०
श्रीविजय बे १२७, १६६, १६२, २१७, २१६, २३१-२, २३४, २३६-७, ३०५
श्रीहट्ट, देखिये सिलहट

श्रीहर्ष, कवि २३६
शृंगेरी मठ २२४
श्लीगल ५६२
सआदत ख़ाँ ४१४, ४१८, ४२०, ४२५
सकावर दे ब ११. २७०, ३३५, ५२५
संगमनेर ब ३६८, ३८३
संगमेश्वर ब ३८३, ३८६
सगर दे २७२
सगाँली ब ५१५
संग्रामराज रा २११
" विजयात्तुंग वर्मा रा २१७
" शाह रा ३१७, ३३७
" सिंह, देखिये सांगा
संघ प्रजातंत्र ६४७
संघम् १३५
संघ मित्रा ६७
" व्यवस्था सभा ६५४
सतनामी ज ३८५, ३६५
सतलज न १, १४, २७, ४१, १०६, १४३, २५२-३, २६३, २७७, ३६६, ४०१, ४५२, ५०२, ५१०-२, ५१५-६, ५२२, ५३५, ५३७, ५४१-२, ५४५, ५५०, ५५२-४, ५५६-६, ५६८, ५७१
सती चौरा ब ५७३
" प्रथा ५३५
सत्याग्रह ६२६, ६३७-८, ६४३-४, ६५४, ६५७-८, ६६२
सत्याश्रय रा २१७
संथाल जा १६, २३८
सदानीरा, देखिये गंडक
सदाशिव रा ३४४ ३४६
" राव भाऊ, देखिये भाऊ
सनातन २६६
सन्ताजी घोरपडे ३६०-२, ३६५-६, ३६८
सप्त कौशिकी (सप्त गण्डकी) दे ४७६
सफ़ावी ज ३२०, ४०८, ४१६
सफ़दरगंज ४२५, ४२७-८, ४३३-४, ४३७, ४४६
सबलगढ ब ५०६
समतट दे १४८, १५१, २०३. २०६
समरकन्द दे ब ८१, १६७, २८१, २८७, २६२, ३११-२०, ३२४-५, ६००
समरसिंह रा २५३, २६४-५
समरा राजपूत ज २६६
समर्थ रामदास ३७२
समुद्रगुप्त ग १४६-५१, १६६, १७६, ५६२
सम्प्रति रा १०२, १०४
सम्भल दे २४४, २७०, २८४, २६२, ३३३, ३८६, ४२५, ४२८, ५६४

सम्भाजी रा ३७८, ३८४, ३८७-९, ३९५, ४०२, ४६४
" रा ४०३, ४११-२
सम्मा ज २७८-९, ३२१
सम्ये २०६, २३६
संयोगिता २४४
सरगुजा ब ५१६
सरदेशमुखी ३७९
सरबुलन्दखाँ ४०९-११
सरमौर ब ३६५, ४०१
सरयू न १२, १२८
सरस्वती न १४, ३२, ३४, ३८, ८७
सरहिन्द दे २४३, २७०, २९२, २९४, ३२५, ३९७, ४२५-६, ४४०, ४४४, ४४७, ४५२-३, ५०१, ५१०, ५५६
सरोजिनी नायडू ६५२
सर्फोर्जी ४१०
सलहदी ३२६, ३२८, ३३५
सलाबतजंग ४३०-२, ४३५-६, ४३९, ४४१-२
सलीम, शाहज़ादा ३४८, ३५५-७
" शाह, देखिये इस्लामशाह सूर
सवाई जयसिंह रा ४००, ४०४, ४०७, ४११, ४१३, ४२२-३, ४८५
" माधवराव ४६८, ४७२, ४७८, ४८०
संसारचन्द्र रा ५१०
संस्कृत बो १५, ७३, ११५ १३३-४, १६६, १६९, १८८, १९८, २०९, २३७, २८३, ३०५, ४८७ ५६१, ५९२
" कालेज, बनारस ५३३
सहकार समिति ६२३
सहगौरा ब ९१
सहजाति ज ५२
सहसराम ब ३२५, ३३२, ३४०
सहारनपुर दे १४३, ४०१, ४५३
सहेठ महेठ ब ५१
सह्याद्रि गि ४, ५ १४, ४१, ३६७
साइप्रस दे ६०६
साइमन, सर जौन ६४७
साकेत ब ५१, १०६, १२१, १४६
साक्य ब २६१, २७०
सागर दे १४८, २७१, २८५, २९२, ४१२, ४७०, ५१९, ५३३ ५८०
साङ्कल ब ८२, ८४
साँगा रा ३११, ३१६-९, ३२१, ३२३-४, ३२६, ३२८, ३३४-६
सांख्यतत्त्व कौमुदी १७४
साँची ब ८८, १०७, ११६-७, १३५, १३९, ५९२
सातगाँव दे २६८, २७०-१, २७५, २९२, ३२५, ३४६

सातपुड़ा गि ३
” वाहन रा ज १०४-५, ११०-१, ११४, ११६-७, १२०-६, १३०-५, १४०-१, १५५, १६३, १७०, २२४, २३७, ४८७
” चुड़ १४१, १४४, १४६
सातारा दे ब ३६८, ३८१, ३८३, ४०२, ४१६-२०, ४२४, ५१८, ५६३-५, ६२८
साधौरा ब ४०१, ४०३
सान फ्रांसिस्को ब ६३०
साबरमती न ३ आश्रम ६५१
साबाजी ४४३-४
सामन्तदेव रा २०७
” राज रा २५०
साम संहिता ४४
सामूगढ़ ब ३७२ ४०१, ४०४
सामी (सेमेटिक) ज ५८
साम्प्रदायिक निर्वाचन ६३६
साम्भर दे २०६-७, २२०, २८३, ५३५
” झील ५३५
सायण २७५
सारंगपुर ब २६०, २६२, ३२५-६
सारन दे २६६
सारिपुत्र ६८-६
सालबाई ४७३
सालबीन न ११-२
सालवाहन, देखिये सातवाहन
सालारजंग, वज़ीर ५७२
सालिस्बरी ६०६, ६१६
सालुव नरसिंह २६३-४
साल्हेरगढ़ ब २६६, ३६८, ३८१, ३८३
सावनमल, दीवान ५६१
सावनूर दे ४३६, ४३६, ४५६-६०
सावन्तवाडी ब ३८३
साष्टी दे ३३० ४६८-६
सासानी ज १४३, १४५, १५५-७, १६३, १६२
साहसी रा १६३
सिकन्दर, देखिये अलक्सान्दर
” शाह बंगाली रा २७७, ३११
” बुतशिकन २८१, २८७, ३११
” लोदी रा २६६, ३११, ३१६
सिकन्दरा ब ३६४
” बाद ब ४३४, ४४५
सिक्किम दे ५१३-४, ६००, ६१५
सिक्ख ज ३००, ३५७, ३७३, ३८५, ३६६, ४००-१, ४०४, ४१४, ४१६, ४३२, ४३८, ४४०, ४५२-४, ४५६, ४७७, ४८२, ४८५, ४८८, ४६२, ४६४, ५००, ५०२, ५०७, ५१०, ५२२-४, ५३८-४५, ५५१-६,

५६१-३, ५६८-६, ५७१, ५७७, ६२६, ६३१, ६४१, ६४४
सिंगापुर ब ३०५, ६०१, ६३५, ६६३
सिगिरिया ब २३०
सिंघण रा २५७
सिजिस्तान दे १६३, २०६
सित्तनवासल ब १८५, २३०
सिद्दी ज ३८८, ३६८, ४४२
सिद्धराज जयसिंह रा २२०, २२५, २३७
सिद्धार्थ (शान्त्रिक) ७४
सिनसिनी ब ३६४-६, ४२७
सिन्ध दे ४, ८६, ६०, १२६, ११२-३, ११५, ११६-२०, १२३, १३३, १८४, १६३-६, १६८, २०३, २१२, २२३, २४२, २४८-५०, २५६, २६४, २६६, २६६, २७१, २७६, २७८-६, २८६, २६२, २६७, ३२१, ३२५, ३३४-५, ३३८, ३४२, ३५१, ३५४, ३७३, ३७७, ४१६, ४२८, ४७७, ४८२, ५०२, ५०८-६, ५१८, ५३७-६, ५४१-२, ५४६-५१, ५६०, ५६१, ६५६-६१
सिन्ध (सिन्धु) न १, २, ३, ६, ७, ८, १०-१, १४, २७-८, ३७, ४१, ८२-३, १४१, १५०, १६४, २०४, २१२, २२,३ २४६, २५२, २८१, २६२, ३७७, ४१६, ५३७-६, ५४५, ५५६, ५६१, ५६८, ५६७, ६१४
सिन्धनवाला, अजीतसिंह ५५१
" अतरसिंह ५५२
सिन्धनवाले ज ५५१-२
सिन्धसागर दोआब दे ५६२
सिन्धी बो १५-६, ज ५०६, ५३६
सिन्धु दे ४०, ५५ ५६, ६१, ८७, १८१
" देखिये भारतदेश ११८, १६७
सिपरी ब ४७२
सिबिर बे ५३६
सिबिरिया दे १८, ५३६
सिबिस्तान दे १६४, २०६
सिबी ब ८, ११, २०६, २८७, २६२, ३५५, ३६५, ६०५, ६०७-८
सिमकियाङ दे १११
सिमुक रा १०४, १०६, ११०
सिरकप रा १२०-१
सिराजुद्दौला रा ४३७, ४३६
सिरूर ब ५१८
सिरोंज न ३६५, ३६३, ४१३, ४७२
सिरोही दे ब २८६, २६०, २६२, ३८६
सिलहट ब २६८, २७०, २६२, २६४, ३२५, ३४६

सिवाना ब २६६, २७०
सिसोदिया ज २७६
सिहगढ़ ३८३
" पुर ब १२७, ३०५
" ब १४५, १५१
" ब ६३
" बाहु ६३.
सिहर्सराय (श्री हर्षराज) रा १९३
सिहल दे ५, ३६, ६१, ६३, ८८, ६७, १२४, १३३, १४६, १५१, १६८-६, १८१, १८७, १६२, १६४, २०६, २१७, २३०, २५५, २६२, ३२५, ३५४, ३६६, ४७४, ५६२
सिंहली बो १५-६, २०, ६३
सिंहवल्ली ६३
सिंहवर्मा रा १४७
सिंहविष्णु रा १८१, १८५
सिहोर ब ५०५
सीकरी ब ३२४-५
सीकरी फतहपुर, देखिये फतहपुर सीकरी
सीता (सीतो) न ११, ८६-६०, ११६
सीता रा ३४, ३६
सीतामऊ दे ६६२
सीतावल्डी ब ५१६
सीमाप्रान्त ६५८, ६६०
सीयक (श्री हर्ष) रा २०७
सीर न ५६-६०, ८१, १०५, ११६, २५६, ३१६-०२, ३२५
" ध्वज जनक ३४
सीरिया दे १०५ १६२-३, ६०६, ६३१-२, ६४१
सीसगंज ३८५
सीसोदा ब २७४
सीस्तान दे १०५, ६०१
सुखजीवनराम ४५२
सुखोतई, देखिये सुखोदय
सुखोदय ब १२, १२७, २६०
सुग्ध दे ६०, ८१, १०५, ११२, १५५ १६८
सुग्रीव ३६
सुचेतसिंह ५२५, ५४०-१
सुजाता ६७, ७२
सुतनती ब ३६८
सुत्तपिटक ७३, ७८
सुदत्त अनाथपिंडक ६६-७०
सुन्दर पांड्य २६६
" " जटावर्मा रा २५५
सुन्दरबन दे ६३५
सुबराहान ब ५५७
सुबुक्तगीन रा २०८-६
सुभद्र ७३
सुभागसेन रा १०५

सुमात्रा दे ६. १२८, १६६, १६२, २१७, २६०, ३०५, ३६८

सुमित्रा ३३

सुमेर ब २८

सुय्य, अन्नपति २०३-४

सुरमा न ७, ११

सुराष्ट्र दे ६२. १०६, १२३, १३३, १७६. १६५, २०२, २०६. २१२, २४६, २७६, २७८, ४०५

सुलेमान गि ८

" ३७२ ३

" कर्रानी ३४६, ३४८-६

सुवर्णगिरि ब ६०

" ग्राम देखिये सोनारगाँव

" दुर्ग ४३६

" द्वीप द १०६-८, १६६

" भूमि दे ५५, ७५, ६८-६, १२६, १२८-६

" रेखा न ३

सुवाकीम ब ६०६

सुवास्तु, देखिये स्वात

सुश्रुत १३४

सुस्थितवर्मा रा १८१

सुहानिया ब २३३

सूडान दे ६०८-६. ६२१

सूनम् ब २६३, २७०

सूफ़ां ४७४

सूरजगढ़ ब ३३१

" पोल ३४७

" मल रा ४२७, ४३३-४. ४३७-८, ४४०, ४४५-७, ४४६, ४५२

सूरत दे ब १८१. १६५ ३६१-२, ३६५-६, ३६८, ३८१, ३८३, ३६७-६, ४६८, ४७०-१ ४८६, ५००, ५८४, ६२६, ६५१-२

सूरदास ३५७

" साम्राज्य ३४२-३

सूयमन्दिर २२५

सेण्ट हेलेना दे ५११

सेतुमन्त देखिये हेलमन्द

सेन ज २२१, २४५, २५८, २६८

सेमेटिक ज १६१

सेरा दे ३३४, ३८४

सेलम दे ४५६, ४१६, ५२६,

सेलेडक रा ८१ ज १०५

सेल्जुक तुर्क २१८, २२६

सेहवान ब २७८

सैदपुर-भीतरी ब १५६. १५८

सैयद अहमदख़ाँ ६०६

" भाई ४०१

" मुबारक २६५

सोगर गाँव ब ३६४-५

सोन न ३, १४, ६१, २४५, ३३२

सोनारगाँव ब २४५, २५३, २५८, २६८, २७०-१, २७३, २७५, २७७, २८२, ३२५, ३३६
सोम (वंश) ज १२६
” नाथ २०६, २१२, २१६, २२०, २२७, २२६, ५४८-६
सोमानागो १२६
सोमाली दे ६०८-६, ६२१
सोमेश्वर चौहान रा २२०-१
” श्वर (१म) चालुक्य रा २१६, २२०
” (२य) ” रा २५५
सोरठ देखिये सुराष्ट्र
सोलंकी २२०, २२८, २५७
सौवीर दे ५२. ५५, ८६
स्कन्द (बुद्धदेव) १२३, १३२, १७०
” गुप्त रा १५६
स्कर्दू ब २६२, ५४३
स्टिफ़िन्सन ५६०
स्टिवर्ट ६०७
स्टीवन्सन ५०७, ५०४
स्टोलटाप ६०६
स्तम्भ रा २०१
स्तालिनाबाद ब ३१६, ३२५
स्पेन दे १६६. २६७-८, ३१५, ३३०, ३५४, ३६१, ३६६, ३६७, ४०६, ४६३, ४७३
स्मटस्, जनरल ६२६
स्मिथ, हैरी ५५६
स्मिर्ना ब ६४५
स्मीटन ४६५
स्याम दे १२, २०, १३३. २६०, ३०५, ५२१, ६२६, ६३४
स्यामी भा २०
स्यालकोट दे ब ३८ १०७-६, १५७, १८४, ३२१, ४४७, ५२१
स्रोङ् चनगम्बो रा १६०
स्लाव ज १५५
स्लीमैन ५३५, ५६३
स्वराज्य ३७८ ६. ४०५
स्वाराज दल ६४४
” ध्येय ६४७
स्वात न ७, १०, ३७, ४१, ७८, ८२-३, ११३, ११६, २६२, ३२१, ३५४, ३७७, ६१५
स्वेज़ न ५६६, ६०४, ६०६, ६०८, ६३१
हकीम फ़ायम अली ६३४
” सूर ३४६
हग्वामनि रा ५८
हखामनी ज १०५, १४३
हज़रत महल, बेगम ५७३, ५८०-१, ५८४
हज़ारा दे ७, १००, १५७. २०४, २५६. २६२, ३७७. ५५६. ५६१-२
हज़ारी बाग़ दे ४२२

हड़पा ब २८
हडसन ५७७
हथियार क़ानून ४६५
हद्दा ब १३६
हनुमन्तो ३८१, ३८४
हनुमान व्य ३६
हबीबुर्रहमान, अमीर २१५
हबीबुल्ला, अमीर ६१६, ६४०
हब्श देश, देखिये अबीसीनिया
हमीद ख़ाँ ४०९-१०
हम्मीर रा २४३, २६५, २७४, ३१८
हरगोविन्द, गुरु ३१७, ३६३, ३७४
हरदयाल ६२८, ६३०, ६३३-४
हरद्वार ब ३१, ३८१, २९८, ४४३-४, ६२५
हरपनहल्ली दे ४५१
हरपालदेव रा
हरराय गुरु ३७४
हरसिंह तोमर रा २८५
" देव रा २७१
हरउवती न (हरहूती, हरक्वैते) ब दे ८७, १०५, ११५-६, १२०-१
हरात दे ११, ८७, ११२, १६३, २०६, २४२, २६२, ३१८-६, ३२५, ५२४, ५४०, ५४५, ५६५, ६०५, ६०७-८, ६१३
हराहा ब १८९-९०
हरि के चरन २३७, २२६
हरिजन सेवक संघ ६५७
" दामोदर ४६१
" पन्त फड़के ४७९
" पुर दे ५६२
" बल्लाल फड़के ४५१, ४६८
हरियाना दे ५०५
" राज चौहान रा २४४
हरिश्चन्द्र रा ३० गाहड़वाल रा २४३
हरिषेण रा १५८
हरिसिंह नलवा ५३६-४०
हरिहर २७४-५, (२य) २७६, २८८-६
हरीरूद न ६१३
हर्ष रा २२०, २२५
हर्षगुप्त रा १७८ गुप्त रा १७८
" चरित १८३
" वर्धन रा १७८, १८१-४, १८७-६, १६०-१, १६६, २२३, ३००-१
हलाकू ख़ान रा २५६
हल्दी घाटी ३४६
हसन अब्दाल ब ३६५, ३७८
" ख़ाँ मेवाती ३१३-४
" बहरी २६३-४
" बहमन शाह या हसन गंगू रा २७६, २७६
हस्तिनापुर (असनापुर) स्था ३१, ३३, ३८, ४१-२, ४४, ५०
हस्ती व्य ३२

हाजीपुर ब ३२१, ३२५, ३३०
हाङ्काङ् ब १२, ५४८, ६३०
हार्ता गुम्फा १०७
हाँसी ब २१६-२१
हाफ़िज़ ३०८
हामी (या हेमेटिक) जा २८, बो ५८
हाम्पी ब २७४
हारूँनुलरशीद रा १६७-८
हार्ग्रीव्स ४६३
हार्डिञ्ज ५५३-५, ५५७, ५५६, ५६१, ५६३, ६२८-६, ६३७
हाल रा ११७, १३४
हाली, मौलाना ६११
हालैण्ड दे ३६१, ४०६, ४६३, ४७३-४, ५११
हावड़ा दे २५१
हिंगोल न ८
हिजरी सन् १६१
हिजली ब ३६८
हिन्दचीन दे ६, ११, १६, ६६, १२६, २६०, ६०४, ६१३
" महासागर २६६, ३६८-६
हिन्दी बो १५-६, १६, ६१, ७३, ६०, २५४, ५६७, ६२५-८, ६३७
" अखबार ५६३
" कविता २३७
" द्वीपावली दे १६६
हिन्दी शकस्थान दे ११२
" साहित्य ३४१
" " सम्मेलन ६२८, ६३७
हिन्दूकुश. देखिये हिन्दुकश प १, ७, ८, ११. १४, ५६, ८१-२, ८७, ११२, ११५, ११८-६, ३२०, ३६४
हिन्दू धर्म ३०८
हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र मण्डल ६४७-८,
हिन्दुस्तानी बो ४०७, ४१८, ४८६
हिन्दू मुस्लिम दंगा ६४५, ६५५
" संगठन ६४५
हिमालय गि १, ७. ८, ६, १०, १८, ८६, ६८-६, १५०, १५६, १६८, १६६, २०२-३, २१८, २२०; २४६, २५२, २७४, २७६, ५४०, ५४५
हियङ्नू देखिये हूण
हिसार ब २६२, ३१६, ३२५, ४२८
" दे २६२
हीनयान १३३
हीर राँझा ४८३
हीरासिंह ५२५, ५५१-२
हुगली ब २५१, २५८, २६४, ३६५-६. ३६८, ४३६, न ३६७
हुँगरी दे १५५, २५६
हुँजा दे ६१४
हुबली ब ३६८, ३७५, ३८१, ३८३
हुमायूँ रा ३२२-३, ३४८-३५

हुमायूँ ज़ालिम (बहमनी) रा २६१, २९३
हुविष्क रा १२२-३
हुशङ्ग ग़ोरी २८५-६, २८६
हुसेनअली, सैयद ४०१, ४०३-६
" शाह बंगाली रा २१६, ३०६, ३१४, ३२१, ३५०
" " शर्क़ी २९३-४, २६६
ह्वेनसांग ज ६८ १११, ११२, ११८-६, १५४ ६, १६०, १७६, १८१, १८८-६, २०८-६, २४८, बो १८८
हृदयशाह रा ४१२
हेमचन्द्र, आचार्य २३७
" या हेमूँ रा ३४२-३
हेमाद्रि (हेमाड पन्त) ३०८
हेयर, डेविड ५३३
हेलमन्द न ८, ८१, १६३
हेलिउदोर १०८-६
हेस्टिंग्स, वारन ४६६-७५, ४६८, ६११
" लार्ड ५१२, ५१७-८, ५२१, ५२६, ५३१-२, ५६१
हैदरअली ४४२, ४५१, ४५६-६१, ४६८, ४७१-४, ४७६, ४८१, ४८६
हैदराबाद (सिन्ध) ८२, ५०६, ५४६-५०
" दे ब १४, ५०, १००, ३८२-३, ३८६, ३६१, ४००-१, ४०६-१०, ४२४, ४३२, ४३६-७, ४४१-२, ४८१, ४६८-६, ५०२, ५०४, ५७२, ५६६, ६६२
हैमिल्टन ४०६
हैरिस, जनरल ४६६
हैवलाक ५७३-४, ५७७-६
होआंगहो न २७
होडल ब ४०४
होमरूल लीग ६३७
होयशल ज २२२, २५४-५, २७४-५
होरिउजी (मठ) १६६
होर्मिज़्द रा १४५
" (२य) रा १४५, १६४
होल्कर, मल्हार देखिये मल्हार होल्कर
" खंडेराव ४३४, ४६०
" जसवन्तराव रा ४६६, ५०५-७
" तुकोजी ४६१, ४६८, ४७१, ४८१, ४६६, ५०१
" विठोजी ५०१
" ज ४१६, ४४३, ४५१, ४६८, ५०२, ५०५-८, ५१६-७, ५१६, ५२३, ५५०, ५७०
होशंगाबाद ५८३
होशियारपुर दे १४३
ह्यूम ६१६
ह्यूरोज़ ५७६-८०, ५८२
ह्वीलर ५६६